# पाकदर्पणम्

|| श्रीः ||

काशी संस्कृत ग्रन्थमाला

१

महाराजनलविरचितम्

# पाकदर्पणम्

'माधुरी'-हिन्दीव्याख्याविभूषितम्

(प्राचीनतम आयुर्वेदीय स्वस्थवृत्त एवं पाकशास्त्र का विशिष्ट ग्रन्थ)

वाराणसीस्थ राजकीयसंस्कृतपाठशालीयन्यायशास्त्राध्यापकेन
न्यायाचार्यपण्डितश्रीवामाचरणभट्टाचार्येण संशोधितम्

'माधुरी'-हिन्दी व्याख्याकार
डॉ. इन्द्रदेव त्रिपाठी, आयुर्वेदाचार्य
बी.आई.एम.एस., डी. एस-सी. (आ.)
भूतपूर्व चिकित्साधिकारी, उ. प्र.



**चौखम्भा संस्कृत संस्थान**
**वाराणसी**

प्रकाशक
**© चौखम्भा संस्कृत संस्थान**
भारतीय सांस्कृतिक साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक
पोस्ट बाक्स नं. ११३९
के. ३७/११६, गोपाल मन्दिर लेन (गोलघर समीप मैदागिन)
वाराणसी - २२१००१ (भारत)
फोन : ०५४२-२३३३४४५,३२५७८५९, फैक्स : ०५४२-२३३३४४५
*E-mail : cssvns@sify.com*



संस्करण : तृतीय, वि० सं० २०६३
मूल्य : रु. ७५-००

शाखाएं :
**चौखम्भा संस्कृत भवन**
पोस्ट बाक्स नं० ११६०
चौक, (बैंक ऑफ बड़ौदा बिल्डिंग)
वाराणसी -२२१००१ (भारत)
फोन : ०५४२-२४२०४१४

**चौखम्भा पब्लिकेशन्स**
४२६२/३ अंसारी रोड, दरियागंज
नई दिल्ली - ११०००२
फोन : ०११-२३२६८६३९, २३२५९०५०
फैक्स : ०११-२३२६८६३९
*E-mail : cpub@vsnl.net*

मुद्रक : चारू प्रिन्टर्स, वाराणसी

THE
KASHI SANSKRIT SERIES
1

# PĀKADARPAṆAM

[ Oldest Āyurvedic treatise of home science]
of
MAHĀRĀJA NALA

Edited by
Pt. VĀMĀCARAṆA BHAṬṬĀCĀRYA
Nyāyācārya, Lecturer in Nyāya, Govt. Sanskrit Pāṭhaśālā
Varanasi

*Mādhurī Hindi Commentary*
*by*
Dr. INDRADEVA TRIPĀṬHĪ
B.I.M.S., D.Sc. (A), Formerly Health officer, U.P.

**CHAUKHAMBHA SANSKRIT SANSTHAN**
**VARANASI**

*Publishers :*

**© CHAUKHAMBHA SANSKRIT SANSTHAN**

Post Box No. 1139

K. 37/116, Gopal Mandir Lane, Golghar Near Maidagin

Varanasi-221001 (India)

Phone : 2333445, 3257859

Fax No. : 0542-2333445

*E-mail : cssvns@sify.com*

Edition : Third, 2006

Branches :

**CHAUKHAMBHA SANSKRIT BHAWAN**

Post Box No. 1160

Chowk, (Bank of Baroda Building)

Varanasi-221001

Phone:0542-2420414

**CHAUKHAMBHA PUBLICATIONS**

4262/3, Ansari Road, Darya Ganj

New Delhi-110002

Phone:011-23268639, 23259050

Fax No.:011-23268639

*E-mail : cpub@vsnl.net*

# विज्ञप्तिः

विदिततरमेवेदं तत्र भवतां प्रेक्षावतां यत् किल पुरा भारते वर्षे न केवलमध्यात्मविद्याया एवानुशीलनं निदधानास्ते विश्वविश्रुतकीर्त्तयस्तीर्थङ्करास्ततोऽन्यत्र स्वनयनं न विदधतिस्मेति। अध्यात्मविद्येव ये खलु लौकिकसूक्ष्मविषयास्तैः केवलेन प्रज्ञाबलेनैवानुशीलितास्तेष्वेवान्यतममिदं "नलपाकदर्पण" मिदानीमुपक्रम्यते मुद्रयित्वा प्रकाशयितुम्। निबन्धोऽयं भारतेतिहासप्रसिद्धेन निषधदेशाधिपतिना नलेन प्रणीत इति ग्रन्थस्य नाम्ना, सन्दर्भेण च विज्ञायते। स खलु महाराजो नलः कदा प्रादुरभूदिति निर्णये महाभारतमेव प्राधान्येन वरीवर्त्ति। परन्तु महाभारतमपि स कस्मिन् समये प्रादुरभूदिति न सम्यङ् निर्द्धारयति। एतावदेवास्ति तत्र वनपर्वणि—

"आसीद्राजा नलो नाम वीरसेनसुतो बली।
उपपन्नो गुणैरिष्टैरूपवानश्वकोविदः। इति वन ५३ अ०
परमपरोऽपि कश्चिदस्ति नलनामा नृपतिर्यः खलु सूर्यवंशे समजनि।

यथा सूर्यवंशवर्णने—

'अतिथिस्तु कुशाज्जज्ञे निषधस्तस्य चात्मजः।
नलस्तु नैषधस्तस्मान्नभस्तस्मादजायतेति।
एतदेव द्रढयति मत्स्यपुराणं हरिवंशश्च—

मात्स्ये यथा—
नलौ द्वावेव विख्यातौ वंशे कश्यपसम्भवे।
वीरसेनसुतस्तद्वन्नैषधश्च नराधिपः॥

हरिवंशे च—
नलौ द्वावेव विख्यातौ पुराणे भरतर्षभ।
वीरसेनात्मजश्चैव यश्चेक्ष्वाकुकुलोद्वह इति॥

परमेषोऽस्माकं समालोच्यविषयो नलपाकदर्पणप्रणेता नलस्तु न सूर्यवंशीयनिषधपुत्रः किन्तु निषधदेशाधिपतेः चन्द्रवंशीयवीरसेनस्यात्मजः। कविकुलचूडामणिना श्रीहर्षेणापि प्रतिपादितमेतत् स्वरचितनैषधचरित-

काव्ये—

"सुधांशुवंशस्य करीरमेव मां,
निशम्य किं नासि फलेग्रहि ग्रहा ॥" इति ।

एष एव महाराजो नलः दमयन्तीस्वयम्वरे समागतान् इन्द्रादिलोकपालचतुष्टयान् दौत्येन प्रसाद्याष्टौ वरानध्यगच्छदिति सुविदितमेव ।

यथा—वृते तु नैषधे भैम्या लोकपाला महौजसः ।
प्रहृष्टमनसः सर्वे नलायाष्टौ वरान् ददुः ॥ इति ।

महा० वन० ५८ अ० ।

तेषामेवैकतमं सूदविद्यापारदर्शित्वं नाम वरं परेतभर्त्तुः *सकाशादधिगतवान् महीश्वरो नल इत्यस्य ग्रन्थस्य प्रथमप्रकरणे, महाभारते च दृश्यते । यथा—

"शृणु राजेन्द्र विद्याया निदानं मम तत्त्वतः ।
स्वयम्वरार्थं वैदर्भ्याः समायाताः सुरेश्वराः ॥
ततोऽन्नरससिद्धिश्च सूर्यपुत्रादलौकिकीम् ।"

नलपा० १ प्र० ।

महाभारते च—

"तस्मिन्नन्तर्हिते नागे प्रययौ नैषधो नलः ।
ऋतुपर्णस्य नगरं प्राविशद् दशमेऽहनि ॥
स राजानमुपातिष्ठद्बाहुकोऽहमिति ब्रुवन् ।
अश्वानां वाहने युक्तः पृथिव्यां नास्ति मत्समः ।
अन्नसंस्कारमपि च जानाम्यन्यैर्विशेषतः ॥" वन० ६७ अ० ।

नैषधचरितेऽपि—

"अमुष्य विद्यारसनाग्रनर्त्तकी" त्यादि श्लोके "रसनाग्रनर्त्तकी"त्यनेन सूदविद्यैव लक्षितेति । अत एव पाकदर्पणप्रणेता नलश्चन्द्रवंशीयवीरसेननृपतेस्तनय इति सुस्पष्टमेव वक्तुं शक्यते ।

महाराजनलस्य जन्मसमयनिर्द्धारणन्तु दुःशकमेव । केचित्तु—
'अवश्यम्भाविभावानां प्रतीकारो भवेदिति ।"
"प्रतिकुर्युर्नकिं नूनं नलरामयुधिष्ठिरा" इत्यत्र नलरामयुधिष्ठिरा इति युगक्रमं निर्दिशन्तो नलस्य कृतयुगप्रादुर्भूतत्वं स्थापयन्ति प्रदर्शयन्ति

* यमस्त्वन्नरसं प्रादाद्धर्मे च परमां स्थितिम् । वन० ५७,३७३ लो०



चापरं निदर्शनं श्रीहर्षस्य सूक्तम्—

पदैश्चतुर्भिः सुकृते स्थिरीकृते,
कृतेऽमुना के न तपः प्रपेदिरे । इत्यादि ।

परन्तु वयं विनिगमकाभावादस्मिन् विषये माध्यस्थ्यमेवावलम्बामहे ।

प्राधान्येनास्मिन् निबन्धे एकादशप्रकरणानि वर्त्तन्ते । तेषु च यथायथं नानाविधाः पाकसाधनोपायाः पाकभेदाश्च प्रदर्शिताः । आयुर्वेदीयमतानुसारेण ऋतुभेदेन च पाकभेदान् प्रदर्श्य परमरमणीयत्वमुपादेयत्वञ्च निबन्धस्यास्य सम्पादितं निबन्धकारेण । प्रथमस्तावदोदनभेदः । द्वितीयः सूपभेदस्ततश्च क्रमेण सर्पिर्भेदः । व्यञ्जनभेदः । मांसपाकभेदः । भक्ष्यभेदः । पायसभेदः । रसायनभेदः । पानभेदः । यूषभेदः । घृताद्यन्नभेदः । लेह्यभेदः । क्षीरभेदः । तक्रभेदश्चान्ये चावान्तरभेदाः समीचीनरीत्या प्रदर्शिताः ।

पुस्तकस्यास्य परमोपादेयत्वेऽपि एतस्य मुद्रणाय वाराणसेयचौखम्बासंस्कृतसीरिजसम्पादकेन सुप्रसिद्धबाबुहरिदासतनुजनुषा श्रीमता हरेकृष्णगुप्तेन बहुशोऽनुरुद्धोऽपि च विशुद्धादर्शपुस्तकाभावात् कालमेतावन्तं शिथिलप्रयत्न एवासम् । अनन्तरञ्च वाराणसीस्थराजकीयसंस्कृतपाठशालीयपुस्तकालयाध्यक्षेण पण्डितवर श्रीमद्विन्ध्येश्वरीप्रसादद्विवेदिमहाशयेन पुस्तकदानादिना परमनुगृहितोऽहं कथमप्येतन्मुद्रणमकरवम् । तत्र तेनैव महाशयेन प्रदत्तमेकमेव नवीनमनतिविशुद्धश्च पुस्तकमन्यगतिकत्वादादर्शरूपेण परिकल्पितं मया । सीसकाक्षराणां दोषेण वा मम मतेरपाटवाद्वा सम्भाव्यन्त एवाशुद्धयः । अतः साञ्जलिबद्धमभ्यर्थयेऽहं श्रीमद्भिः कृपया ते ते दोषाः क्षन्तव्या इत्यलं पल्लवितेनेतिशम् ।

वाराणसी ।
भाद्रशुक्ल चतुर्थ्यां १९६८ ।

श्रीवामाचरणशर्मणः ।

# प्रस्तावना

पुरातनवाड्मय मानवोचित सुख-साधन सामग्री को संजोने में कुछ कसर नहीं रक्खा है। या यों कहना चाहिए कि वेद, उपनिषद्, पुराण, धर्मशास्त्र आदि ग्रंथ मानव को सर्वोत्तम सुख शान्ति की ओर प्रेरित करते हैं। जहाँ पर परम श्रेय की प्राप्ति के लिए शास्त्र उपदेश देते हैं वहीं व्यवहार जगत् में मनुष्य के ऐहिक सुख को प्राप्त कराने में कुछ उठा नहीं रखते। पहले मनुष्य को स्वस्थ्य रहना है तभी परम श्रेय की प्राप्ति हो सकती है। "धर्मार्थकाममोक्षाणा-मारोग्यं मूलमुत्तमम्" इस सूक्ति को किसने नहीं दुहराया है और आरोग्य के बिना किस ने परम पद को प्राप्त किया है।

महर्षि चरक ने स्वस्थवृत्त उपदेश के साथ उपस्तम्भत्रय को विधिवत् पालन करने की ओर संकेत किया है। "त्रय उपस्तम्भाः आहारो निद्रा ब्रह्मचर्य-मिति"। स्वस्थ रहने के लिये सभी साधनों में आहार का प्रमुख स्थान है। उसका विविध निर्माण, उपयुक्त समय, उपयोग, प्रकार आदि के प्रकार का ज्ञान स्वस्थ वृत्त के साथ होना आवश्यक है।

प्रस्तुत ग्रन्थ नलविरचित 'पाकदर्पण' में स्वस्थ वृत्त के विवेचन के साथ आहार सम्बन्धी पाक निर्माण प्रकार का भी विस्तृत निरूपण करने में ग्रन्थकार ने बहुत बड़ा प्रयास किया है। स्वस्थ वृत्त में दिनचर्या, रात्रिचर्या, ऋतुचर्या आदि सभी विषयों पर स्पृहणीय प्रकाश डाला गया है। ग्रन्थकार ने दिन-रात में किस प्रकार छः ऋतुओं का परिभ्रमणचक्र चलता रहता है इस बात को बड़ी बारीकी के साथ प्रस्तुत किया है। इनके अनुसार अन्न में ६३ रस होते हैं और असृत, पिच्छल, अशुचि शुष्कान्न, दग्धान्न, विरूपान्न, क्वथितान्न आदि आठ दोष होते हैं। जिनका सलक्षण वर्णन मिलता है। आगे चलकर उन्होंने पाक के विविध निर्माण प्रकार को स्पष्ट वर्णन किया गया है। भात बनाने में कितना जल कितना चावल एवं कितने आँच पर बनाना चाहिए इसको दर्शाया है जिसकी अनुकृति आजकल कदम-कदम पर देखी जा रही है। पाक निर्माण में मांस, मछली, पुलाव आदि का निर्माण प्रकार उपयोग एवं उसके लाभ का भी वर्णन है। विविध दालों का नाम, निर्माण प्रकार एवं उनके गुणों का भी वर्णन है।

आगे चलकर दूध, दही, घी तक्र आदि का गुण सहित वर्णन मिलता है। व्यवहारोपयोगी विविध शाकों का वर्णन है, तथा उनको बनाने के विभिन्न प्रकारों का दिग्दर्शन कराया गया है। विचित्र शाक का विशिष्ट प्रतिपादन तो इनकी विशेष बुद्धि का विशिष्ट परिचय है। भक्ष्य, भोज्य, चोष्य, लेह्य, पेय आदि पञ्चविध भोजन को कैसे बनाया जाता है, उसके कौन-कौन उपकरण हैं तथा उनके क्या गुण है ये सब ग्रन्थकार की अद्भुत देन है। फलों से जितने भी प्रकार बन सकते हैं उनका विस्तार पूर्वक प्रयोगात्मक वर्णन मिलता है।

इस ग्रन्थ को ग्यारह प्रकरणों में बाँटा गया है। सब से बड़ा प्रकरण पहला है। जिसमें पाक का विवेचन विस्तारपूर्वक किया गया है। दाल के भेद, घी के भेद, व्यञ्जन भेद, मांसपाक प्रकार आदि प्रथम प्रकारण के अवान्तर भेद हैं। द्वितीय प्रकरण में ऋतु वर्णन प्रतिदिन ऋतुओं के परिभ्रमण का क्रम एवं उनकी उपयोगिता, तृतीय प्रकरण में विभिन्न भक्ष्य भोज्यादि का वर्णन, चतुर्थ में पायस के विभिन्न प्रकार एवं गुण, पञ्चम प्रकरण में रसाला पानक आदि का वर्णन, ग्रीष्मादि दोष से बचाने के लिये शीतगृह बनाने का स्वरूप, रखने के प्रकार, पूगपट्ट आदि का वर्णन मिलता है। षष्ठ प्रकरण में यूष निर्माण प्रकार एवं राजशाल्यन्न निर्माण प्रकार का विशद विवेचन है। सप्तम प्रकरण में पायस के भेद, अष्टम प्रकरण में लेह्य पदार्थो का निर्माण प्रकार एवं उनकी उपयोगिता, नवम प्रकरण में ग्रीष्मकाल में शीतल रखने की विधि, उसके उपकरण आदि का वर्णन है। सम्भवतः जल एवं खाद्य पादार्थों को ग्रीष्म दोष से बचाने लिये ही विविध उपकरों से शीतगृह का निर्माण किया जाता था। उनकी प्रक्रिया एवं उपकरण प्राचीन थे। आधुनिक शीत-ताप नियन्त्रण गृह एवं फ्रिज आदि शीतल उपकरण प्राचीन काल का ही अनुकरण है। दशम प्रकरण में सभी प्रकार के पायस, दुग्धपाक, दही, मट्ठा, खीर आदि बानने की विचित्र विधियों तथा उनके गुणों का वर्णन हैं। एकादश प्रकरण में छोटे-छोटे मिट्टी के पुरवों में दूध के अनेक प्रकार बनाने की परम्परा का निरूपण है। आजकल भी उसीका अनुकरणीय रूप कुल्फी, बर्फ मलाई, मीठा दही आदि उपलब्ध होते है।

**ग्रन्थकार का परिचय**—यह ग्रन्थ राजा नल का बनाया हुआ है ऐसा ग्रन्थ के उपक्रम एवं उपसंहार को देखने से अवगत होता है। राजा नल निषधदेश के अधिपति थे ऐसा प्राचीन इतिहास देखने से ज्ञात होता है। नल की उत्पत्ति कब हुई थी इसका निरुपण महाभारत में मिलता है। किन्तु यह स्पष्ट रूप से नहीं ज्ञात होता कि किस शताब्दि में इस भू-भाग को सुशोभित किये थे।



महाभारत वनपर्व के ५३ वें अध्याय में लिखा है कि वीरसेन के पुत्र बलवान् नल[1] अनेक गुणों से पूर्ण तथा सुन्दर उत्पन्न हुए और वे अश्व-वाहनविद्या में प्रवीण थे। एक और भी राजा नल का उल्लेख मिलता है जो सूर्य वंश में उत्पन्न हुए थे जैसा कि सूर्य[2] वंश के वर्णन में आया है। मत्स्य पुराण तथा हरिवंश में दोनल का वर्णन आता है। जिस से दो नल के होने में सन्देह नहीं हैं फिर भी पाकदर्पण के निर्माता कौन नल है इसका निर्णय करना होगा।

यह सर्वविदित है कि राजा नल दमयन्ती के स्वयंवर में आये हुए इन्द्र आदि चार लोक पालों से दूत कर्म के द्वारा प्रसन्न कर आठ[3] वरों को प्राप्त किये जिनमें अश्वविद्या[4] तथा पाक निर्माण सिद्धि भी आता है। अनेक स्थलों पर नल की पाक प्रवीणता का वर्णन मिलता है अतः वह नलसुधासुवंशोत्पन्नवीरसेन के पुत्र नल पाकदर्पण के निर्माता है यह मानना युक्ति युक्त है। नल ने पाकविद्या का वरदान यम से प्राप्त किया था। जैसा कि पाकदर्पण में नल की ही उक्ति है।

महाभारत में भी राजा ऋतुपर्ण[5] के नगर में वाहुक नाम बता कर अश्व वाहन

---

१. आसीद्राजा नलो नाम वीरसेन सुतोबली।
उपपन्नो गुणैरिष्टै रूपवानश्वकोविदः॥

म० भा० व० प० अ० ५३।

२. अधितिस्तु कुशाज्जज्ञे निषधस्तस्य चात्मजः।
नलस्तु नैषधस्तस्य नभस्तमादजायत॥

३. वृते तु नैषधे भैम्या लोकपाला महौजसः।
प्रहृष्टमनसः सर्वे नलायाष्टौ वरान् ददुः॥ इति।

म० भा० व० प० अ० ५८।

४. शृणु रादेन्द्र विद्याया निदानं मम तत्त्वतः।
स्वयम्वरार्थं वैदर्भ्याः समायाताः सुरेश्वराः॥
ततोऽन्नरससिद्धिञ्च {सूर्यपुत्रादलौकिकीम्। पा० द० प्रकरण १।

५. तस्मिन्नन्तर्हिते नागे प्रययौ नैषधौ नलः।
ऋतुपर्णस्य नगरं प्राविशन् दशमेऽहनि॥
स राजानमुपातिष्ठद्बाहुकोऽहमिति ब्रुवन्।
अश्वानां वाहने युक्तः पृथिव्यां नास्ति मत्समः।
अन्नसंस्कारमपि च जानाम्यन्यैर्विशेषतः॥

म० भा० व० प० अ० ६०।

में नियुक्त होने की चर्चा है। पाकदर्पण[१] में नल ने स्वयं अपने को बाहुक नाम से ऋतुपर्ण के नगर में जाना तथा अश्ववाहन विद्या तथा पाक विद्या में अपने को प्रवीण बता कर रहने का उल्लेख किया है।

राजा नल का जन्म कब हुआ, इसका निर्णय करना कठिन हैं क्योंकि इनके सम्बन्ध में कोई उल्लेख नहीं मिलता। कवि कुल चूणामणि हर्ष ने सत्ययुग में उत्पन्न होने की बात दर्शाई हैं "पदैश्चर्भिः सुकृते स्थिरी कृते कृतेऽमुना केन तपः प्रपेदिरे" इत्यादि वाक्यों से ज्ञात होता है। इन की उत्पत्ति सत्ययुग में हुई इसका कोई विशिष्ट प्रमाण उपलब्ध न होने से उनका जन्म काल अन्वेषणीय है।

यह ग्रन्थ प्राचीन काल का आहार-विचार रहन-सहन आदि का ज्वलन्त प्रतीक है। इससे हम प्राचीन परम्पराओं का स्वरूप आधुनिक समय में जन-साधारण के सामने रख सकते हैं कि उस समय हमारा विज्ञान कितना परिपूर्ण था।

क्षेम कुतूहम् के प्रकाशन के समय से ही मेरा मन नल पाकदर्पण के प्रकाशन की ओर लगा था अनुवाद भी उसके बाद ही हो गया था। किन्तु कुछ कार्य कारण वश विलम्ब हो गया। प्रसंगतः बात चीत के प्रवाह में चौखम्भा संस्कृत संस्थान के संस्थापक श्रीगोहनलाल गुप्त के सौजन्य से इसको प्रकाशित करने में अधिक बिलम्ब नहीं हुआ और अब पाठकों के सामने प्रस्तुत है। आशा है यह हिन्दी रूपान्तर साहित्यिकों की रुचि को बढ़ायेगा।

इसके अनुवाद में अनेक ग्रन्थों का सहयोग लेना पड़ा है जिनके कर्त्ता का आभारी हूँ। प्रूफ संशोधन एवं संयोजन में मेरे कनिष्ठ पुत्र रजनीश त्रिपाठी का बहुत सहयोग रहा है। उनके भविष्य की शुभकामना करता हूँ। श्री कपिल देव गिरिजी शोध सहायक, संस्कृत महाविद्यालय का० हि० वि० वि० का सहयोग ही नहीं मार्ग प्रदर्शन भी अद्वितीय रहा है। अतः उनको हार्दिक धन्यवाद है।

यह कृति विश्वनाथ की अनुकम्पा से सम्पन्न हुई है। अतः उनके चरण कमलों में समर्पित्त करता हूँ।

श्रीरामनवमी काशी गुरुवार २१ अप्रैल ८३,

**इन्द्रदेव त्रिपाठी**

---

१. एकाकी नैषधः प्राप्तः कदाचित् कलिनाशनः।
ऋतुपर्णस्य नगरीं राजानमिदमब्रवीत् ॥
अश्वानां वाहने राजन् पृथिव्यां नास्ति मत्समः।
अर्थज्ञानाय चैवाहं द्रष्टव्यो नैषधेन च।
अन्नसंस्कारमपि च जानामि पिशितस्य च ॥ पा० द० प्र० १।१–३

# विषय सूची

पृष्ठ सं०

## प्रथम प्रकरण

## द्वितीय प्रकरण

## तृतीय प्रकरण



## चतुर्थ प्रकरण



## पञ्चम प्रकरण







## षष्ठ प्रकरण



## सप्तम प्रकरण



## अष्टम प्रकरण



## नवम प्रकरण

**दशम प्रकण**



**एकादश प्रकरण**



॥ श्रीः ॥

अथ नलविरचितं

# पाकदर्पणम्

### ग्रन्थोपक्रमः

एकाकी नैषधः प्राप्य कदाचित् कलिनाशनः ।
ऋतुपर्णस्य नगरीं राजानमिदमब्रवीत् ॥ १ ॥

**ग्रन्थ प्रारम्भ करने का उपक्रम**—किसी समय झगड़ा को दूर करने के अभिप्राय से नैषध ( निषध देश का राजा नल ) अकेले ही ऋतुपर्ण की नगरी में जाकर वहाँ के राजा से इस प्रकार बोले ॥ १ ॥

स्वदेशं हि परित्यज्य बाहुकाख्योऽहमागतः ।
अश्वानां वाहने राजन् पृथिव्यां नास्ति मत्समः ॥ २ ॥

हे राजन् ! मेरा नाम बाहुक है और मैं अपना देश छोड़ कर आया हूँ । इस पृथिवी पर घोड़ों को हाँकने ( घोड़सवारी करने ) में मेरे समान कोई नहीं है ॥ २ ॥

अर्थज्ञानस्य चैवाहं द्रष्टव्यो नैपुणेन च ।
अन्नसंस्कारमपि च जानामि पिशितस्य च ॥ ३ ॥

हे राजन् ! अश्व सम्बन्धी अर्थज्ञान में भी मेरे समान कोई नहीं है । अच्छी तरह आप मुझे देख लें । अर्थात् परीक्षा कर लें । मैं अन्नसंस्कार ( विभिन्न प्रकार के भोजननिर्माण-प्रकार ) को भी जानता हूँ और मांसमिश्रित अन्नसंस्कार ( मांस-मिश्रित ओदन निर्माण प्रकार ) को भी जानता हूँ ॥ ३ ॥

### पञ्चविधभोजनस्य भेदाः

भक्ष्यं भोज्यं तथा लेह्यञ्चोष्यं पेयं पयोगतम् ।
भेदं रसानां षण्णाञ्च शुद्धसंस्कारभेदतः ॥ ४ ॥

**पाँच प्रकार के भोजन का भेद**—भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चोष्य तथा दुग्धगत पेय ये पाँच प्रकार के भोजन शुद्धसंस्कार भेद से छः रसों का भेद होता है ॥ ४ ॥

सर्वेषां व्यञ्जनानाञ्च संस्कारं लवणादिभिः ।
एभिर्विना च तोयैश्च चित्रपाकं रसावहम् ॥ ५ ॥

सभी व्यञ्जनों का संस्कार लवणादिरसद्रव्यों से होता है । इन नबों के बिना तथा जल से भी पाक होता है और चित्रपाक उत्तम रस लाने वाला होता है । ॥ ५ ॥

यानि शिल्पानि लोकेऽस्मिन् यच्चान्यदपि दुर्लभम् ।
मया कृतरसः किञ्च सुधातुभ्यश्च दुर्लभः ॥ ६ ॥

इस संस्कार में जितने भी शिल्पी कर्म हैं और भी जो कुछ दुर्लभ हैं तथा पाकसम्बन्धित शिल्पकर्म हैं उन रसपाककार्य को भी मैंने बनाया है । यह कार्य अच्छे धातुओं ( पदार्थों ) से भी बनना दुर्लभ है ॥ ६ ॥

भुज्यते येन यत्नेन तस्यारोग्यं भवेद्ध्रुवम् ।
वातजं पित्तजं रोगं श्लेष्मजं हन्ति सर्वदा ॥
सकृन्निषेवणेनैव त्रिपुरं त्र्यम्बको यथा ॥ ७ ॥

मेरे द्वारा बनाये हुए सरस पाक को जो व्यक्ति प्रयत्न पूर्वक खाता है उसको अवश्य ही आरोग्य प्राप्त होता है । एक ही बार सेवन करने से वातज, पित्तज तथा कफज रोगों को हमेशा नष्ट करता है । जैसे शंकर जी त्रिपुर नामक राक्षस को एक ही बार में नष्ट कर दिये थे ॥ ७ ॥

अजीर्णदोषादुत्पन्नं ज्वरं माहेश्वरादिकम् ।
हृद्रोगं राजयक्ष्मादिरोगं शूलादिकं ततः ॥ ८ ॥
भगन्दरातिसारञ्च सन्निपातादिकं तथा ।
इत्थमेवादिकं सर्वं रोगजालं निहन्ति सः ॥ ९ ॥

यह रसपाक अजीर्ण आदि दोष से उत्पन्न माहेश्वर[1]आदि ज्वर, हृदयरोग, राजयक्ष्मा, श्वास, कास आदि रोग, शूल, उदरशूल, अंगशूल आदि रोग, भगन्दर, अतिसार तथा सान्निपातिक रोग, इसी प्रकार के सभी रोग समूहों को नष्ट करता है । ॥ ८-९ ॥

सर्वं यतिष्ये तत्कर्तुं ऋतुपर्ण ! भरस्व माम् ।
इत्युक्त्वा वसतीं चक्रे ऋतुपर्णस्य वेश्मनि ॥ १० ॥

हे राजा ऋतुपर्ण ! पूर्वोक्त सभी प्रकार के कर्मों को करने का मैं प्रयत्न

१. दक्षापमानसंक्रुद्धरुद्रनिःश्वाससम्भवः ।
ज्वरोऽष्टधा पृथग्द्वन्द्वसंघातागन्तुजः स्मृतः ॥
( मा० नि० ज्व० नि० १ )



करूँगा, आप मेरा भरण-पोषण करें । यह कहकर नल राजा ऋतुपर्ण के घर में रहने लगे ॥ १० ॥

### नल-ऋतुपर्णयोः सम्वादः

### ऋतुपर्ण उवाच

तं कदाचित्समाहूय स राजा राजसत्तमः ।
एताः कलाः कुतो लब्धास्त्वमस्माकं वद प्रियम् ॥ ११ ॥

**नल तथा राजा-ऋतुपर्ण का सम्वाद**—किसी समय राजाओं में श्रेष्ठ राजा ऋतुपर्ण नल को बुलाकर पूछे कि हे नल तुम इन कलाओं को कहाँ से प्राप्त किये हो, इस प्रिय कथा को हमसे कहो ॥ ११ ॥

### नल उवाच

श्रुत्वा तद्वचनं साधुस्तद्वक्तुमुपचक्रमे ।
शृणु राजेन्द्र! विद्याया निदानं मम तत्त्वतः ॥ १२ ॥

राजा के वचन को सुनकर नल बोले—हे राजन् ! मेरे इन विद्याओं को प्राप्त करने का आदि कारण विधिवत् सुनें ॥ १२ ॥

स्वयम्वरार्थं वैदर्भ्याः समायाताः सुरेश्वराः ।
अहमप्यागतस्तत्र दृष्ट्वा दृष्टश्च तैः पथि ॥ १३ ॥

हे राजन् ! वैदर्भी ( दमयन्ती ) के स्वयंवर के लिये सुरेश्वर ( इन्द्रादि ) देवता आये । वहाँ पर वे लोग मार्ग में ही सौभाग्यवश मुझे देख लिये ॥ १३ ॥

मामूचुस्तत्र वै देवा वञ्चनार्थमिदं वचः ।
अस्मान् वै पुरुषव्याघ्र यथा भैमी वरिष्यति ॥ १४ ॥
तथा कुरु वतेत्युक्ते स्वस्ति तेऽस्त्विति चाब्रुवन् ।

वे इन्द्रादिक देवता वहाँ पर ठगने के लिये मुझसे कहे कि हे पुरुषों में श्रेष्ठ नल ! दमयन्ती हम लोगों को ही जैसे वरण करे वैसा करें । 'करूँगा' ऐसा कहने पर 'तुम्हारा कल्याण हो' ऐसा बोले ॥ १४ ॥

दूतरूपं समाभृत्य मामकार्थी यथार्थतः ॥
ते नैषधं समालोक्य वरान् ददुरनुत्तमान् ॥ १५ ॥

इन्द्रादि देवगण मेरे स्वीकार करने पर दूत के रूप में यथार्थ में मुझे ही खोजनेवाले मुझ नल को देखकर उत्तम वरों को दिये ॥ १५ ॥

### इन्द्रादि लोकपालप्रदत्तवरनिरूपणम्

अदृश्यसिद्धिं प्रथममिन्द्रस्तुष्टोऽददात्स्वयम् ।

ततो हविर्भुजः प्रादादग्निसिद्धिं निरिन्धनीम् ॥ १६ ॥
ततोऽन्नरससिद्धिश्च सूर्यपुत्रश्च लौकिकीम् ।
वरुणो जलसिद्धिञ्च विना यत्नेन सत्तम ॥ १७ ॥
इति विद्याः सुरास्ते तु दत्त्वा निजपदं ययुः ।
इति तस्य वचः श्रुत्वा राजा त विस्मितोऽब्रवीत् ॥ १८ ॥

**इन्द्रादि लोकपालों के द्वारा दिये वरों का निरूपण**—हे राजन् ! सबसे पहले इन्द्र संतुष्ट होकर स्वयं अदृश्यसिद्धि ( अदृश्य विद्या ) को दिये। इसके बाद अग्निदेव बिना लकड़ी के ही अग्नि उत्पन्न कर देने की शक्ति ( अग्निसिद्धि ) को दिये। तत्पश्चात् सूर्य पुत्र ( यमराज ) लौकिक अन्नसिद्धि ( अनेक प्रकार के अन्न-व्यञ्जनादि को बनाने की शक्ति ) को दिये। इसके बाद वरुण बिना प्रयत्न के ही जल उत्पन्न करने की शक्ति ( जलसिद्धि ) को दिये। इसप्रकार वे देवगण इन विद्याओं को देकर अपने धाम को चले गये। इस प्रकार उनके वाक्यों को सुनकर राजा ऋतुपर्ण आश्चर्यित होकर नल से बोले ॥ १६-१८ ॥

इयं त्वलौकिकी विद्या त्वद्गता नरदुर्लभा ।
अतो नरहितार्थाय निदर्शनमुखेन ताम् ॥ १९ ॥
दर्शनं कुरु तत्त्वेन दृष्टेः कौतूहलं हि नः ।
इत्युक्तवति राजेन्द्रे नैषधः पुनरब्रवीत् ॥ २० ॥

तुम्हारे अन्दर मनुष्यों के लिये दुर्लभ यह अलौकिकी विद्या प्राप्त हुई है। अतः इस विद्या को मनुष्यों के हित के लिये प्रत्यक्ष रूप से विधिपूर्वक प्रदर्शन कीजिये। हम लोगों को वह विद्या देखने के लिए बहुत बड़ी उत्कण्ठा है। इस प्रकार राजा ऋतुपर्ण के कहने पर राजा नल फिर बोले ॥ १९-२० ॥

## नलेन स्वनिर्मितग्रन्थविषयवर्णनम्

अस्मिन्नर्थे मयाऽकारि ग्रन्थो लोकहिताय च ।
लोकपालप्रसादेन पाकदर्पणनामतः ॥ २१ ॥
तस्यावलोकनेनैव दृश्यन्ते विविधाः क्रियाः ।
सूदस्य लक्षणं तावद् वक्ष्ये संक्षेपतः प्रभो ॥ २२ ॥

**राजा नल के द्वारा स्वनिर्मित ग्रन्थ के विषय का वर्णन**—राजा ऋतुपर्ण के वाक्य को सुनककर राजा नल ने कहा कि अन्नसिद्धि के विषय में मैंने सभी लोगों के कल्याणार्थ लोकपालों के प्रसाद से पाकदर्पण नामक ग्रन्थ बनाया है। उस ग्रन्थ को देखने से ही सभी अनेक प्रकार के पाकनिर्माण सम्बन्धी क्रियाओं का ज्ञान हो जाता है, हे राजन् ! सर्वप्रथम रसोइया का लक्षण संक्षेप में कहता हूँ ॥ २१-२२ ॥



## सूदस्य लक्षणम्

स्वदेशसम्भवः प्राज्ञः सर्वलक्षणलक्षितः ।
सदाचारसमायुक्तो विशिष्टकुलसम्भवः ॥ २३ ॥
शान्तो दान्तो दानशीलो राजपूज्यो शुचिस्मितः ।
स्वदारनिरतः शुद्धः परदारविवर्जितः ॥ २४ ॥
मितभाषी सदा दाता दयालुश्च सुभाषितः ।
धातुज्ञो देशकालज्ञो वयोऽवस्थादिविद्बुधः ॥ २५ ॥

**रसोइया का लक्षण**—रसोइया को निम्न लक्षणों से युक्त होना चाहिए। जिस देश में काम करता हो वहीं का उत्पन्न हो, विद्वान् हो, सभी अच्छे लक्षणों से युक्त हो, सदाचारी हो, अच्छे विशिष्ट कुल में उत्पन्न हो, शान्त स्वभाव का हो, इन्द्रियों को वश में किया हो, दान प्रवृत्ति वाला हो, राज्य परिवार का विश्वासपात्र हो, पवित्र हो, अपनी धर्मपत्नी से ही सम्बन्ध रखने वाला हो, शुद्ध हो, परायी स्त्री से सम्बन्ध न रखता हो, थोड़ा बोलने वाला हो, हमेशा दान देने वाला हो, दयालु हो, मृदुभाषी हो, धातुओं ( अनेक प्रकार के लौह, ताम्र आदि धातुओं ) की जानकारी रखनेवाला हो, देश-विदेश तथा कालविशेष की जानकारी रखने वाला हो, आयु एवं अवस्था आदि का जानकार हो ॥ २३-२५ ॥

## परिवेशकस्य लक्षणं विधिश्च

प्रक्षाल्य चरणौ हस्तौ कृतशौचविधिस्तदा ।
सम्पूर्णकामो निष्ठात्मा राजभोजनकालवित् ॥ २६ ॥
राज्ञश्चावसरं ज्ञात्वा पाकादींश्च प्रदापयेत् ।
यदा पथ्यं भवेद्राज्ञः क्रमेण प्रक्षिपेच्च तान् ॥ २७ ॥

**परोसने वाले का लक्षण तथा विधि**—रसोइया सभी शौच क्रिया ( उठने से लेकर पूजन पर्यन्त शौच विधि ) को सम्पन्न कर, हाथ-पैर को अच्छी तरह धोकर, संतुष्ट मन से निष्ठावान् होकर राजा के भोजन काल को जानने वाला, राजा के भोजन समय को जानकर भोजन सामग्री को राजा के सामने रखे। जब जो पदार्थ राजा के लिए हितकर हो उन पदार्थों को भोजन[1]परिवेशन क्रम से रक्खे ॥ २६-२७ ॥

## ग्रन्थस्योपक्रमणिका

ओदनस्य प्रभेदोऽत्र प्रथमं कथ्यते मया ।
द्वितीयं सूपभेदश्च सर्पिषश्च तृतीयकम् ॥ २८ ॥

१. विविध भोजन-सामग्री रखने का क्रम आगे के श्लोक में देखें।

व्यञ्जनस्य च भेदश्च चतुर्थः स प्रपञ्चकः ।
पञ्चमो मांसशाकोऽत्र सप्रभेदश्च कथ्यते ॥ २९ ॥

**ग्रन्थ के उपक्रम विषय**—सर्वप्रथम ओदन ( भात, रोटी, विविध अन्न आदि के विविध भेदों को कहेंगे । दूसरा सूप ( दाल ) के भेद, तीसरा घी के भेद, चौथा सप्रपञ्च ( विधिविधान पूर्वक ) व्यजनों के भेद तथा पाँचवाँ मांस एवं शाक आदि के भेदों को कहेंगे ॥ २८-२९ ॥

षष्ठोऽत्र भक्ष्यभेदश्च सप्तमः पायसस्य च ।
रसायनश्चाष्टमोऽत्र नवमः पानभेदतः ॥ ३० ॥
दशमं यूषभेदश्च घृताद्यन्नप्रभेदकः ।
एकादशश्च लेह्यस्य भेदो द्वादशकस्तथा ॥ ३१ ॥
त्रयोदशन्तु पानीयं क्षीरभेदश्चतुर्दशः ।
दधिभेदः पञ्चदशः षोडशः तक्रभेदकः ॥ ३२ ॥

छठवाँ भक्ष्य प्रकार के भेद, सातवाँ पायस ( खीर ) के भेद, आठवाँ रसायन भेद, नवाँ पानक भेद, दसवाँ यूष का भेद, ग्यारहवाँ घृतपक्वादि अन्न के भेद, बारहवाँ लेह्य पदार्थों का भेद, तेरहवाँ विविध प्रकार के जल का भेद, चौदहवाँ दूध का भेद, पन्द्रहवाँ दही का भेद तथा सोलहवाँ तक्र का भेद कहा गया है ॥ ३०-३२ ॥

षोडषो मुख्यभेदश्च दृष्टान्तेन प्रदर्शितः ।
मृग्योऽवान्तरभेदश्च तत्र तत्र महद्धिया ॥ ३३ ॥

प्रधान सोलह भेदों को दृष्टान्त के साथ दिखाया गया है । उसके सम्बन्ध में अपनी विशद बुद्धि के अनुसार अवान्तर भेदों को भी विज्ञजन खोज करें ॥ ३३ ॥

तत्र तत्र यथायोग्यो वादस्तु कथितो मया ।
पानीयनामदेशे हि पानीयस्य समुद्भवः ॥ ३४ ॥
पुनश्चित्रं च कथितं पायसं चाम्लसम्भवम् ।
एवमादीनि चित्राणि कार्याणि विविधानि च ॥ ३५ ॥
पाकोत्थितान्यपाकानि कर्तव्यानि मनीषिभिः ।
किमत्र बहुनोक्तेन युक्तं चैकं शृणु प्रभो ! ॥ ३६ ॥

पूर्वोक्त सोलह प्रकार के पाकों के सम्बन्ध में मैंने यथायोग्य विवेचन किया है । पानीय नामक देश में ही पानी का उद्भव बताया गया है । इसके बाद चित्र-पाक का वर्णन है और आम्लवस्तु से पायस निर्माण का वर्णन है । इस तरह अनेक



प्रकार के चित्र-विचित्र विधियों का वर्णन किया गया है । विद्वानों को विना पकाये ही पाक बनाना चाहिए । इस सम्बन्ध में अधिक कहना भी ठीक नहीं है । हे राजन् ! यहाँ पर एक उपयोगी विषय को सुनें ॥ ३४-३६ ॥

यस्मिन् काले देशकाले दयाभावो हि भूमिप ! ।
तथा तस्मिन्नुपायेन कथितस्तस्य सम्भवः ॥ ३७ ॥

हे राजन् ! जिस समय तथा जिस काल में दयाभाव ( दयालुता ) रहता है, उस समय तथा उस काल में उसका उत्पादन उसी प्रकार के उपायों से कहा गया है ॥ ३७ ॥

### अन्नस्य प्राशस्त्यनिरूपणम्

सर्वेषां प्राणिनां प्राणमन्नं प्रथममुच्यते ।
ब्रह्मरूपमिदं सम्यक् त्रिषष्टिरसरूपकम् ॥ ३८ ॥
दोषाष्टकेन रहितमाहरेदन्नमुत्तमम् ।

**अन्न की प्रशंसा**—सभी प्राणियों का प्राण सर्व प्रथम अन्न ही कहा गया है, अच्छी तरह तिरसठ रस वाला यह अन्न ब्रह्म स्वरूप है अतः आठ दोषों से रहित उत्तम अन्न को ग्रहण करना चाहिए ॥ ३८ ॥

### अन्नगतदोषाणां विवेचनम्

दोषस्वरूपमज्ञात्वा तद्राहित्यं कथं लभेत् ॥ ३९ ॥
अनिन्द्यत्वाददोषत्वाद् दोषो नास्ति तदाश्रयः ।
अतोऽष्टरूपो दोषो हि नास्त्यत्र श्रुतिमानतः ॥ ४० ॥

**अन्न सम्बन्धी दोषों का विवेचन**—अन्न सम्बन्धी दोषों की जानकारी के बिना अन्नगत दोषों को कैसे दूर किया जा सकता है । क्योंकि अन्न अनिन्द्य एवं दोषरहित है । अतः उसमें दोष नहीं रह सकते, साथ ही शास्त्रनिर्देश के अनुसार उसमें आठ दोष नहीं हैं ॥ ३९-४० ॥

### अन्नेऽष्टदोषसम्भवनिरूपणम्

विद्यते ह्यष्टदोषो हि प्रत्यक्षेण प्रमादतः ॥

**अन्न में आठ दोषों का उत्पत्ति-निरूपण**—अन्न में प्रमाद ( असावधानी )-वश प्रत्यक्ष कारणों से अन्न में आठ दोष उत्पन्न होते हैं ॥ ४०½ ॥

के ते दोषाः सदाविष्टाः प्रत्यक्षेण बलीयसा ॥ ४१ ॥

वे कौनसे दोष हैं जो बलवान् प्रत्यक्ष कारणों से अन्न में उत्पन्न होते हैं ॥ ४१ ॥

इति प्रश्नकृते जातमुत्तरं ज्येष्ठमानतः ।
ये ते तदाश्रिताः दोषा असृतः पिच्छिलोऽशुचिः ॥ ४२ ॥
क्वथितश्शुष्कतो दग्धो विरूपो नर्तुजस्तथा ।
स्वरूपलक्षणं चैषां कथ्यते क्रमशो गुणम् ॥ ४३ ॥

अन्नगत दोषों को पूछने पर उत्तम प्रमाणों के द्वारा उत्तर दिये । प्रमादादिवश अन्न में रहनेवाले निम्नलिखित दोष हैं । आसृत ( अन्नगत मांड न निकालने से खट्टा हुआ अन्न ), पिच्छिल, अशुचि, क्वथित, शुष्क, दग्ध, विरूप तथा विपरीत ऋतुओं में उत्पन्न —ये अन्नगत आठ दोष होते हैं; । इन दोषों के स्वरूप, लक्षण तथा गुणों को आगे कहेंगे ॥ ४२-४३ ॥

### अन्नगतदोषविचारस्य प्रयोजननिरूपणम्

किं तस्य ह्रासरूपस्य विचारस्य प्रयोजनम् ।
पयस्त्वात् त्यज्यते सद्भिर्द्रवत्वे तु विशारदैः ॥ ४४ ॥
इदं सदोषं निर्दोषमिदं चेति विवेकितुम् ।
विकारार्थं न दोषेण युक्तद्रव्यम्प्रयत्नतः ॥ ४५ ॥
किन्त्वदुष्टवशङ्कर्तुरेतदेव प्रयोजनम् ।

**अन्नगतदोषविचार का प्रयोजन**—अन्न सम्बन्धी इन तुच्छ विचारों का क्या प्रयोजन हैं ? अच्छे पण्डित लोग द्रव में शक्ति होने पर भी छोड़ देते हैं । यह विचार करने के लिए कि यह दोषयुक्त है या दोषरहित है । दोष से युक्त द्रव विकारोत्पादक न हो जाय इसके लिए प्रयत्नपूर्वक दोषरहित बनाना ही दोष के विचार का प्रयोजन है ॥ ४४-४५½ ॥

अन्नस्य नास्ति वा दोषा न भवन्ति कदाचन ॥ ४६ ॥
ते तस्य सम्भवन्त्येव पाचकस्य प्रमादतः ।
क्रमेण वक्ष्ये दोषाणामष्टानां लक्षणं गुणम् ॥ ४७ ॥

अन्न में न दोष हैं और न होते हैं । उसमें वे दोष रसोइया के प्रमाद के कारण हो सकते हैं । प्रमाद से होनेवाले उन अन्नगत आठों दोषों के लक्षण तथा गुणों को आगे कहेंगे ॥ ४६-४७ ॥

### असृतान्नलक्षणं दोषाश्च

अश्रावितयवागुं यदन्नमसृतमुच्यते ।
तदन्नं येन भुक्तं चेत् तस्य व्याधिकरं भवेत् ॥ ४८ ॥

**असृत अन्न का लक्षण तथा दोष**—जो अन्न मांड न निकालने से अम्ल हो



जाता है उसे असृतान्न कहते है । जो उस अन्न को खाता है उसके लिए वह अन्न रोगकारक होता है ॥ ४८ ॥

### पैच्छिलान्नस्य लक्षणं दोषाश्च

अन्नमाश्रयते जीर्णमतिपाकेन पैच्छिलम् ।
तद्भुक्तं भुज्यते येन तं त्यजेदौदरोऽनलः ॥ ४९ ॥

**पैच्छिल अन्न का गुण तथा दोष**—अन्न अधिक पकाने से पैच्छिल दोषों से युक्त हो जाता है, जो लोग उस भात को खाते है उनको जठराग्नि छोड़ देती है । अर्थात् उसकी जठराग्नि मन्द हो जाती है और कड़े अन्न पचाने में असमर्थ भी हो जाती है ॥ ४९ ॥

### अशुच्यन्नस्य लक्षणं दोषाश्च

कृमिकेशादिसंयुक्त यदन्नमशुचि स्मृतम् ।
तद्भक्षणादरुचीरसना स्रवते जलम् ॥ ५० ॥

**अशुचि ( अपवित्र ) अन्न का लक्षण तथा दोष**—जो कृमि तथा केश आदि से मिश्रित अन्न होता है उसे अशुचि अन्न कहते हैं । उस अन्न को खाने से अरुचि ( अरोचक ) होती है और रसना ( जिह्वा ) से जल स्राव ( लार ) निकलता है ॥ ५० ॥

### क्वथितान्नस्य लक्षणं दोषाश्च

ईशत्तण्डुलमिश्रं यत् क्वथितं परिकीर्तितम् ।
आत्मादिदोषकृत्यर्थं कायस्थं यस्य तद्भवेत् ॥ ५१ ॥

**क्वथितान्न का लक्षण तथा दोष**—थोड़ा तण्डुल ( चावल ) से मिश्रित जो पाक होता है उसे क्वथित अन्न कहते हैं । यह अन्न जिसके शरीर में जाता है वह शरीर में स्थित होकर आत्मा आदि में विकार उत्पन्न करता है ॥ ५१ ॥

### शुष्कान्नस्य लक्षणं दोषाश्च

यत्कालविरहादन्नं शुष्कं तत्परिकीर्तितम् ।
भक्षितं येन तस्यान्नं विधूमो भवति ध्रुवम् ॥ ५२ ॥

**शुष्क अन्न का लक्षण तथा दोष**—जो अन्न अधिक समय तक रह जाने से शुष्क हो जाता है उसे शुष्कान्न कहते हैं । उस शुष्कान्न को जो खाता है उसको अवश्य ही विधूम ( अपचन ) हो जाता है ॥ ५२ ॥

### दग्धान्नस्य लक्षणं दोषाश्च

पावकस्यातियोगाद्धि दग्धं भवति चोदनम् ।
भक्षितं येन कुक्षिस्थं तत्कुर्याद्धातुशोषणम् ॥ ५३ ॥

**दग्धान्न के लक्षण तथा दोष**—तेज अग्नि के सहयोग से जो अन्न जल जाता है उसे दग्धान्न कहते है। उस अन्न को जो खाता है उसके पेट में स्थित होकर वह अन्न धातुओं ( रस, रक्त, मांस आदि का ) शोषण करता है ॥ ५३ ॥

### विरूपान्नस्य लक्षणं दोषाश्च

ओदनं स्याद्विरूपाख्यं पाकादक्षुण्णतण्डुलम् ।
कुक्षिस्थं यस्य तद्भुक्तमायुरादीन्निहन्ति च ॥ ५४ ॥

**विरूपान्न का लक्षण तथा दोष**—बिना अच्छी तरह कूटा-छाँटा चावल पाक करने से विकृत रूप हो जाता है उसे विरूपान्न ( विरूपौदन ) कहते हैं। वह खाया हुआ भात जिसके पेट में रहता है उसकी आयु, बल, वीर्य आदि को नष्ट कर देता है ॥ ५४ ॥

### अनर्तुजान्नस्य लक्षणं दोषाश्च

अनर्तुजाभिधानादन्नं पर्युषितं भवेत् ।
निद्राशीताद्विरोगः स्याद्भक्षितस्य च तस्य वै ॥ ५५ ॥

**बिपरीत ऋतुज अन्न के लक्षण तथा दोष**--अनर्तुज कहने से पर्युषित ( ऋतु विपरीत—बासी ) अन्न होता है। जो उस अन्न को खाता है उसको निद्रा आलस्य दौर्बल्यादि रोग होते हैं ॥ ५५ ॥

### राज्ञे निर्दोषान्नप्रदानस्य विधानम्

एते चान्नाश्रिता दोषाः मया सम्यक् प्रकाशिताः ।
एभिर्दोषैर्विहीनं यदन्नं राज्ञे प्रदापयेत् ॥ ५६ ॥

**राजा के लिए निर्दोष अन्न देने का विधान**--पूर्वोक्त अन्नगत आठ दोष हैं उनको मैंने अच्छी तरह बता दिया है। जो अन्न पूर्वोक्त दोषों से रहित हो उस अन्न को राजा को खाने के लिए देना चाहिए ॥ ५६ ॥

### अन्ननिर्माणविधिर्गुणाश्च

विधानमत्र पाकस्य वक्ष्ये सर्वहिताय च ।
अखण्डतण्डुलान् क्षुण्यान् पुराणव्रीहिसम्भवान् ॥ ५७ ॥
क्षालयेत्तान् बुधः सम्यगीषदुष्णेन वारिणा ।
शुद्धोदकं पुनः स्थाल्यां पूरयेत्तत्त्रिभागिकम् ॥ ५८ ॥



चुल्ल्यामारोपयेत्स्थालीं पूरितां पाककोविदः ।
शीतबुद्बुदसंयुक्ते पक्वे पयसि तान् क्षिपेत् ॥ ५९ ॥
तण्डुलानां यथा मध्ये ईषत्कठिनता भवेत् ।
दर्वीपुटेन तान् सम्यगवलोड्य पुनः पुनः ॥ ६० ॥
तत्रैव तु सदा सिञ्चेत् तक्रं क्षीरं पयोऽथवा ।
तदावतार्य प्रस्थाप्य चाङ्गारेषु[1] पुनर्न्यसेत् ॥ ६१ ॥
तदन्नं सम्यगालोक्य मृदुभूतं च दापयेत् ।
इदं तण्डुलसम्भूतमायुरारोग्यवर्द्धनम् ॥ ६२ ॥

**अन्न ( भात ) बनाने की विधि तथा गुण**--यहाँ पर सभी लोगों के लिए पाक बनाने की विधि कहता हूँ। बुद्धिमान व्यक्ति पुराने धान के बिना टूटे, सूखे चावल को थोडे गरम जल से अच्छी तरह धो कर बटलोही ( भोजन-निर्माण-पात्र) में चावल से तीन गुना शुद्ध जल भर दे। इसके बाद पाचक जलपूर्ण भोजन-निर्माण पात्र को चूल्हा के ऊपर रक्खे। जल के थोड़े गरम हो जाने पर पूर्वोक्त धोये हुए चावल को छोड़ दे। जब चावल में थोड़ा कड़ापन रह जाय तब कलछुल से बार-बार अच्छी तरह चलाये और उसी में मट्ठा, दूध या जल छोड़ दे। इसके बाद उतार कर तथा रख कर पुनः अंगार ( आग ) के ऊपर रखे। उस अन्न ( भात ) को अच्छी तरह मुलायम देखकर खाने के लिए दे। यह चावल का भात आयु एवं आरोग्य को बढ़ाने वाला है ॥ ५७-६२ ॥

### मांसग्रहणविधिः

छागमेषशकुन्तादिप्राणिनां पललं बुधः ।
समादाय पुनस्तस्य त्वगन्त्राणि समुत्सृजेत् ॥ ६३ ॥
तेषामेकतमं मांसं क्षालयेद्वारिणा ततः ।
अस्थिभिस्सह संच्छिद्य निक्षिपेत्तत्रय भाजने ॥ ६४ ॥

**मांसग्रहण करने का नियम**—बुद्धिमान व्यक्ति बकरी, भेड़, शकुन्त (पक्षी ) आदि प्राणियों के मांस लेकर उसके चमड़े तथा आँतों को निकाल दे। पुनः उनमें से किसी एक का मांस लेकर जल से प्रक्षालन करे। इसके बाद उस मांस को अस्थिसहित काटकर मांस बनाने के पात्र में रक्खे ॥ ६३-६४ ॥

---

१. भात को उतार कर आग के ऊपर रखने की प्रक्रिया आज भी प्रचलित है। इससे भात में एक प्रकार का स्वाद आ जाता है और कच्चा रहने की आशंका नहीं रहती। योग्य पाचक अब भी इस प्रक्रिया को अपनाते हैं।

### उत्क्राणोदकनिर्माणविधिः

अनापलं ततो भाण्डे तण्डुलस्योदकं शुभे।
निधाय शुद्धमुदकं समं कृत्वा पचेत्सुधीः ॥ ६५ ॥
तप्ते पयसि तन्मासं निक्षिपेत्क्षालितं पुनः।
पुनश्च निक्षिपेत्तत्र कुम्भीकुस्तुम्बुरीं बुधः ॥ ६६ ॥
तप्ते मांसे पुनः सम्यक् शोधयेच्चिक्कणं विना।
शीतलञ्च पुनः कृत्वा कुसुमैरधिवासयेत् ॥ ६७ ॥
न्यसेच्च मृगनाभिञ्च कर्पूरं हिमचारि च।
मुहूर्तमेकं संस्थाप्य प्रसूनानि परित्यजेत् ॥ ६८ ॥
एतदुत्क्राणमुदकमाहुः सूदविशारदः ॥ ६९ ॥

**उत्क्राणोदक बनाने की विधि** – उत्क्राणोदक बनाने के लिये पहले शुद्ध पात्र में चावल का जल रखकर सम भाग शुद्धजल मिलाकर बुद्धिमान रसोइया पकाये। जल गरम हो जाने पर पूर्वोक्त प्रक्षालित मांस को पुनः छोड़ दे। इसके बाद उसमें कुम्भी, कुस्तुम्बुरी, (धनिया) आदि छोड़ दे। पुनः मांस के गरम हो जाने परचिकनापन के बिना ही छान ले। पुनः जल को शीतल कर पुष्पों से सुगन्धित करे। पुनः उसमें कस्तूरी तथा कर्पूर मिला दे। उसमें एक घड़ी तक पुष्पों को रखकर निकाल दे। इसको पाकशास्त्रवेत्ता उत्क्राणोदक कहते हैं ॥ ६६-७० ॥

### उत्क्राणोदकशब्दस्य विवेचनम्

सर्वोदकातिक्रमणादुत्कृष्टत्वादितं पयः।
रससर्वस्वरूपत्वादुत्क्राणमिति कथ्यते ॥ ७० ॥

**उत्क्राणोदक शब्द की व्युत्पत्ति**—सभी प्रकार के जल को अतिक्रमण करने से तथा उत्कृष्ट ( उत्तम ) होने से और सभी रसस्वरूप होने से उत्क्राण ( उत्क्राणोदक ) कहा जाता है ॥ ७१ ॥

### सामान्यमांसौदननिर्माणविधिः

त्रिभागपूरितां स्थालीं तज्जलैश्च प्रमाणवित्।
स्थापयेच्च तथा चुल्यां तप्ते पयसि वह्निना ॥ ७१ ॥
चतुर्थांशान्क्षिपेत्सम्यक् क्षालितान् गौरतण्डुलान्।
ईषत्पाके तु सञ्जाते सुशुभे शालितण्डुले ॥ ७२ ॥
आदाय पक्वपललमपक्वमथवामिषम्।
तण्डुलाकारवच्छित्वा किञ्चित्सैन्धवमावहेत् ॥ ७३ ॥



भर्जयित्वा पुनस्थाल्यां किञ्चिदाज्यं च निक्षिपेत्।
जले विलीने तद्भक्तमङ्गारेषु समाविशेत् ॥ ७४ ॥
क्षीरं च नारिकेलस्य नवसर्पिस्तथैव च।
न्यसेत्तत्रैव रम्याणि केतकीकुसुमानि च ॥ ७५ ॥
निक्षिपेत् शकलांस्तत्र पर्पटप्रमुखोद्भवान्।
गन्धैः कर्पूरकस्तूरीसम्भवैश्चाधिवासयेत् ॥ ७६ ॥
तन्मुखं छादयेत्सम्यग्विधानेन विचक्षणः।
लिम्पेत्तद्गन्धरक्षार्थं तद्रन्ध कणिकैर्ध्रुवम् ॥ ७७ ॥
आवर्तनं पुनः कुर्यादङ्गारेष्वेव तान् पुनः।
यावता मृदुभावं स्यात्तावत्तत्र प्रयोजयेत् ॥ ७८ ॥
एवमामिषसम्भूतं दापयेदन्नमीदृशम् ॥ ७९ ॥

**सामान्य मांसोदन ( पुलाव ) बनाने की विधि** – पूर्वनिर्मित उत्क्राणोदक से प्रमाण जाननेवाला रसोइया स्थाली का तीन भाग भर दे तथा स्थाली को चुल्ही पर रक्खे। इसके बाद आग से पानी गरम हो जाने पर अच्छी तरह प्रक्षालित चतुर्थांश सफेद चावल को छोड़ दे। उत्तम शालिचावल के थोड़ा पक जाने पर पका मांस या अपक्व मांस लेकर तथा चावल के बराबर-बराबर काट कर थोड़ा नमक मिला दे। पुनः स्थाली में भूनकर मिला दे तथा थोड़ा घी मिला दे। जल के नष्ट हो जाने पर उस भात को अंगार पर रक्खे। इसके बाद नारियल का जल तथा नया घी मिला दे और वहीं पर रमणीय केवड़ा के फूल को रक्खे। तदनन्तर उसमें पर्पट ( पापड़ ) आदि के टुकड़ों को छोड़ दे और कर्पूर-कस्तूरी आदि के गन्ध से अधिवासित ( सुगन्धित ) करे। बाद में बुद्धिमान् पाचक उसके मुख को ढक दे और उसके गन्ध को सुरक्षित रखने के लिये ढकने के छेद को आटे से बन्द कर दे। पुनः अंगार के ऊपर ही उनको घुमाकर ( झोंककर ) नीचे-ऊपर कर रख दे। जब तक वह मुलायम न हो जाय तब तक वहाँ रक्खे। इस प्रकार मांसनिर्मित भात को खाने के लिये दे ॥ ७१-७९ ॥

### मांसौदनस्य गुणाः

इदं रुचिकरं वृष्यं पथ्यं लघुबलप्रदम्।
धातुवृद्धिकरत्वाच्च व्रणदोषान् प्रशाम्यति ॥ ८० ॥

**मांसौदन ( पुलाव ) के गुण**—पूर्वनिर्मित मांसौदन ( पुलाव ) रुचिकारक, वीर्यवर्द्धक, पथ्य, हल्का तथा बल को बढ़ानेवाला है। यह धातुवर्द्धक होने के कारण व्रण-विकारों को शान्त करता है ॥ ८० ॥

### तहर्यन्ननिर्माणविधिर्गुणाश्च

स्थाल्यां पक्वेऽथ पयसि पूर्ववत् सूदवेदवित् ।
तत्रैव भिन्नमुद्गांस्तु निक्षिपेन्निष्पचेत्पुनः ॥ ८१ ॥
गतेषु तेषु मुद्गेषु किञ्चित् पाकं प्रयत्नतः ।
समालोक्य पुनस्तत्र निक्षिपेच्छालितण्डुलान् ॥ ८२ ॥
कुक्कुटस्यामिषं पिष्ट्वा पूर्ववद्भर्ज्यं निक्षिपेत् ।
मुद्गतण्डुलमांसानां समपाकं यदा भवेत् ॥ ८३ ॥
तथा पचति पाकज्ञः प्रदद्यादन्नमुत्तमम् ।
इदं रुचिकरं सम्यक्कायपावकवर्द्धनम् ॥ ८४ ॥
समीरणहरं सम्यग् वारिदोषहरं परम् ।
तहरीत्युच्यते सद्भिरिदमन्नं शुभावहम् ॥ ८५ ॥

**तहरी बनाने की विधि तथा गुण**—पाकशास्त्र को जाननेवाला पाचक पूर्ववत् पके उत्क्राणोदक को भोजन-निर्माण पात्र में रक्खे और उसी में मूँग के दाल को छोड़ दे तथा पकावे। मूँग के दाल के गल जाने पर प्रयत्न पूर्वक थोड़ा पका हुआ जान कर उसमें जड़हन के चावल को छोड़ दे और पुनः मुर्गी के मांस को पीसकर तथा कड़ाही में भूनकर छोड़ दे। जब तक मूँग, चावल तथा मांस एक साथ पाक न हो जाय तब तक पाकज्ञ पाचक पकावे और इस उत्तम अन्न को खाने के लिये दे। यह मुद्ग-तण्डुल-मांसान्न रुचिवर्द्धक, अच्छी तरह जाठराग्निवर्द्धक, वातनाशक तथा अच्छी तरह जल के दोष को दूर करने वाला है। इस लाभकारक अन्न को सज्जनवृन्द तहरी कहते हैं ॥ ८१-८५ ॥

### चित्रपाकीय भक्तभेदनिरूपणम्

कथ्यन्ते भक्तभेदाश्च चित्रपाकसमन्विताः ।
पुष्पैरनेकैर्बहुभिः सुगन्धैर्वासितेषु च ॥ ८६ ॥
विशालेषु च रम्येषु पूगपादेषु मानवित् ।
सुजातं राजशाल्यन्नं सुपक्वं सुमनोहरम् ॥ ८७ ॥
निक्षिपेत्तद्यथा योग्यं सुशीलं भक्तमुत्तमम् ।
सर्वत्र सैन्धवं न्यस्येत् मृगनाभिसकर्पुरम् ॥ ८८ ॥
कुंकुमं हिमतोयञ्च केतकीकुसुमं न्यसेत् ।
मातुलुङ्गदलं न्यस्य कुम्भीकुस्तुम्बरी तथा ॥ ८९ ॥
आर्द्रकस्य पलाण्डोश्च शकलान् समुन्निक्षिपेत् ।
जीरकस्य च मेथ्याश्च चूर्णं सर्वत्र निक्षिपेत् ॥ ९० ॥



एभिश्चाकलयेद्भक्तं पूगपदेषु संस्थितम् ।
केषाञ्चित् निक्षिपेन्मांसमोदनानां नवं घृतम् ॥ ९१ ॥

**चित्रपाक सम्बन्धी भक्तभेद का निरूपण**—चित्रपाक से युक्त भात के प्रकार को कहते हैं। प्रमाण को जानने वाला पाचक अनेक बहुत प्रकार के सुगन्धित पुष्पों से सुगन्धित विशाल एवं मनोहर पूग पद में निर्मित अच्छी तरह परिपक्व मनोहर, शीतल एवं उत्तम राजशालि का भात यथा योग्य स्थान पर रक्खे। सर्वत्र सेन्धा नमक रक्खे। कस्तूरी, कपूर, केशर, शीतल जल तथा केवड़ा का फूल रक्खे। नींबू के टुकड़ों तथा कुम्भी, कुस्तुम्बरी को रख कर अदरक तथा पलाण्डु ( प्याज ) के टुकड़ों को रक्खे। सभी स्थानों पर जीरा तथा मेथी के चूर्ण को रक्खे। इन पूर्वोक्त द्रव्यों से पूगपद में स्थित भात को आकलन ( सुसज्जित ) करे। कुछ पशु-पक्षियों का मांसौदन तथा नया घृत रक्खे ॥ ८६-९१ ॥

### लावुकमांसौदननिर्माणविधिः

लावुकस्यामिषं दग्धं दग्धं मेदस्य मेदसम् ।
तण्डुलाकारवत्कृत्वा सम्यगाभर्ज्यं सर्पिषा ॥ ९२ ॥
निक्षिपेच्छकलैः सार्द्धं पर्पटादिसमुद्भवैः ।
किञ्चिदाज्यं पुनस्तत्र नवनीतसमुद्भवम् ॥ ९३ ॥
मेलयित्वा तु तैस्साकं कुर्यात्पोटलिका पुनः ।
अन्तरालाट्टालके सम्यक् पचेतां पाकवित्तथा ॥ ९४ ॥
इदं चित्रतरं भक्तमेवं कृत्वा प्रदापयेत् ।
अमिषस्यौदनश्चायं लावुकस्याति दुर्लभः ॥ ९५ ॥

**लावुक ( लावापक्षी ) मांसौदन बनाने की विधि**—लावा पक्षी का पका हुआ मांस तथा पका हुआ घी ले ले। मांस को चावल के आकार का टुकड़ा-टुकड़ा बनाकर घी में अच्छी तरह भून ले और पर्पट आदि से निर्मित टुकड़ों के साथ छोड़ दे। पुनः उसमें मक्खन का निकाला हुआ थोड़ा घी मिलाकर उन पूर्वोक्त द्रव्योंके साथ पोटलिका बनाये और पाक निर्माण को जाननेवाला पाचक अन्तराल ( मध्य में ) अच्छी तरह पूर्वोक्त प्रकार से पकावे। इस प्रकार इस चित्र-विचित्र भात को बना कर खाने के लिये दे। यह लावापक्षी के मांस का मांसौदन अत्यन्त दुर्लभ है ॥ ९२-९५ ॥

### लावुकमांसौदनस्य गुणाः

वृष्यं रोगहरं पथ्यमिन्द्रियाणां बलप्रदम् ।
श्लेष्मजित् श्रमजिद् बल्यमायुर्वृद्धिकरम्परम् ॥ ९६ ॥

**लावुक मांसौदन का गुण**—लावा पक्षी का मांसौदन वीर्यवर्द्धक, रोगनाशक, पथ्य, इन्द्रियों को बल देनेवाला, कफनाशक तथा थकावट को दूर करने वाला है और अच्छी तरह बलकारक एवं आयुवर्द्धक है ।। ९६ ।।

## कुक्कुटमांसतैलौदननिर्माणविधिः

जाठरः कथितः सम्यक् लावुकस्यामिषोद्भवः । ९७ ।।
कथ्यते ताम्रचूडस्य पिशितस्यौदनः पुनः ।
सैन्धवादीनि वस्तूनि केषाञ्चिन्निक्षिपेद् बुधः ।। ९८ ।।
पादायुधस्य पललं छित्वा दग्ध्वा च पूर्ववत् ।
निक्षिपेत्तिलपिण्याकलेह्येन सह सूदवित् ।। ९९ ।।
भर्जितं तिलतैलेन रामठं तत्र निक्षिपेत् ।
मेलयित्वा तु कुर्वीत पोटलीः पूर्ववत् पचेत् ।। १०० ।।
अनैनेव प्रकारेण साधयित्वान्नमुत्तमम् ।
राज्ञे दद्यादिदं विद्वान् कुक्कुटामिषसम्भवम् ।। १०१ ।।

**कुक्कुट ( मुर्गा ) मांस तैलौदन बनाने की विधि**—उदर के लिये हितकर लावा मांस का बना हुआ मांसौदन कहा गया । अब मुर्गे का मांसतैलौदन निर्माण कहते हैं । बुद्धिमान् पाचक पुनः सेन्धा नमक आदि वस्तु समूहों को एकत्र कर छोड़ दे । पूर्वोक्त प्रकार से मांस को तण्डुलाकार काट कर तथा घी में भून कर पाक शास्त्रवेत्ता पाचक तिल के गीले खली के साथ छोड़ दे । पुनः उसमें घी में भूनी हुई हींग छोड़ दे । पूर्वोक्त सभी चीजों को मिलाकर पूर्व की तरह पोटली बनावे और पकावे । इसी प्रकार मुर्गे के मांस से निर्मित उत्तम कुक्कुटतैलमांसौदन को विद्वान् पाचक राजा के लिये खाने को दे ।। ९७-१०१ ।।

## कुक्कुटमांसतैलौदनस्य गुणाः

एतत्कीर्तिकरं नित्यं शरीरस्य हितप्रदम् ।
मरुद्दोषहरं शश्वत् वृष्यं लघुबलप्रदम् ।। १०२ ।।

**कुक्कुट मांसतैलौदन के गुण**—यह कुक्कुटमांसतैलौदन यशकारक तथा शरीर के लिये हितकर है । यह वातविकार को दूर करने वाला निरन्तर वीर्यवर्द्धक, हल्का तथा बलकारक है ।। १०२ ।।

## सूक्ष्ममांसौदननिर्माणविधिर्गुणाश्च

अन्नञ्च दर्शितं रम्यं कुक्कुटामिषसम्भवम् ।
सूक्ष्ममांसौदनं रम्यं कथ्यते क्रमशस्ततः ।। १०३ ।।



भक्तानां निक्षिपेत्तेषां सैन्धवादीन् सुबुद्धिमान् ।
सूक्ष्ममांसं न्यसेत् पक्वं पुनः तण्डुलभक्तिकी ।। १०४ ।।
कैटर्यपत्रसंभूतलेह्यं तत्र समाविशेत् ।
तिलपिष्टेन रचितं षट् चूर्णं तत्र निक्षिपेत् ।। १०५ ।।
हिंगुञ्च भर्जितं दद्यात् तैलं च तिलसम्भवम् ।। १०६ ।।
सममेभिर्मेलयित्वा भक्तं तत् पूर्ववत् पचेत् ।
कृत्वान्नमेतदेवञ्च प्रदद्यात् प्राणकारणम् ।। १०७ ।।
रुच्यं श्लेष्महरं रम्यं सुराणामपि दुर्लभम् ।। १०८ ।।

**सूक्ष्म मांसौदन बनाने की विधि तथा गुण**—मुर्गा के मांस से निर्मित स्वादिष्ट भात को मैंने बनाया । अब स्वादिष्टसूक्ष्ममांसौदन को क्रमशः कह रहा हूँ । बुद्धिमान् पाचक उन अन्नों में सेन्धा नमक आदि छोड़ दे । इसके बाद पका हुआ सूक्ष्म मांस का टुकड़ा छोड़े । पुनः चावल का भात तथा कैटर्य पत्र का बना हुआ लेह्य पदार्थ उसमें छोड़ दे । पुनः उसमें तिल की पिट्ठी से बना हुआ षट्-चूर्ण छोड़ दे । इसके बाद भूनी हुई हींग तथा तिल का तेल मिलादे । इस प्रकार इन सबों के साथ मिलाकर उस अन्न को पूर्ववत् पकाये । इस जीवन प्रदान करने वाले सूक्ष्म मांसौदन को राजा के लिये दे । यह सूक्ष्म मांसौदन रुचिकारक, वातनाशक, मनोरम तथा देवताओं के लिये भी दुर्लभ है ।। १०३-१०८ ।।

## प्रश्नोत्तररूपेणान्नस्य विषाक्तत्वनिराकरणम्

युक्तं भक्तं त्वयाप्युक्तं विषवद्भाति बाहुक ।।
अस्माभिर्भुज्यते भक्तं कथं च विषदूषितम् ।। १०९ ।।
अमृतद्रव्यसयुक्तं भुक्तमन्नं मया प्रभो ! ।
न कापि विषसंयुक्तमन्नं वै कथितं मया ।। ११० ।।
प्रमादेन यदुक्तञ्च सत्यं तद्ब्रूत पार्थिव ! ।
बाहुकस्य वचः श्रुत्वा राजैनमिदमब्रवीत् ।। १११ ।।

**प्रश्नोत्तर के रूप में अन्न विषाक्तता का निराकरण**—विविध संमिश्रित अन्न निर्माण विधि एवं गुण को सुनकर राजा ऋतुपर्ण ने पूछा कि हे बाहुक ! आपने कहा है कि युक्तिपूर्वक बनाया हुआ भी अन्न विषसदृश हो जाता है । तब हमलोग विष दूषित अन्न को कैसे भोजन करते हैं । इस बात को सुनकर बाहुक नल ने कहा कि हे राजन् ! अमृत द्रव्य से युक्त उचित अन्न को मैंने कहीं भी विषयुक्त अन्न नहीं कहा है । यदि मैंने प्रमादवश सचमुच कहा है तो आप कहें । इसप्रकार बाहुक की बात सुनकर राजा ऋतुपर्ण ने पूर्वोक्त आख्यान को बताया ।। १०९-१११ ।।

### नलोक्तान्योन्यद्रव्यसंसर्गजविषनिरूपणम्

श्रूयतां पाचकश्रेष्ठ! त्वदुक्तं गरलं पुनः।
सर्वं वस्तुस्वरूपेण सुधा भवति वै ध्रुवम् ॥ ११२ ॥
अन्योन्यद्रव्यससर्गाद्विषं भवति वै तृणम्।
अत्रापि तैलसंसर्गात् कर्पूरस्य कृतं त्वया ॥ ११३ ॥
इदं हि गरलं प्रोक्तं प्राणिनां दृश्यते मृतिः।
राज्ञश्च वचनं श्रुत्वा बाहुकः पुनरब्रवीत् ॥ ११४ ॥

**नल कथित अन्योन्य द्रव्यसंसर्गज विष का निरूपण**—राजा ऋतुपर्ण ने नल के कथन को स्मरण दिलाया कि हे पाचकश्रेष्ठ बाहुक ! तुमने संसर्गज विष का निरूपण किया है। सभी द्रव्य अपने स्वरूप में निश्चय हा अमृत के समान होते हैं। किन्तु विभिन्न द्रव्यों के संसर्ग से तृण भी विष हो जाता है। यहाँ पर भी आपने तैल के संसर्ग से कर्पूर को विष बताया है। इसको गरल ( संसगंज विष ) कहते हैं और इससे प्राणियों की मृत्यु होती है। इस प्रकार राजा के वचन सुनकर बाहुक ने उत्तर दिया ॥ ११२–११४ ॥

### संसर्गजविषनिराकरणपूर्वकममृतत्वनिरूपणम्

सत्यमुक्तं महाराज! नत्वेतद् गरलं भवेत्।
किन्तु पीयूषसदृशमन्नमेतद् भवेद् ध्रुवम् ॥ ११५ ॥
सत्यं संगविशेषेण विषमप्यमृतायते।
हरिसन्निधिमात्रेण शेषो निर्विषतां यथा ॥ ११६ ॥
तथायोगस्तु कर्पूरतैलयोरमृतायते।
मांसशाल्यन्नयोगाद्धि तद्विषं निर्विषायते ॥ ११७ ॥
सूदस्य हस्तकरणममृतं तद्भवेद्ध्रुवम्।
तदेतन्मात्रया युक्तं विषमप्यमृतं भवेत् ॥ ११८ ॥
अमात्रयाभिसंयुक्तममृतं विषमेव तत् ॥ ११९ ॥

**संसर्गज विष का निराकरणपूर्वक अमृत स्वरूप का निरूपण**—हे महाराज ! आपने सत्य कहा है किन्तु मैंने जो मांसौदन पदार्थ निर्माण किया है वह गरल ( संसर्गज विष ) नहीं होता है। किन्तु निश्चय ही वह अन्न अमृत सदृश होता है। यह सत्य है कि विशिष्ट पदार्थ का संसर्ग होने से विष भी अमृत हो जाता है। जैसे भगवान् बिष्णु के संसर्ग से शेषनाग भी निर्विष हो जाते हैं उसी प्रकार कर्पूर और तैल का संयोग भी अमृत सदृश हो जाता है। कर्पूर तथा तैल का संसर्गज विष मांस एवं शाल्यन्न के संयोग से निर्विष हो जाता है। पाचक के



हाथ से बनाया हुआ वह निश्चय ही अमृत हो जाता है। वह विष भी उचित मात्रा में मिलने पर विष अमृत हो जाता है, किन्तु विषम मात्रा ( अनुपयुक्त मात्रा ) में मिलने पर अमृत भी विष हो जाता है ॥ ११५–११९ ॥

### स्वकृतपाकप्रशस्तिः

नानाद्रव्यसमन्वितं बहुगुणं प्राणस्वरूपन्नृणाम्
धातूनाञ्च विवर्धनं कलिमलध्वंसं त्रिवर्गप्रदम्।
नानाव्याधिहरं परत्र हितकृत्कायस्य कान्तिप्रदम्
पीयूषालयमीदृशञ्च न हि तं भक्तं मया साधितम् ॥ १२० ॥

**स्वकृत पाक की प्रशंसा**—मैंने विविध द्रव्यों से युक्त अनेक गुणवाला मनुष्यों के प्राणस्वरूप, धातुओं ( रस-रक्त-मांस-मेदादि ) को बढ़ाने वाला कलिकाल के मल ( रोगादि ) को नाश करने वाला, त्रिवर्ग ( धर्म-अर्थ-काम ) देने वाला, अनेक व्याधियों को दूर करनेवाला, दूसरों का हित करने वाला शरीर की शोभा को बढ़ाने वाला अमृत भण्डारस्वरूप अन्न का निर्माण किया है। मैंने आपके कथनानुसार विषाक्त अन्न का निर्माण नहीं किया है ॥ १२० ॥

### सूपानां निर्माणविधिः

कुलित्थमाषनिष्पावतुवरीचणकादयः।
शूर्पेण शोधयेत् सम्यक् मुद्गादीन्वितुषीकृतान् ॥ १२१ ॥
पचेत्प्रवण्यां पाकज्ञः समभागोदकैश्च तान्।
पक्वे सूपे समालोक्य यथार्हं सैन्धवं क्षिपेत् ॥ १२२ ॥
सुवर्णार्थंञ्च तत्रैव निशावर्णं विनिक्षिपेत्।
पुनश्च वासनार्थन्तु यथार्हं हिंगु निक्षिपेत् ॥ १२३ ॥
दर्वीपुटेण निर्मथ्य पयसा लोडयेच्च तम्।
कर्पुरपुष्पमुख्यैश्च सुदृढश्चाधिवासयेत् ॥ १२४ ॥
एवं मत्साधितं सूदः प्रदद्यात् सूपमुत्तमम् ॥ १२५ ॥

**सूप ( दाल ) बनाने की विधि**—कुरथी, उड़द, भटवास, अरहर तथा चना आदि को सूप से अच्छी तरह साफ करे और पाचक भूसी रहित मूँग आदि के दाल को समान भाग जल के साथ बटलोही में पकावे। पका हुआ दाल देखकर उचित मात्रा में सेन्धा नमक छोड़ दे। दाल को सुन्दर रंग वाला बनाने के लिए उस में हल्दी का चूर्ण मिला दे। उसमें सुगन्ध लाने के लिये पुनः उचित मात्रा में हींग ( घृतभर्जित ) छोड़ दे। इसके बाद कलछुल से अच्छी तरह मथ कर जल मिला दे। तदनन्तर कर्पूर तथा विभिन्न सुगन्धित पुष्पों से अच्छी तरह सुवा-

सित ( सुगन्धित ) कर ले। इस प्रकार मेरा बनाया हुआ उत्तम स्वादिष्ट दाल पाचक राजा के लिये दे ॥ १२१-१२५ ॥

### सूपस्य गुणाः

अयं रुचिकरात्सूपः रुच्यः पित्तविनाशकः ।
सर्वैर्गुणैस्समाविष्टो लघुरूपो निरामयः ॥ १२६ ॥

**दाल के गुण**—पूर्वोक्त प्रकार से निर्मित दाल मन के अनुकूल होने से रुचिकारक एवं पित्तनाशक होता है। यह सभी गुणों से युक्त, हल्का तथा आरोग्यप्रद होता है ॥ १२६ ॥

### विशिष्टसूप ( द्विदल ) निर्माणविधिः

सामान्यसूपस्सूपोऽत्र कथितो व्यञ्जनाग्रणीः ।
अत्र सिंहासनारूढः कथ्यते सूपभूपतिः ॥ १२७ ॥
तेषां मध्ये समाधाय मुद्गोहितकरं परम् ।
तिलतैलेन संमृज्य तक्राम्ले तत्र लोडयेत् ॥ १२८ ॥
शोषयित्वाऽऽतपे तन्तु भिन्नं कुर्यात् हरट्टके ।
अपक्वतण्डुलोप्तेऽत्र साकं सूदस्तुषैश्च तम् ॥ १२९ ॥
पूरयित्वाधितिष्ठेच्च दिनानि दशपञ्च च ।
मुसलेन सुतं यावद् भवेत्तावत् प्रसादयेत् ॥ १३० ॥
एवञ्च निस्त्वचं कृत्वा क्षालयेद् वारिणा च तम् ॥ १३१ ॥

**विशेष प्रकार का दाल तैयार करने का प्रकार**—बाहुक नल ने बताया कि मैंने सभी व्यञ्जनों में श्रेष्ठ सामान्य दाल का निर्माण बताया। अब यहाँ पर सिंहासनारूढ ( राजासन पर बैठे हुए ) दालों के राजा को कहता हूँ। पूर्वोक्त कुरथी, उड़द, मूँग आदि शिम्बी धान्य में से उत्तम हितकारक मूँग को लेकर तिल तैल से मींजकर खट्टे मट्ठे में भिगो दे। इसके बाद उसको धूप में सुखा कर हरहक ( दाल दलने की चकरी ) में दरकर अलग-अलग कर ले। इसके बाद उसको कच्चे चावल के पात्र में धान की भूसी के साथ रखकर दस-पन्द्रह दिन रहने दे। पुनः निकाल कर मुसली के आघात से जब तक वह स्वच्छ-मुलायम न होजाय तब तक स्वच्छ करे। इस प्रकार दाल की भूसी निकाल कर जल से धो दे ॥ १२७-१३१॥

### विशिष्टसूपपाकविधिः

भिन्नमुद्गसमं तोयं प्रवण्यां सेचयेद्बुधः ।
तस्मिन् पयसि शोभार्थं निशाचूर्णं च निक्षिपेत् ॥ १३२ ॥



रामठं च तथा क्षीरमासिञ्चेत्तत्र मानवित् ।
चुल्यामारोप्य तान् विद्वान् जले बुद्बुदसंयुते ॥ १३३ ॥
निक्षिपेत् क्षालितं पक्वं तुषादिवितुषीकृतम् ।
ईषन्मृदुत्वे जातेऽस्मिन्नवतार्य स्रावेद्बुधः ॥ १३४ ॥
तमादाय पुनः पूगपट्टनेत्रेषु निक्षिपेत् ।
सैन्धवं च यथायोग्यं तत्रैव परिनिक्षिपेत् ॥ १३५ ॥
कुर्वीत वासेन सम्यक् कर्पूरप्रमुखैश्च तम् ।
वासितं तं पुनः सम्यग् वेष्टयित्वा प्रदापयेत् ॥ १३६ ॥

**विशेष प्रकार से दाल पकाने की विधि**—बुद्धिमान् पाचक पूर्वोक्त प्रकार से भूसीरहित मूँग की दाल के बराबर जल वटलोही में रक्खे और उस जल में शोभा बढ़ाने के लिए हलदी का चूर्ण छोड़ दे। इसके बाद प्रमाण को जानने वाला पाचक हींग तथा दूध छोड़ दे। विद्वान् पाचक उनको चूल्हे पर रखकर बुदबुद शब्द जल में होने पर भूसी आदि से रहित धोये हुए परिपक्व दाल को मिला-दे। थोड़ा मुलायम हो जाने पर उतारकर जल को निकाल दे। इसके बाद उसको लेकर पुनः सुपारी पात्र के मध्य में रख दे और उचित मात्रा में सेन्धानमक मिला दे। इसके बाद कर्पूर आदि प्रमुख सुगन्धित द्रव्यों से सुगन्धित बना कर तथा पुनः अच्छी तरह लपेटकर खाने के लिये राजा को दे। यह दक्षिण-भारतीय "मसाल डोसा" का स्वरूप हो सकता है ॥ १३२-३६॥

### विशिष्टसूपपाकस्य गुणः

अयं स्वादुतरः रूपः सर्वेषां हितकृद्बली ।
स्निग्धो मनोहरो रूपः सद्यः पित्तविमर्दकः ॥ १३७ ॥

**विशिष्ट परिपक्व दाल के गुण**—पूर्वोक्त विशिष्ट प्रकार से निर्मित परिपक्व दाल अत्यन्त स्वादिष्ट, सभी के लिये हितकर, बलकारक, स्निग्ध, मनोहर रूपकारक तथा शीघ्र ही पित्तनाशक होता है ॥ १३७ ॥

### अन्यविधसूपपाकविधिर्गुणाश्च

तादृशं मुद्गमादाय प्रवण्यां पाचयेत् बुधः ।
सम्यक् पक्वे ततः सूपे सैन्धवं हिंगु च क्षिपेत् ॥ १३८ ॥
सूपमेवंविधं विद्वान् वासयेत्कर्पुरादिभिः ।
शनैः शलाकयालोडय राज्ञे तञ्च प्रदापयेत् ॥ १३९ ॥
अयं स्वादुतरः सूपः प्रोक्तो लोकहितप्रदः ।
वृष्यः सुधासमः सद्यः सुराणामपि दुर्लभः ॥ १४० ॥

**अन्य प्रकार का दाल बनाने की विधि तथा गुण**—बुद्धिमान् पाचक पूर्वोक्त

प्रकार के मूँग की दाल लेकर बटलोही में पकावे। अच्छी तरह दाल के पक जाने पर सेन्धानमक तथा हींग छोड़ दे। विद्वान् पाचक इस प्रकार के दाल को कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्य से सुवासित कर ले। इसके बाद कलछुल से धीरे चलाकर दाल को राजा के लिये दे। यह स्वादिष्ट दाल संसार के हित के लिये कहा गया है। अमृत समान दाल सद्यः वीर्यवर्द्धक है और देवताओं को भी दुर्लभ है।

### सूपप्रशस्तिः

माषादिसामन्तनृपैरनेकैः रम्भाप्रसूनप्रमुखैर्बलौघैः।
शाल्यन्नसिंहासनगो विभाति घृतातपत्रः खलु सूपभूपः॥ १४१॥

**सूप ( दाल ) की प्रशंसा**—माष ( उड़द ) अरहर आदि रूप अनेक सामन्त राजाओं से तथा केला, पुष्प आदि रूप प्रमुख सेनासमूहों से घृत रूप छत्र से युक्त सूपराज मूंग की दाल शालि ( जड़हन चावल का ) भातरूपी सिंहासन पर स्थित होकरसु शोभित हो रहा है॥ १४१॥

### तेमनतक्रनिर्माणविधिर्गुणाश्च:

सप्रभेदः सूपभेदः कथितः कथ्यते खलु।
जातितीलुलितं तक्रं तिलतैलेन संयुतम्॥ १४२॥
सुगन्धगुणसंयुक्तं कुसुमैरधिवासयेत्।
मुहूर्तमात्रं संस्थाप्य कुसुमानि परित्यजेत्॥ १४३॥
लशुनार्द्रकयोः खण्डान् पुनस्तत्र विनिक्षिपेत्।
कुम्भीदलं च धान्याकं शुण्ठीचूर्णं च निक्षिपेत्॥ १४४॥
सैंन्धवं च यथा योग्यं जम्बीराम्लञ्च निक्षिपेत्।
रामठं तत्र निक्षिप्य कुर्यादालोडनं बुधः॥ १४५॥
चुल्यां पचेच्च तं तक्रं दर्वीघट्टनपूर्वकम्।
पाकार्थां निक्षिपेत्तत्र शुचिभिन्नमरीचिकाः॥ १४६॥
तद्यावतां कटु भवेत्तावत् पाकावतारयेत्।
प्रवणीभाण्डमारोप्य चुल्यामस्यां प्रदापयेत्॥ १४७॥
दर्वीविघट्टनं कृत्वा तेमनं तत्र निक्षिपेत्।
पिधानेन समाच्छाद्य तन्मुखं तत्पुनः पचेत्॥ १४८॥
प्रकृतेऽस्मिन् तदादाय मातुलुंगदलं क्षिपेत्।
कर्पूरं मृगनाभि च केतकी कुसुमं न्यसेत॥ १४९॥
स्वादु पथ्यं लघुतरं तेमनं तत्र सम्भवम्।
आरोग्यदं रोगहरं वातश्लेष्महरं शुभम्॥ १५०॥



**तेमन तक्र ( मट्ठा ) बनाने की विधि तथा गुण**—सूप ( दाल ) के विविध भेद को मैंने कहा। अब तेमन तक्र को कहता हूँ। अच्छी तरह मथा हुआ तक्र ( मट्ठा ) तिल तैल के साथ मिला दे और सुगन्ध से युक्त कर फूल से सुवासित कर दे। पुष्पों को मट्ठा में थोड़ा देर रखकर निकाल दे। इसके बाद लहसुन तथा अदरक के टुकड़ों को उसमें छोड़ दे। पुनः कट्फल का पत्र, धनिया तथा सोंठ का चूर्ण, उचित मात्रा में सेन्धानमक तथा जम्बीरी नीबू छोड़ दे। इसके बाद उसमें हींग छोड़कर बुद्धिमान् पाचक अच्छी तरह मिला दे। इन द्रव्यों से युक्त तक्र को कलछुल से चलाते हुए चुल्ही के ऊपर पकाये। उसमें पाक के लिये शुद्धमरिच का चूर्ण छोड़ दे। जब तब वह कडुआ न हो जाय तब तक पाक करे। बटलोही में रखकर चूल्हे के ऊपर रखे। कलछुल से चला कर उसमें "तेमन"[1] छोड़ दे, और ढक्कन से उसका मुँह ढँक कर पुनः पाक करें। अच्छी तरह परिपाक हो जाने पर बिजौरा नीबू का दल छोड़ दे इसके बाद उसमें कर्पूर, कस्तूरी तथा केवड़ा का फूल रक्खे। इस प्रकार तैयार "तेमन तक्र" स्वादिष्ट, पथ्यकारक तथा हल्का होता है। यह आरोग्यप्रद, रोगनाशक, वात-कफ को दूर करनेवाला तथा कल्याण कारक होता है॥ १४२-१५०॥

### खलतक्रनिर्माणविधिर्गुणाश्च

पुनर्नवा तथा वह्न्यजाजीतक्रसमुद्भवम्।
वासितं घनसारेण वातश्लेष्महरं शुभम्॥ १५१॥
खलं गुल्महरं शीघ्रं पुष्पैश्च सुमनोहरैः।
अशीतिवातजान् रोगान् जठरानलवृद्धिकृत्॥ १५२॥

**खल तक्र बनाने की विधि तथा गुण**—पुनर्नवा, चित्रक, अजाजी ( जीरा ) तथा तक्र से बनाया हुआ कर्पूर तथा मनोहर पुष्पों से सुवासित किया हुआ "खल तक्र"[2] शीघ्र ही गुल्म रोग को दूर करता है। यह अस्सी प्रकार के वात रोगों को नाश करता है तथा जाठराग्नि को प्रदीप्त करता है॥ १५१-१५२॥

---

१. व्यञ्जनं सूपशाकादि मिष्ठान्न तेमनं स्मृतम्—( रा० नि० २० )।

२. मालवे व्यञ्जनविशेषः। मातुधानीयपुष्पैर्योऽतिगुणः स "खल" इत्युच्यते। फलमूलैर्यनादानं व्यञ्जनं पाकतो घनम्। लेहवत् खल इत्यन्ये दोषलाः स्व स्व योनिवत्॥ कल्को विल्वशलाटूनां तिलकल्कञ्च तत्समः। दध्नः सरोऽम्लः सस्नेहः खलो हन्ति प्रवाहिकाम्। श्रीकुक्कुटः अपराजितश्च नामपरौ खलावपि। ( वा० चि०—९। १२ )।

### त्रिकटुखलनिर्माणविधिर्गुणाश्च

तक्राजमोदसंयुक्तः खलस्त्रिकटुकोद्भवः।
वासितः प्रसवैः सम्यक् सुगन्धसुमनोहरैः ॥ १५३ ॥
औदरानामयान् हन्ति जठराग्निप्रवर्द्धनम् ॥ १५४ ॥

**त्रिकटु खल बनाने की विधि तथा गुण**—तक्र ( मट्ठा ) तथा अजवायन से युक्त त्रिकटु ( सोंठ, पीपर, मरिच ) से बनाया हुआ सुगन्धित एवं मनोहर पुष्पों से अच्छी तरह सुवासित किया हुआ खल ( त्रिकटु खल ) उदर के रोगों को नष्ट करता है। तथा जाठराग्नि को बढ़ाता है ॥ १५३-१५४ ॥

### शुद्धतेमननिर्माणविधिर्गुणाश्च

तक्रस्याम्लं मर्दयित्वा जलेन च विचक्षणः।
तत्र सैन्धवसिद्धार्थं मरीचानागरोद्भवम् ॥ १५५ ॥
कल्कं चालोडयित्वा च वासयेत्कर्पुरादिभिः।
अयं तक्रसमुत्पन्नः खलो दोपनपाचनः ॥ १५६ ॥
त्रिदोषशामनं सम्यक् पीयूषसदृशः शुभः ॥ १५७ ॥

**शुद्ध तेमन बनाने की विधि तथा गुण**—बुद्धिमान् पाचक अम्लतक्र को जल के साथ मर्दन कर उसमें सेन्धा नमक, सरसों, मरिच तथा सोंठ का कल्फ मिलाकर कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों से सुवासित करें। यह तक्र के योग से बना हुआ खल ( शुद्ध तेमन ) जाठराग्निदीपक तथा पाचक है। यह अच्छी तरह त्रिदोष को शान्त करनेवाला अमृत के समान कल्याणकारक है ॥ १५५-१५७ ॥

### कैटर्य खलनिर्माणविधिर्गुणाश्च

व्योषकैडर्यलसुनजीरकाणि पुनर्नवैः।
सैन्धवप्रमुखैर्युक्तः शरीरानलकृत्खलः ॥ १५८ ॥

**कैटर्य खल निर्माणविधि तथा गुण**—व्योष ( सोंठ, पीपर, मरिच ) कैटर्य ( कट्फल ) लहसुन, जीरा, पुनर्नवा, सेन्धानमक आदि प्रमुख द्रव्यों से युक्त खल ( कैटर्य खल ) जाठराग्नि को बढ़ानेवाला हैं। अर्थात् पूर्वोक्त खल में व्योष आदि द्रव्यों को मिला देने से इसे कैटर्यखल कहते हैं और यह जाठराग्निवर्द्धक है ॥१५८॥

### विशिष्टखलनिर्माणविधिर्गुणाश्च

मरिचं लशुनं चैवं निर्गुण्डी वैजयन्तिका।
कर्णमालाग्निकाचूतजीरकाहिंगु सैन्धवान् ॥ १५९ ॥
पेषयित्वा यथामात्रमेतान् तक्रेण लोडयेत्।
आलोडितं पुनः कल्कं जालिन्या च विशोधयेत् ॥ १६० ॥



प्रवणीभाण्डमारोप्य चुल्यां तं च प्रदापयेत्।
निक्षिप्य गोघृतं तत्र नयेत्तस्मिन् प्रमाणवित् ॥ १६१ ॥
लशुनाजाजिसिद्धार्थं हिंगुपर्पटमेथिकान्।
भर्जयित्वा क्षिपेत्तत्र खलं तक्रविमिश्रितम् ॥ १६२ ॥
तन्मुखञ्च पिधानेन संछाद्य विपचेद्बुधः।
यादृशं खलमादाय प्रदद्यात्प्रबोधने दिने ॥ १६३ ॥
खलोऽयं साधितः सम्यक् वातश्लेष्मविनाशकः।
उष्णं वीर्यकरं सम्यक् दीपनाग्निकरं शुभम् ॥ १६४ ॥

**विशिष्ट 'खल' बनाने की विधि तथा गुण**—काली मरिच, लहसुन, निर्गुण्डी-बीज, वैजयन्तिका ( गनियारी ), कर्णमाला ( नील कमल ), अग्निका ( चित्रक ) चूत ( आम की गुठली ), जीरा, हींग तथा सेन्धानमक इन सबको पीसकर उचित मात्रा में तक्र के साथ मिला दे। पुनः मिलाये हुए कल्क को चलनी से छान ले। इसके बाद प्रवणी भाण्ड ( बटलोही या मिट्टी की हाड़ी ) को चूल्हा पर रख कर उसमें पूर्वोक्त कल्क को छोड़ दे और उसमें गाय का घी उचित मात्रा में डालकर लहसुन, जीरा, सरसो, हींग, पित्त पापड़ा तथा मेथी को भूनकर मिला दे। इसके बाद उसमें तक्र मिश्रित "खल" को छोड़ दे और उसका मुँह ढक्कन से बन्द कर बुद्धिमान् पाचक पकाये। तैयार हो जाने पर एक चौथाई ( एक तोला = दस मि० ली० ) खल प्रातःकाल पीने के लिये दे। यह अच्छी तरह बनाया हुआ खल वात-कफ को नाश करने वाला है। यह उष्ण है तथा अच्छी तरह वीर्यवर्द्धक है और जाठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला है ॥ १५९-१६४ ॥

### सितकुलित्थरसनिर्माणविधिर्गुणाश्च

रसं शीतकुलित्थोत्थं लशुनामरिचान्वितम्।
रामठं सैन्धवं तत्र निविशेन्मानवः पुनः ॥ १६५ ॥
प्रदद्याद्वासितं पुष्पैः कर्पूराद्यैश्च सूदराट्।
रसं शीतकुलित्थोत्थं समस्तामयहृत्तथा ॥ १६६ ॥
क्षुत्कृत् हृत्परमं स्वादु परमात्मसुहृत्पुनः ॥ १६७ ॥

**सफेद कुरथी का रस बनाने की विधि तथा गुण**—सफेद कुरथी का रस लेकर उसमें लहसुन तथा मरिच का चूर्ण मिला दे और पुनः पाचक उसमें हींग तथा सेन्धा-नमक छोड़ दे। इसके बाद उत्तम पाचक पुष्प तथा कर्पूर आदि से सुवासित कुरथी के रस को पान करने के लिये दे। यह सितकुलित्थोत्थरस सम्पूर्ण रोगों को

दूर करनेवाला है तथा भूख को बढ़ाने वाला, हृदय के लिये हितकर, स्वादिष्ट एवं आत्मा को अच्छी तरह प्रसन्न करनेवाला है ॥ १६५-१६७ ॥

## असित कुलित्थररसनिर्माणविधिर्गुणाश्च

सितेतरकुलित्थस्य रसमादायसूदराट् ।
क्षिपेन्मरिचलसुनरामठानलसैन्धवान् ॥ १६८ ॥
दापयेद्वासितं द्रव्यैरधिवास्य सुगन्धिभिः ।
मरुद्दोषहरं सम्यक् श्लेष्मजिद्वातशोषणम् ॥ १६९ ॥

**कृष्णकुरथीरस बनाने की विधि तथा गुण**—उत्तम पाचक कृष्णकुरथी का रस लेकर उसमें मरिच, लहसुन, हींग, चित्रक तथा सेन्धा नमक को ( उचित मात्रा में ) छोड़ दे और सुगन्धित द्रव्यों से अधिवासित कर सुगन्धित बना ले और पान करने के लिये दे। यह अच्छी तरह वात-विकार को दूर करता है, कफ विकार को जीत लेता है तथा वात रोग का शोषण करता है ॥१६८-१६९॥

## खलस्य ( निर्मित खलद्रव्यस्य ) प्रशस्तिः

समन्वितः सौम्यगुणैः खलोऽयं समीरणं कायगतं निहन्ति ।
समस्तधातूत्थितरोगराशिं शमं नयेल्लोकहितार्थभाक् सः ॥ १७० ॥

**निर्मितखलपदार्थ की प्रशंसा**—सौम्य गुणों से युक्त यह खलपदार्थ शरीरस्थ वात-विकार को नाश करता है। सभी धातुओं से उत्पन्न रोगसमूह को शान्त करता है और यह सभी लोगों के लिये हित करने वाला है ॥ १७० ॥

## नवगव्यनवनीतनिर्माणविधिर्गुणाश्च

अर्द्धाविशेषं दुग्धोत्थदधिनिर्मथनोद्भवम् ।
नवनीतं नवं गव्यं लघु पित्तहरं शुभम् ॥ १७१ ॥
दशकृत्वा प्रक्षालयित्वा तक्रेण च मुहुर्मुहुः ।
तदादाय पुनः सूदः शोधयेत्सूक्ष्मवाससा ॥ १७२ ॥
द्विवारमेकवारं वा क्षालयेद्वारिणा पुनः ।
निधाय वासिते शुभ्रे पूगपट्टस्य लोचने ॥ १७३ ॥
सुगन्धपुष्पैर्बहुभिस्तद्द्रव्यमधिवासयेत् ।
वेष्टयित्वा पुनस्तच्च निक्षिपेच्च जले घटे ॥ १७४ ॥
इदमित्थं साधयित्वा नवनीतं सदार्पयेत् ॥ १७५ ॥
नवनीतमिदं द्रव्यं वृष्यं व्याधिविनाशनम् ।
कान्तिदं पुष्टिदं सम्यग् ज्ञानेन्द्रियबलप्रदम् ॥ १७६ ॥



**नवीन गाय का मक्खन बनाने की विधि तथा गुण**—गाय का आधा दूध जलाकर पकाये दूध के दही से मथकर निकाला हुआ नवीन मक्खन हल्का तथा अच्छी तरह पित्तहर होता है। ऐसे गाय के नवीन नवनीत को लेकर बारबार मट्ठा से दश बार धोकर पुनः उस मक्खन को पाचक लेकर महीन छिद्रवाले वस्त्र से छान ले। पुनः दो बार या एक बार जल से प्रक्षालन कर ले। इसके बाद स्वच्छ पूगपट्ट के सुवासित पात्र में रक्खे तथा सुगन्धित अनेक पुष्पों से नवनीत को सुगन्धित करे। पुनः उसको लपेट कर जल पूर्ण घड़े में रखदे। इस प्रकार बनाये हुए इस नवनीत को हमेशा खाने के लिये अर्पण करे। यह नवतीत ( मक्खन ) वीर्यवर्द्धक तथा रोगनाशक होता है और शरीर का सौन्दर्य बढ़ानेवाला अच्छी तरह पुष्टिकारक तथा ज्ञानेन्द्रियों को बल देनेवाला है ॥ १७१–१७६ ॥

## महिषीनवनीतनिर्माणविधिर्गुणाश्च

अनेनैव प्रकारेण माहिषं नवनीतकम् ।
चालनं शोधनं सम्यक् कुर्याद्वै वासनां पुनः ॥ १७७ ॥
एवं माहिषसम्भूतं कृत्वा तच्च प्रदापयेत् ॥ १७८ ॥

**भैंस के दही का नवनीत बनाने की विधि तथा गुण**—गाय के नवनीत के समान भैंस का नवनीत निकाल ले और उसी प्रकार प्रक्षालन कर सूक्ष्म वस्त्र से छान ले तथा सुगन्धित द्रव्यों से सुवासित कर ले। इस प्रकार भैंस के दही का नवनीत बना कर खाने के लिये दे। ( इसका गुण गाय के नवनीत के समान ही समझना चाहिए किन्तु यह कुछ अधिक वीर्यवर्द्धक होता है। ) ॥१७७-१७८॥

## पुराणनवनीतस्य दोषाः

पुराणं नवतीतं यदभक्ष्यमशुभप्रदम् ।
बुद्धिजाड्यकरं तच्च निन्दितं व्याधिकृद्भवेत् ॥ १७९ ॥
निष्ठीवनं पुनः श्लेष्महिक्कादीन् वर्द्धयेच्च तत् ।
अतोऽभक्ष्यमिदं त्याज्यं नवनीतं चिरोत्थितम् ॥ १८० ॥

**पुराण नवनीत के दोष**—पुराना नवनीत अभक्ष्य तथा हानिकारक होता है। वह बुद्धि को कुण्ठित करता है, निन्दित है तथा रोगकारक होता है। यह निष्ठीवन( उबकाई ) कराता है तथा कफरोग एवं हिचकी आदि को बढ़ाता है। अतः पुराना निकाला हुआ नवनीत अभक्ष्य है। इसका सेवन नहीं करना चाहिए।

## गोघृतनिर्माणविधिर्गुणाश्च

नवनीतं सितं सम्यक् शोधितं पीतवर्णकम् ।
एकस्मिन्निक्षिपेद्भाण्डे गव्यं तद्वासरोद्भवम् ॥ १८१ ॥

चुल्यामारोपयेद्विद्वान् तापयेन्मृदुवह्निना ।
तदीषद्द्रव्यसंयुक्तं जालिन्या च विशोधयेत् ॥ १८२ ॥
शोधितं तत्पचेत्सम्यगवघट्टनपूर्वकम् ।
बुद्बुदेषु विलीनेषु रक्तवर्णं प्रदापयेत् ॥ १८३ ॥
सौरभ्यं निक्षिपेत्तत्र किञ्चिद्गोधूमचूर्णकम् ।
तदावलोक्य सूदस्तु तद्घृतं चावतारयेत् ॥ १८४ ॥
न्यसेत्तत्र च तक्राक्तताम्बूलीकृष्णवर्णकम् ।
घनसारादिना सूदो वासयेत् सर्पिरुत्तमम् ॥ १८५ ॥
इदमाज्यं नवं पूज्य प्रदद्याद्भोजनार्थिने ।
अत्र भोजनवेलायां प्रदद्याद्द्रवपूर्वकम् ॥ १८६ ॥
ईषद्घनीकृतं सर्पिर्देयात्पायसभोजने ।
भक्ष्यादिभक्षणे काले घृतं दद्याद् घनीकृतम् ॥ १८७ ॥
वातपित्तप्रशमनं सुरभि स्वादु बृंहणम् ।
धातुप्रसाधनं शीतं विपाकि मधुरावहम् ॥ १८८ ॥
माङ्गल्यचाक्षुषं सर्पिर्गव्यं ग्रहनिवारणम् ॥ १८९ ॥

**गोघृत निर्माण विधि तथा गुण**—सफेद गाय का नवनीत लेकर पीत वर्ण होने तक अच्छी तरह शोधन करे। उसी दिन का बनाया हुआ गाय का घी चूल्हे पर रक्खे और विद्वान् पाचक मन्दाग्नि से तपाये। कुछ थोड़े द्रव्यों से संयुक्त उस घी को छननी से छान ले। इसके बाद शोधित गोघृत को कलछुल से चलाते हुए पकाये। पकाते समय बुदबुद शब्द के बन्द हो जाने पर रक्त वर्ण होने तक पकाये। उसमें सुगन्धित द्रव्य छोड़ दे और थोड़ा गेहूँ का चूर्ण भी छोड़ दे। पाचक उस घृत को परिपक्व देखकर उतार ले। तदनन्तर उसमें तक्रलिप्त ताम्बूली कृष्ण वर्ण को छोड़ दे और पाचक कर्पूर आदि से उत्तम घी को सुगन्धित बना ले और इस नवीन उत्तम घृत को भोजन करनेवालों के लिये अर्पित करे। भोजन के समय उसको गलाकर (द्रव्य रूप बनाकर दे। पावसभोजन (वर्षाकालीन) भोजन या पायस (खीर) भोजन के समय थोड़ा गाढ़ा किया घृत दे। भक्ष्य आदि पदार्थ खाने के समय गाढ़ा किया घृत दे। यह गाय का घी वात-पित्त को शान्त करनेवाला सुगन्धित, स्वादिष्ट तथा बृहण (मांसवर्द्धक) होता है और धातुओं (रसरक्तादि) धातुओं को शुद्ध करने वाला, शीतल, विपाक में मधुर, कल्याणकारक, नेत्र के लिये हितकर तथा ग्रह को दूर करनेवाला होता है।



### कुल्थादीनां विशिष्टपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

तानि तेभ्यः समादाय त्वचं दग्धां समुद्धरेत् ।
भाजने राजते तानि कल्कं कुर्यात् प्रयत्नतः ॥ १९० ॥
घनसारादिभिर्भूयः सूदस्तान्यधिवासयेत् ।
सैन्धवादीन् न्यसेत्तस्मिन् लशुनार्द्रकयोः कणान् ॥ १९१ ॥
कणेषु भर्जितेष्वेवं कुष्माण्डवटकोद्भवान् ।
सर्पिषा सह निक्षिप्य कुर्यादङ्गारधूपनम् ॥ १९२ ॥
फलाकाराणि कुर्वीत कल्केऽस्मिन् बहुलः सुधीः ।
तत्तदाकाररूपेण भर्जयेत्खर्परैर्घृतैः ॥ १९३ ॥
भर्जितानि पुनस्तानि रक्षयेन्मक्षिकादिभिः ।
ततो भाण्डेषु कुर्वीत सम्भारांश्च पृथक् पृथक् ॥ १९४ ॥
सम्भाराणि पुनस्तानि फलाकाराणि निक्षिपेत् ।
तानि भाण्डेषु तप्तेषु भर्जयेद्रामठादिभिः ॥ १९५ ॥
घनसारादिभिर्भूयः सूदस्तान्यधिवासयेत् ।
पुनश्च तानि बध्नीयात् पूगपट्टेषु सूदराट् ॥ १९६ ॥
निक्षिप्य तानि सर्वाणि अन्तराट्टालकेष्वपि ।
भोजनावसरे प्राप्ते भोक्तृष्वेतानि दापयेत् ॥ १९७ ॥
भवन्ति बहवः शाखाः वस्तुनैकेन संयताः ।
सूदस्य हस्तवैचित्र्यात् तद्बुद्धिविभवात्ततः ॥ १९८ ॥
घ्नन्ति सर्वामयानेते शाकभेदाः सुखावहाः ।
वातपित्तप्रशमनाः साधुकल्पाः शुभावहाः ॥ १९९ ॥

**कुलथी, उड़द आदि शिम्बीधान्यों की विशिष्टपाकनिर्माणविधि तथा गुण**—पूर्वोक्त कुलथी उड़द, आदि शिम्बी धान्यों में से लेकर पके छिलकों को निकाल दे और उसे चाँदी के पात्र में कल्क बनावें। इसके बाद पाचक कर्पूर आदि से सुवासित कर ले। पुनः सेन्धा नमक तथा लहसुन एवं अदरक के टुकड़ों को छोड़ दे। पूर्वोक्त प्रकार से कणों के भुन जाने पर कुष्माण्ड वटक (कोहणवरी) को घी के साथ छोड़कर छौंक दे। पुनः उस कल्क में अनेक प्रकार से बहुत फल के आकार का बना ले और पूर्वोक्त आकार के रूप में ही कड़ाही में घृत डालकर भून ले। इस भूने हुए व्यञ्जन को मक्खी आदि से सुरक्षित रखे। इसके बाद अलग-अलग पात्रों में सम्भार (भूने हुए पदार्थ) को रखकर तथा पुनः उसको फलाकार बनाकर संतप्त भाण्ड में हींग आदि के साथ भूने तथा कर्पूर, कस्तूरी आदि से सुवासित कर ले। तदनन्तर पाचक पूगपट्ट नेत्र में उनको बांध कर तथा अट्टालिका

के अन्दर रखकर भोजन के समय भोजन करनेवाले को दे। उसके एक ही पदार्थ से अन्य पदार्थों का संयोग होने पर बहुत सी शाखायें होती हैं। यह पाचक के हस्तकौशल एवं उसके बुद्धिवैभव के ऊपर निर्भर करता है कि एक ही पदार्थ से अनेक प्रकार के भोज्य शाक पदार्थों का निर्माण कर ले। ये शाक के प्रकार सभी रोगों को नष्ट करते हैं तथा सुख को देनेवाले हैं। ये उत्तम कल्प वात-पित्त को शान्त करने वाले तथा कल्याणकारक हैं ॥ १९०-१९९ ॥

## रम्भाफलशाक निर्माणविधिर्गुणाश्च

वद्धरम्भाफलं रम्यं स्निग्धं स्थूलं सुदीर्घकम्।
तदादाय पुनः छिन्द्यात् मूलमग्रं त्वचं पुनः ॥ २०० ॥
पुनश्च कल्कनीकोट्या भिन्नं कुर्वीत तद्विधा।
त्रिधा वापि चतुर्धा वा च्छिन्द्यात्तिर्यक् च तत्पुनः ॥ २०१ ॥
प्रक्षाल्य प्रवणीभाण्डे निक्षिपेद् वारिणा च तान्।
साधु मुद्गं यथायोग्यं प्रक्षिपेत्तत्र वारि च ॥ २०२ ॥
चुल्यामारोप्य तद्भाण्डे पचेत्तद्वह्निना बुधः।
अवतीर्य ततो रम्भाफलं पक्वं सुशोभनम् ॥ २०३ ॥
सितञ्च तत्र चूर्णञ्च मरीचिश्च विनिक्षिपेत्।
प्रताप्य प्रवणीभाण्डमपरं सूदराट् ततः ॥ २०४ ॥
सिञ्चेत्तत्र नवं सर्पीरामठं तत्र निक्षिपेत्।
घट्टयेद्द्रावपेत्तप्ते द्रव्यं सूदः पुनः पुनः ॥ २०५ ॥
तथैव तत्फलं तत्र निक्षिपेत्तत्प्रमाणवित्।
छादयेत्तन्मुखं तस्य पिधानेन प्रयत्नतः ॥ २०६ ॥
उत्क्षेपणमपक्षेपं कुर्यादन्तश्च तत्फलम्।
प्रतप्तं पाकमालोक्य वासयेत्तत्फलं ततः ॥ २०७ ॥
निक्षिपेद्वासितैः पुष्पैः पट्टपूगस्य तद्बुधः।
कर्पूरप्रमुखैर्दिव्यैस्तत्पुनश्चाधिवासयेत् ॥ २०८ ॥
शैत्यं माभूत्ततस्तस्य उष्णत्वस्यानिवृत्तये।
अन्तराट्टालके तच्च निक्षिपेत्किञ्चिदुष्णके ॥ २०९ ॥
दापयेद्भोजने काले तदादाय सुबुद्धिमान्।
पित्तारुचिप्रशमनं मेध्यं स्वादुतरं महत्।
देहसारमिदं पथ्यमिन्द्रियाणां बलप्रदम् ॥ २१० ॥

**केला का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—गठा हुआ सुन्दर, स्निग्ध,



स्थूल तथा बड़ा केला का फल लेकर उसके मूल भाग, अग्रभाग तथा छिलका को काटकर निकाल दे और चाकू से दो भाग कर दे। अथवा तीन भाग या चार भाग तिरछा काटे। इसके बाद उनका प्रक्षालन कर प्रवणी भाण्ड, ( बटलोही ) में जल के साथ छोड़ दे। स्वच्छ एवं साफ मूँग की दाल तथा जल उसमें छोड़ दे। तदनन्तर उस पात्र को चूल्हा पर रखकर बुद्धिमान् पाचक आग से पकावे। इसके बाद अच्छी तरह पके हुए केला के फल को उतार कर उसमें मिस्री तथा मरिच का चूर्ण छोड़ दे और-बार बार पाचक दूसरे बटलोही को गरम कर उसमें नवीन घी तथा हींग का तड़का देकर उस केला के परिपक्व फल को छोड़ दे। इसके बाद गरम रहते ही उसको कलछुल से घोटे और पतला बना ले।

पूर्वोक्त प्रकार से केला के फल को उसके प्रमाण को जानने वाला पाचक भाण्ड में छोड़ दे और ढक्कन से उसे ढक दे। उत्क्षेपण एवं अपक्षेपण ( झोंककर ) के द्वारा उस फल को ऊपर-नीचे कर दे। पाक हो जाने पर सुगन्धित द्रव्यों से सुगन्धित कर ले। इसके बाद पूगपट्ट में रखे तथा सुगन्धित कर्पूर आदि दिव्य द्रव्यों से आधिवासित कर ले। ठंडा न हो जाय तथा उसकी गर्मी बनी रहे इसके लिये थोड़ा गरम अन्दर की अट्टालिका ( रेफ्रीजेटर ) में रखे और बुद्धिमान पाचक उसमें से निकालकर भोजन के समय पर दे। यह पित्त विकार तथा अरुचि को शान्त करता है, मेधा के लिये हितकर है तथा बहुत स्वादिष्ट होता है। यह शरीर के ओज को बढ़ाता है, पथ्य है तथा इन्द्रियों को बल देनेवाला है ॥

## कदलीस्तम्भशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

राजरम्भान्तरागर्भमादाय त्वचमुत्सृजेत्।
तन्मूलाग्रे ततश्छित्वा दात्रेण विसृजेद् बुधः ॥ २११ ॥
करवीरदलाकारं कृतं तत्तत्प्रदापयेत्।
मध्यदण्डं समादाय छिन्द्यात्तण्डुलवत्पुनः ॥ २१२ ॥
दण्डमन्यं पुनश्छिन्द्यात् कणावत्तण्डुलस्य च।
चणकाकारवच्छिन्द्यात् दण्डमन्यं सुबुद्धिमान् ॥ २१३ ॥
चक्राकारं च कुर्वीत स्तम्भरम्भातरूद्भवम्।
निक्षिपेत्प्रवणीभाण्डेष्वेतान् विद्वान् पृथक् पृथक् ॥ २१४ ॥
सैन्धवं तेषु निक्षिप्य शोभार्थं रजनीं क्षिपेत्।
जम्बीराम्लं च निक्षिप्य पचेत्तान् वह्निना ततः ॥ २१५ ॥
सम्भारादीन् विनिक्षिप्य भर्जयित्वावतारयेत्।
पूगपट्टेषु निक्षिप्य वासयेत्पूर्ववच्च तान् ॥ २१६ ॥

कृत्वा तु पोटलीं विद्वान् अन्तराट्टालके न्यसेत् ।
प्रदद्याद्भोजने काले रम्भास्तम्भाननुत्तमान् ॥ २१७ ॥
लघून् स्वादुतरान् रुच्यान् पवित्रान् पित्तनाशनान् ॥ २१८ ॥

**कदली स्तम्भ के अन्तगर्भ का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—कदली खम्भ के अन्दर के भाग को लेकर उसकी त्वचा को फेंक दे और उसके मूलभाग तथा अग्रभाग को बुद्धिमान् पाचक चाकू से काटकर करवीर ( कनेर ) के पत्ते के आकार का बनाकर रख ले। उसके बीच का दण्ड लेकर चावल के आकार को काट ले। दूसरे दण्ड को लेकर चावल के कण के आकार का काट ले। बुद्धिमान् पाचक कुछ अन्य दण्ड को लेकर चने के आकार का काट ले और कुछ दण्ड को चक्राकार काट कर बना ले। इसके बाद उन सबों को अलग बटलोही में रखे और उसमें सेन्धानमक छोड़कर सुन्दरता के लिये हलदी का चूर्ण छोड़ दे। तदनन्तर जम्बीरी नीबू का रस छोड़कर उनको आग पर पकावे। इसके बाद घी, हींग का तड़का तथा गरम मसाला आदि छोड़कर तथा भूनकर उतार ले। उतारने के बाद पूगपट्ट में रखकर उनको पूर्ववत् सुगन्धित पुष्प, कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों से सुवासित कर ले और उनकी पोटली बनाकर अन्तराट्टालक ( रेफ्रीजेटर ) में रखे। इस उत्तम रम्भास्तम्भ के अन्तगर्भ का शाक भोजन के समय दे। यह शाक हल्का, स्वादिष्ट, रुचिकर, पवित्र तथा पित्तनाशक है ॥ २११-२१८ ॥

### वृन्ताकशाकनिर्माणविधिगुणाश्च

बालं तरुणमानीय वृन्ताकं सुमनोहरम् ।
वृन्ताग्रं विसृजेच्छित्वा कल्किन्या तीव्रधारया ॥ २१९ ॥
पुनश्च तत्फलं द्वेधा भिन्नं कृत्वा सुबुद्धिमान् ।
सजले निक्षिपेद् भाण्डे बृहत्या सदृशं फलम् ॥ २२० ॥
सिञ्चेदपो निशाभाण्डे निक्षिपेदपरे कटुम् ।
रामठं तत्र कैटर्यं धान्याकं च विनिक्षिपेत् ॥ २२१ ॥
पुनश्च निक्षिपेत्तत्र लशुनार्द्रकयोः कणान् ।
एतस्य मेलनं कृत्वा पचेच्चुल्यां विचक्षणः ॥ २२२ ॥
बृहतीफलभिन्नानि निक्षिपेत् तप्तवारिणि ।
आदाय तानि पक्वानि निक्षिपेद्भाजने शुभे ॥ २२३ ॥
सम्भारैर्मरिचादीनां कल्कं कुर्याद् विधानतः ।
चिञ्चापक्वफलाम्लेन दध्ना कल्कं विलोडयेत् ॥ २२४ ॥



कुर्यात् कल्केन तेषाञ्च लेपनं बहिरन्ततः ।
भर्जयेत्तानि लिप्तानि गोघृतेनाथ सूदवित् ॥ २२५ ॥
अवतार्य पुनस्तानि कर्पूरेणाथ वासयेत् ।
शुचौ तु पूगपट्टस्य नेत्रे तानि समादिशेत् ॥ २२६ ॥
ततश्च पोटलीं कृत्वा तप्ते सर्पिषि निक्षिपेत् ॥ २२७ ॥
स्वादु बृष्यं रुचिकरं त्रिदोषशमनं परम् ।
इदं बृहत्यास्तरुणं फलं पुष्टिविवर्द्धनम् ॥ २२८ ॥

**वृन्ताक ( बैंगन ) का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—बाल तरुण ( थोड़े दिन का उत्पन्न हुआ ) सुन्दर बैंगन लेकर तीक्ष्णधार वाले चाकू से बैंगन के अग्रभाग ( भेंटी ) को काटकर फेंक दे। फिर बुद्धिमान् पाचक बैंगन फलके दो टुकड़े कर जल वाले पात्र में छोड़ दे। बृहती ( गोल बैंगन ) के समान फल को काटकर हल्दी के पात्र में रखकर जल से सींचे और दूसरे पात्र में रख कर सोंठ के साथ जल से सींचे। इसके बाद उसमें हींग, कैटर्य ( कायफल ) तथा धनियाँ का चूर्ण छोड दे। फिर उसमें लहसुन तथा अदरक के टुकड़ों को छोड़ दे और इन सबों को एक में मिलाकर चूल्ही पर रखकर पकावे। बृहती फल ( बैंगन ) को टुकड़ा-टुकड़ा काटकर गरम जल में छोड़कर उन पके फलों को लेकर स्वच्छ पात्र में रखे। इसके बाद मरिच, धनियाँ, जीरा आदि मसालों का विधिपूर्वक कल्क बनावे और इमली के पके फल की खटाई तथा दही में कल्क को मिला दे। इसके बाद इस कल्क से बैंगन के टुकड़ों को बाहर-भीतर लेप कर दे तथा पाकशास्त्र को जानने वाला पाचक उन कल्कलिप्त बैंगन के टुकड़ों को गाय के घी के साथ भून ले। पुनः उसको उतार कर कपूर से सुगन्धित बना ले और पुनः स्वच्छ पूगपट्ट के नेत्र ( फोंफी ) में भर दे। इसके बाद पोटली बनाकर संतप्त घी में छोड़ दे और उसमें से निकाल कर खाने को दे। यह शाक स्वादिष्ट, वीर्यवर्द्धक, रुचिकारक तथा अच्छी तरह त्रिदोषशामकहै। यह परिपुष्ट बैंगन का फल पुष्टिवर्द्धक होता है ॥ २१९-२२८ ॥

### बृहती फलस्यान्यविधशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

तिन्तिडीचूतफलयोर्भाण्डे कुर्याच्च मेलनम् ।
कुम्भीं कुस्तुम्बरीं तत्र निक्षिपेत्सल्लकीफलम् ॥ २२९ ॥
सैन्धवादींस्तु निक्षिप्य भर्जयेद्रामठादिभिः ।
घनसारादिना सम्यक् तत्पुनश्चाधिवासयेत् ॥ २३० ॥

बध्नीयाद्भर्जितं नेत्रे पूगपट्टस्य तत्फलम् ।
पूर्ववन्निक्षिपेद्विद्वान् तप्ते सर्पिषि तत्फलम् ॥ २३१ ॥
पित्तश्लेष्मप्रशमनं बृहत्यास्तरुणं फलम् ।
शरीरबलकृद्वृष्यं धातुवृद्धिकरं परम् ॥ २३२ ॥

**बैंगन (गोल बैंगन) का दूसरे प्रकार से शाक बनाने की विधि तथा गुण**—पूर्वोक्त प्रकार से बैंगन को काटकर गरम पानी में छोड़कर निकाल ले और स्वच्छ पात्र में रक्खे। इसके बाद बैंगन फल के पात्र में इमली तथा आम के फल को मिला दे और कुम्भी, कुस्तुम्बुरी तथा सल्लकीफल ( सलईफल ) छोड़ दे। तदनन्तर सेन्धानमक, जीरा आदि मिलाकर हींग का तड़का देकर घी में भून ले और कर्पूर आदि से अच्छी तरह पुनः सुगन्धित बना ले। इसके बाद भर्जित बैंगनफल को पूगपट्ट के नेत्र में बाँधे तथा पूर्ववत् संतप्तघृत में छोड़कर विद्वान् पाचक पका ले। यह तरुण बृहतीफल ( गोल बैंगन ) का शाक पित्त एवं कफ को शान्त करने वाला, शरीरबलकारक, वीर्यवर्द्धक तथा रस-रक्तादिधातुओं को अच्छी तरह बढ़ाने वाला है ॥ २२९-२३२ ॥

## विशिष्टप्रकारेण बृहतीशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

फलं बृहत्यास्तरुणं संवृतं धारयेद् द्विधा ।
वेष्टयेदार्द्रवस्त्रेण भागमेकं तयोर्बुधः ॥ २३३ ॥
भाण्डे चेदिदमपरं भागं चुल्याम्पचेत्पुनः ।
पाकावसानपर्यन्तमन्यस्य जलमाविशेत् ॥ २३४ ॥
पक्वञ्च वेष्टयेद्भागमपक्वं पूगनेत्रयोः ।
इदञ्च निक्षिपेद्विद्वान् तप्तसर्पिषि पूर्ववत् ॥ २३५ ॥
बृहत्याः फलभागस्य चित्रपाकः प्रदर्शितः ।
पाकं पादसमायुक्तं भागद्वयसमन्वितम् ॥ २३६ ॥
भोजनावसरे प्राप्ते प्रदद्याद् बृहती फलम् ॥ २३७ ॥

**विशिष्टप्रकार से बृहतीफलचित्रपाक बनाने की विधि तथा गुण**—बैगन के तरुण फल को दो प्रकार से ग्रहण करे। उन दोनों में से एक भागको आर्द्रवस्त्र से वेष्टित कर दे और भाण्ड ( पात्र ) में रखकर पकाये तथा दूसरे भाग को चूल्हे में पकाये। दूसरे भाग का जल पाक होने तक गिरने दे। इसके बाद पूगपट्ट के दो नेत्रों में पक्व तथा अपक्व भाग को वेष्टित कर दे। तदनन्तर विद्वान् पाचक संतप्त घी में पूर्ववत् छोड़कर पका लें। यह बैगन के फल भाग का चित्रपाक प्रदर्शित किया गया। बैगन के पूर्वोक्त पाक के चौथाई भाग के साथ दो भाग बैगन फल को मिलाकर भोजन के समय प्रदान करे ॥ २३३-२३७ ॥



## पनसफलस्य शाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

पनसस्य फलं रम्यं तरुणं कोमलं सह ।
आनीय विसृजेच्छित्वा कण्टकांश्च बहिःस्थितान् ॥ २३८ ॥
पुनस्तद्बहुधा छिन्द्यात्खण्डं खण्डस्थितं त्यजेत् ।
पाकार्थं तत्पुनः छित्वा प्रवणीभाण्डमाविशेत् ॥ २३९ ॥
निशारामठकैटर्यधान्यकांस्तत्र निक्षिपेत् ।
पनसस्य फलान्यप्सु पचेद्भिन्नानि तैः सह ॥ २४० ॥
नीरसं विसृजेत्तानि समादायाऽथवा सह ।
समादाय पुनस्तेषां कानिचित्च्छकलानि च ॥ २४१ ॥
कुर्यात्सूक्ष्मं च दीर्घं च शस्त्रेण च विचक्षणः ।
कल्कं च मरिचादीनाञ्जम्बीराम्लेन मेलयेत् ।
कल्केन लेपयेत्तानि भर्जयेत्सर्पिषा पुनः ॥ २४२ ॥
यदा कुङ्कुमकान्तेयं तदा तान्यवतारयेत् ।
कर्पूरं मृगनाभि च कुङ्कुमं हिमवारि च ॥ २४३ ॥
मातुलुङ्गदलच्छेदान् केतकीकुसुमानि च ।
कुम्भीं कुस्तुम्बुरीं तत्र सर्वाण्येतानि निक्षिपेत् ॥ २४४ ॥
नेत्रेण पूगपट्टस्य वेष्टयेत् सूदराट् पुनः ।
पोटलीं वेष्टितां पूर्णां तप्ते सर्पिषि निक्षिपेत् ॥ २४५ ॥
लघु पित्तहरं वृष्यं वातघ्नं च बलप्रदम् ।
दीपनं पाचनं रुच्यं पनसस्य फलन्त्विदम् ॥ २४६ ॥

**कटहल फल का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—कटहल के सुन्दर कोमल तथा तरुण फल को लेकर उसके बाहर के कण्टकदार छिलकों को काटकर फेंक दे। फिर उसके अनेक टुकड़े बनाकर खण्ड रूप में स्थित टुकड़ों को निकाल दे। इसके बाद पाक करने योग्य खण्ड को पुनः काटकर बटलोही में रक्खे और हल्दी, हींग, कैटर्य ( कायफर ) तथा धनियाँ को उसमें छोड़ दें। पूर्वोक्त द्रव्यों के साथ पूर्वोक्त प्रकार से कटे हुए कटहल के फल को जल में पकाये। नीरस भाग उन सबों के साथ लेकर छोड़ दें। पुनः बुद्धिमान् पाचक उनके कुछ टुकड़ों को लेकर शस्त्र से काटकर छोटा तथा बड़ा टुकड़ा बनाये और मरिच, जीरा आदि के कल्क एवं जम्बिरी नींबू का अम्ल मिला दे। पुनः उस कल्क से कटहल के टुकड़ों को

लिप्त कर दे तथा घी के साथ भूने। जब केशर के वर्ण का हो जाय तब उतार ले। इसके बाद उसमें कर्पूर, कस्तूरी, केशर, शीतल जल, नींबू के दल के टुकड़े, केवड़ा का फूल, कुम्भी तथा कुस्तुम्बुरी इन सबों को छोड़ दे। इसके बाद उत्तम पाचक पूगपट्ट के नेत्र से वेष्टित कर दे और अच्छी तरह वेष्टित पोटली को संतप्त घी में छोड़ दे। तदनन्तर उनमें से निकाल कर खाने को दे। यह कटहल फल का शाक हल्का होता है और पित्त को दूर करने वाला, वीर्यवर्द्धक, वातनाशक, बलप्रद, जाठराग्निदीपक, पाचक तथा रुचिकारक होता है ॥ २३८–२४६ ॥

### प्रकारान्तरेण पनसशाकनिर्माणविधिः

शकलानि सुपक्वानि समादायाथ कानिचित्।
पूर्ववच्छेदनं कुर्यात् सम्भारादींश्च पूर्ववत् ॥ २४७ ॥
सितखण्डान् पुनस्तत्र चिञ्चाम्लेन समङ्क्षिपेत्।
भर्जयेत् पूववत्तानि रामठाद्यं च सूदराट् ॥ २४८ ॥
घनसारादिना सम्यक् पुनस्तान्यधिवासयेत्।
नेत्रेण वेष्टयेत्तानि पूगपट्टस्य बुद्धिमान् ॥ २४९ ॥
पूर्ववत् पोटलीं कृत्वा तप्ते सर्पिषि निक्षिपेत्।
प्राप्ते भोजनकाले तु प्रदद्याद्भोजनार्थिने ॥ २५० ॥

**अन्य प्रकार से कटहल का शाक बनाने की विधि**—अच्छी तरह परिपक्व कटहल के कुछ टुकड़ों को लेकर पूर्ववत् काट ले और सम्भार (हल्दी, हींग, मसाला आदि) पूर्ववत् मिला दे। पुनः उसमें शक्कर को इमली की खटाई के साथ छोड़ दे। इसके बाद उत्तम पाचक पूर्ववत् घी तथा हींग के साथ भून ले। पुनः कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों से उनको सुवासित कर ले। इसके बाद पूगपट्ट के नेत्र से उनको वेष्टित करे और पूर्ववत् पोटली बनाकर संतप्त घृत में छोड़ दे। तदनन्तर भोजन के समय खानेवाले को दे ॥ २४७–२५० ॥

### पनसस्यान्यमिष्टपाकनिर्माणप्रकारो गुणाश्च

शर्कराखण्डयुक्तानि फलानि पनसस्य च।
दर्शनाय विधिः केषामुच्यते सविशेषतः ॥ २५१ ॥
कानिचिच्छकलान्यस्य आदाय च्छेदयेत्पुनः।
नवेन सर्पिषा विद्वान् भर्जयेत्तानि बुद्धिमान् ॥ २५२ ॥
सम्भारादीन् मरिच्यादीन् कृत्वा भाण्डेऽथ मेलनम्।
क्षीरेण सह खण्डांश्च नारिकेलफलस्य च ॥ २५३ ॥



आदर्वीलेपमाशीतपूगपट्टस्य निक्षिपेत्।
मूत्रस्रावी मलस्रावी रक्तजः पित्तजस्तथा ॥ २५४ ॥

**कटहल का मीठा पाक बनाने का प्रकार तथा गुण**—शक्कर से युक्त कटहल के फलों को दिखाने के लिए कुछ पाक-निर्माण की विधि विशेषप्रकार से कह रहे हैं। कटहल के परिपक्व कुछ टुकड़ों को लेकर पुनः छोटा-छोटा काटे और बुद्धिमान् पाचक उनको नवीन घी के साथ भून ले। इसके बाद उसमें मरिच, जीरा आदि मसाला सामग्री को पात्र में रखकर मिला दे और दूध के साथ नारियल के फल के टुकड़ों एवं शक्कर को मिलाकर पूगपट्ट में दर्वीलेप पकाये तथा शीतल होने तक छोड़ दे। इसका प्रयोग मलस्रावी, मूत्रस्रावी, रक्तज एवं पित्तज रोग में करे ॥ २५१-२५४ ॥

### निष्पावफलयुक्तपनसफलपाकप्रकारो गुणाश्च

निष्पावफलमानीय कोमलं क्रिमिवर्जितम्।
त्वचमुत्सृज्य तद्बीजं आहरेच्छोधयेद्बुधः ॥ २५५ ॥
पचेत्तत्प्रवणीभाण्डे क्षतेनैव ततः परम्।
नारिकेलफलं क्षीरं वटकान् पेषयेत्तिलान् ॥ २५६ ॥
मरीचान् सर्षपान् पिष्ट्वा कल्कं तत्र विनिक्षिपेत्।
पुनः क्षीरं समासिच्य सुगन्धञ्च निषिञ्चयेत् ॥ २५७ ॥
रामठं क्षीरमासिच्य तानि पक्वावतारयेत्।
ततश्च घनसाराद्यैः सूदस्तान्यधिवासयेत् ॥ २५८ ॥
ततस्तत्पूगपट्टेन वेष्टयित्वा प्रदापयेत्।
इदं स्वादुतरं हृद्यं कषायं गुरुपित्तकृत् ॥ २५९ ॥
वृष्यं बल्यं कफहरं समीरणविवर्धनम्।
एवं च वननिष्पावं पक्वं सम्यक् प्रदापयेत् ॥ २६० ॥
इदञ्च वननिष्पावं स्निग्धं स्वादुतरं परम्।
समीरणहरं वृष्यं पित्तश्लेष्मकरं हितम् ॥ २६१ ॥

**निष्पाव फलयुक्त कटहलफल का पाक निर्माण प्रकार तथा गुण**—बुद्धिमान् पाचक क्रिमिरहित निष्पाव (भटवांस) के कोमल फल को लेकर उसकी त्वचा को निकाल कर फेंक दे तथा उसके बीज को लेकर शोधन कर ले। इसके बाद पूर्वोक्त परिपक्व कटहल के फल को बटलोही में क्षत (खण्डित) भटवांस के साथ पकाये। इसके बाद नारियल के फल, दूध, वटक (कोहड़बरी) तथा तिल को पीसकर कल्क बना ले और मरिच एवं सरसों को भी पीसकर कल्क बना ले।

इसके बाद इन दोनों प्रकार के कल्कों को कटहल के फल में छोड़ दे। पुनः क्षीर डालकर सुगन्धित द्रव्य ( इलायची, दालचीनी आदि ) को डाल दे। पुनः उसमें हींग तथा दूध छोड़ कर उनको पक जाने पर उतार ले। इसके बाद पाचक कर्पूर, कस्तूरी आदि से सुगन्धित बना ले और पूगपट्ट से वेष्टित ( ढ़क ) कर खाने के लिये दे। यह कटहल का पाक अत्यन्त स्वादिष्ट, हृदय को बल देनेवाला, कषाय रसयुक्त, गुरु तथा पित्तकारक होता है। इनके अतिरिक्त वीर्यवर्द्धक, कफहर तथा वातवर्द्धक है। इसी प्रकार अच्छी तरह परिपक्व वन भटवांसयुक्त निर्मित कटहल के पाक को दे। यह वनभटवांसयुक्त कटहल पाक स्निग्ध, उत्तम एवं अत्यधिक स्वादिष्ट, वातनाशक, वीर्यवर्द्धक, पित्त-कफकारक तथा हितकर है॥ २५५-६१ ॥

**अलसन्दीफलपाकनिर्माणेविधिर्गुणोश्च**

सूदस्त्वेवं पचेत्सम्यक् अलसन्दीफलं ततः।
समारणकरं स्वादु कषायं कफवृद्धिकृत् ॥ २६२ ॥
विष्कम्भि रूक्षणं हृद्यं दुर्जरं वह्निमान्द्यकृत्।

**अलसन्दी[1] फलपाकनिर्माण-विधि तथा गुण**—पाचक पूर्वोक्त प्रकार से अलसन्दी ( फलविशेष ) के फल को अच्छी तरह पकावे। यह वातवर्द्धक, स्वादिष्ट, कषायरसयुक्त, कफवर्द्धक, विष्कम्भि ( विबन्धकारक ) रुक्षतावर्द्धक, हृदय के लिये हितकारक, दुष्पच तथा मन्दाग्निकारक है॥ २६३ ॥

**क्षुद्रदन्तीफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च**

ततः पचेत् क्षुद्रदन्तीफलमादाय पूर्ववत् ॥ २६३ ॥
इदं कषायं व्रणहृद् बलकृत् स्वादु पाकतः।
पित्तघ्नं मूत्रविट्स्रावि कफघ्नं विषनाशनम् ॥ २६४ ॥

**क्षुद्रदन्तीफलपाक बनाने की विधि तथा गुण**—पूर्वोक्त प्रकार से क्षुद्रदन्ती फल को लेकर पकावे। यह कषायरस वाला, व्रण को दूर करने वाला तथा स्वादु पाक होने से बलकारक होता है। इसके अतिरिक्त मूत्रस्रावी, मलस्रावी, कफनाशक तथा विषनाशक है॥ २६३-२६४ ॥

**कुर्पाटकफलपाकनिर्माणप्रकारो गुणाश्च**

एवं कुर्पाटकफलमादाय प्रपचेत्ततः।
इदमुष्मकरं तिक्तं विषघ्नं पित्तकोपनम् ॥ २६५ ॥
दीपनं लघुदं क्षीरं क्रिमिहृत् कुष्ठनाशनम्।
अपस्मारहरं रुच्यं स्रावि श्लेष्महरं तथा ॥ २६६ ॥

1. अलसन्दी फल को आजकाल क्या कहते हैं यह अन्वेषणीय है। —लेखक



**कुर्पाटक ( कुर्पासक ) फल पाक बनाने का प्रकार तथा गुण**—पूर्वोक्त प्रकार से कुर्पाटक फल को लेकर पकावे। यह उष्णकारक, तिक्तरसवाला, विषनाशक, पित्तप्रकोपक, जाठराग्निदीपक, हल्कापन लानेवाला, क्षीर ( क्षीरवर्द्धक ) क्रिमिहर तथा कुष्ठनाशक है। इनके अतिरिक्त अपस्मारहर, रुचिकारक, मल-मूत्रस्रावक तथा कफ को दूर करनेवाला है॥ २६५-२६६ ॥

**रक्तक्षुद्रबृहतीफलपाकनिर्माणप्रकारः**

रक्तक्षुद्रबृहत्याश्च फलमानीय यत्नतः।
शिलातलेन निष्पीड्य कण्टकान् विसृजेत्ततः ॥ २६७ ॥
संच्छिद्य च त्यजेच्छित्वा वृन्ताग्राणि पुनर्बुधः।
बीजानि विसृजेत्तेषां विशेषं च पुनःपुनः ॥ २६८ ॥
प्रवण्यां निक्षिपेत्तानि पुनः प्रक्षाल्य वारिणा।
जलं संसिञ्चयन्नेवं पुनस्तानि पचेद् बुधः ॥ २६९ ॥
सम्यक्पक्त्वा पुनस्तानि प्रस्राव्यान्यत्र निक्षिपेत्।
चिञ्चाम्लेन पुनस्तेषां कानिचित्कटुना पचेत् ॥ २७० ॥
तत्र मारीचचूर्णं च निक्षिपेत्तदनन्तरम्।
जीरकस्य च मेथ्याश्च चूर्णञ्चावरयेत्ततः ॥ २७१ ॥
कुम्भीं कुस्तुम्बुरीं तत्र बीजपूरफलं क्षिपेत्।
अन्यस्मिन् प्रवरे भाण्डे हिंगुना तानि भर्जयेत् ॥ २७२ ॥
अवतार्य पुनस्तानि वासयेत्कर्पूरादिभिः।
तान्येव पूगपट्टेन वेष्टयित्वा प्रदापयेत् ॥ २७३ ॥

**रक्त क्षुद्र बृहती ( लघुकटण्कारी ) फल पाक बनाने का प्रकार**—लाल छोटी कटेरी का फल प्रयत्नपूर्वक लेकर पत्थर पर पीसकर तथा काटों को काटकर फेंक दे। फल की भेंटी को काटकर निकाल दे। पुनः उनके बीजों को विशेष रूप से फेंक दें। पुनः बृहती फलों को जल से धोकर प्रवणी भाण्ड ( बटलोही ) में छोड़ दे और जल से सींचते हुए ही पकावें। अच्छी तरह पकाकर तथा छानकर दूसरे पात्र में रक्खे। पुनः उनमें से कुछ इमली के रस के साथ तथा कुछ कटु-द्रव्यों ( सोंठ, पीपर, मरिच ) के साथ पकावे। इसके बाद मरिच का चूर्ण छोड़ दे और जीरा तथा मेथी का चूर्ण भी मिला दे। तदनन्तर उसमें कुम्भी, कुस्तुम्बुरी तथा विजौरा निम्बू का फल छोड़ दे। इसके बाद उनको एक उत्तम पात्र में हींग के साथ घी में भून लें। पुनः उतार कर कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों से सुगन्धित कर दे। उन सबों को पूगपट्ट से वेष्ठित कर खाने के लिए दे॥ २६७-२७३ ॥

## रक्तक्षुद्रबृहतीफलस्यान्यपाकविधिः

ततश्च कानिचित्तेषां तदा सर्पिषि भर्जयेत् ।
ततश्च प्रवणीभाण्डे क्षीरमासिच्य यत्नतः ॥ २७४ ॥
सर्षपांश्च मरीचांश्च नारिकेलफलस्य च ।
तिलस्य कल्कमालोड्य जालिन्या तद्विशोधयेत् ॥ २७५ ॥
तत्पुनः क्वाथयित्वात्र तानि न्यस्यावतारयेत् ।
प्रक्षाल्य प्रवणीमन्यां घृतमासिच्य सूदवित् ॥ २७६ ॥
रामठञ्च विनिक्षिप्य माषस्य वटकान् क्षिपेत् ।
पर्पटस्य कणान् क्षिप्त्वा दर्व्या तानि विघट्टयेत् ॥ २७७ ॥
तत्क्वाथं तत्र निक्षिप्य सम्यक् कृत्वावतारयेत् ।
वाससा पूर्ववत् कृत्वा वेष्टयित्वावतारयेत् ॥ २७८ ॥

**लाल क्षुद्रबृहतीफल का अन्य प्रकार का पाक बनाने की विधिः**—पूर्वोक्त लाल क्षुद्र बृहतीफल में से कुछ लेकर घी में भून लें। इसके बाद प्रवणी भाण्ड ( बटलोही ) में प्रयत्नपूर्वक दूध छोड़कर सरसों, मरिच, नारियल का फल तथा तिल का कल्क मिलाकर छननी से छान ले। इसके बाद क्वाथ बनाकर उसमें उन घृतमृष्ट बृहती फल को छोड़कर उतार ले और दूसरी बटलोही को प्रक्षालन कर उसमें पाकशास्त्र को जानने वाला पाचक घृत छोड़कर हींग छोड़े तथा उड़द के वटकों को छोड़ दे और पर्पट ( पापड़ ) के टुकड़ो को छोड़कर कलछुल से घोट दे। इसके बाद पूर्वोक्त क्वाथ को उसमें छोड़कर तथा अच्छा बनाकर उतार ले। पुनः वस्त्र से पूर्ववत् बनाकर तथा वेष्टित कर उतार ले ॥ २७४-२७८ ॥

## क्षुद्रबृहतीफलपाकस्य गुणाः

पित्तघ्नं दीपनं भेदि वातघ्नं बृहतीफलम् ।
गुल्मशोथज्वरश्वासकासघ्नं वह्निदीपनम् ॥ २७९ ॥
रुच्यं पथ्यं ज्वरार्शोघ्नं स्यात्क्षुद्रबृहतीफलम् ।
सनाभफलमतनु कृमिहीनं सुकोमलम् ॥ २८० ॥
कफपित्तहरं तिक्तं समीरणहरं तथा ।
बहुकण्टफलं पक्वं सक्षीरं पित्तवर्द्धनम् ॥ २८१ ॥

**रक्त क्षुद्र बृहतीफल के पाक का गुण**—क्षुद्र बृहती फल पाक पित्तनाशक, जाठराग्निदीपक, मलभेदक तथा वातनाशक है। यह गुल्म रोग, शोथ, ज्वर, श्वासवृद्धि, तथा कास नाशक है। अग्नि दीपक, रुचिकारक, पथ्य, ज्वर तथा अर्शनाशक होता है। नाभिसहित, बड़ा, कृमिरहित तथा कोमलफल तिक्त रस-वाला, कफ-पित्त को दूर करने वाला तथा वातनाशक है। दूधयुक्त पका हुआ बहुत काँटों वाला फल पित्तवर्द्धक होता है ॥ २७९-२८१ ॥



## कटुकीफलस्य पाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

कोमलानि समादाय कटुकस्य फलानि च ।
( पूर्ववद्विपचेत्सूदो गुणधर्मं प्रवक्ष्यते )
तिक्तं हृद्यं कफहरं कुष्ठजिज्ज्वरनाशनम् ॥ २८२ ॥
कासश्वासारुचिहरं समीरणहरं तथा ।
कटुकीफलं च पक्वञ्चेत् गुरु विष्टम्भि पित्तकृत् ॥ २८३ ॥

**कटुकी-फल-पाक बनाने की विधि तथा गुण**—कटुकी का कोमल फल लेकर पूर्ववत् ( बृहती फल सदृश ) पाक करें। उसका गुण आगे कहते हैं। कटुकी फल पाक स्वाद में तिक्त, हृदय को बल देनेवाला, कफ को दूर करनेवाला, कुष्ठ रोग को जीतने वाला तथा ज्वरनाशक है। यह कास ( खांसी ), श्वास रोग अरुचि तथा वात रोग को दूर करने वाला है। पके कटुकी फल का पाक गुरु ( गरिष्ठ ) विष्टम्भि ( विबन्धकारक) तथा पित्तकारक होता है ॥ २८२-२८३ ॥

## एरण्डबालफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

एरण्डस्य फलं बालं पचेदेवं विधानतः ।
दीपनं पाचनं रुच्यं समीरणहरं परम् ॥
श्लेष्मक्रिमिहरं रुच्यं मूत्ररोगहरं तथा ॥ २८४ ॥

**बालएरण्डफल के पाक की निर्माण विधि तथा गुण**—एरण्ड ( रेड ) के बाल फल को लेकर पूर्वोक्त विधि के अनुसार पकावे। यह एरण्डफलपाक जाठराग्निदीपक, पाचक, रुचिकारक, अच्छी तरह वातशामक, कफविकार तथा क्रिमि-रोग को दूर करनेवाला, रुचिकारक तथा मूत्रविकार को नाश करनेवाला है ॥

## शिग्रुफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

ततः शिग्रुफलं रम्यं पचेदानीय पूर्ववत् ।
वासेनावेष्टनं दान पूर्ववद्धि पचेद् बुधः ॥ २८५ ॥
दीपनं वातपितघ्नं वृष्यं वर्ण्यप्रमेहजित् ।
चक्षुष्यं शुक्रदं रुच्यं बृंहणं श्लेष्मनुत्तथा ॥ २८६ ॥

**सहिजनफल की पाकनिर्माणविधि तथा गुण**—सहिजन का मनोहर (सुन्दर) फल लेकर पूर्ववत् पकावे। इसके बाद वस्त्र से आवेष्टित कर पूर्वबृहतीफलपाक के सदृश पकावे और खाने के लिये दे। यह दीपक, वात-पित्तनाशक, वीर्यवर्द्धक,

वर्णकारक, प्रेमहनाशक, नेत्र के लिये हितकर, वीर्यवर्द्धक, रुचिकारक, मांसवर्द्धक तथा कफनाशक है ।। २८५-२८६ ।।

### अगस्त्यफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

अगस्त्यस्य फलं सूदस्तरुणं कोमलं भवेत् ।
कल्किन्या तत्फलं छिन्द्यादङ्गुलीदीर्घमानतः ।। २८७ ।।
जलेन पटुना सद्रा प्रवण्यां च पचेत्ततः ।
तस्मिन् पक्वे ततः सूदस्तदादाय च वै फलम् ।। २८८ ।।
अन्यस्मिन् प्रवणीभाण्डे क्षीरमासिच्य यत्नतः ।
तिलबीजार्धपलिका नारिकेलफलोद्भवम् ।। २८९ ।।
कल्कमालोड्य तत्रैव तत्फलानि विनिक्षिपेत् ।
निक्षिपेत्क्षीरवटकान् क्षीरं च परिषेचयेत् ।। २९० ।।
प्रताप्य प्रवणीमन्यां घृतं तत्र क्षिपेन्नवम् ।
रामठञ्च विनिक्षिप्य कूष्माण्डवटकान् क्षिपेत् ।। २९१ ।।
दर्व्या विघट्य तांस्तत्र पर्यवस्य( पर्पटस्य ) कणान् क्षिपेत् ।
कृत्वा पाकं पुनः सम्यगवतार्य च तत्फलम् ।। २९२ ।।
पुनश्च घनसारेण तं पाकमधिवासयेत् ।
नेत्रेण पूगपट्टस्य वेष्टयित्वा प्रदापयेत् ।। २९३ ।।
इदं रुच्यं च वातघ्नं कफकृत् पित्तकृद्भवेत् ।
अवृष्यं रोचनं वह्निरसार्द्रं शूलका( हा )रि च ।। २९४ ।।

**अगस्त्य फल पाक बनाने की विधि तथा गुण**—पाचक अगस्त्य के तरुण एवं कोमल फल को लेकर अङ्गुली की लम्बाई के बराबर चाकू से काटे और जल के साथ तथा नमक मिलाकर वटलोही पात्र में पकावे । इसके बाद पक जाने पर पाचक उस फल को लेकर दूसरे वटलोही पात्र में लेकर तथा दूध से सींचकर प्रयत्नपूर्वक पकावे । बाद में आधा पल ( २५ ग्रा. ) तिल का कल्क तथा नारियल का कल्क मिलाकर उसीमें उस फल को छोड़ दे । तदनन्तर उसमें क्षीरवटक छोड़ दे और दूध भी छोड़ दे । तत्पश्चात् दूसरी वटलोही को गरम कर उसमें नवीन घृत तथा हींग छोड़कर कूष्माण्ड वटक छोड़ दे । पुनः उसको कलछुल से घोटकर उस में पर्यव ( पर्पट—पित्तपापड़ा ) का चूर्ण छोड़ दे । पुनः अच्छीतरह पकाकर उतार ले और उस फलपाक को कर्पूर से सुगन्धित कर ले । इसके बाद पूगपट्ट के नेत्र ( रस्सी ) से बाँधकर खाने के लिये दे । यह अगस्त्य फलपाक रुचिकारक, वातनाशक, कफ एवं पित्तकारक, अवृष्य, रुचिवर्द्धक, अग्निदीपक तथा शूलनाशक होता है ।। २८७-२९४ ।।



### हुंकारफलविरूपकफलयोः[1] निर्माणविधिर्गुणाश्च

हुंकारफलमादाय सम्भारेण पचेद्बुधः ।
वासनादीन् पुनः कुर्यादनालस्येन पूर्ववत् ।। २९५ ।।
आनीय पूर्ववद्विद्वान् विरूपकफलं पचेत् ।
दीपनं पाचनं रुच्यं लघु पित्तानिलापहम् ।। २९६ ।।
गुल्मशूलहरं नित्यं दन्तदार्ढ्यकरं परम् ।।

**हुंकारफल तथा विरूपकफलपाक बनाने की विधि तथा गुण**—बुद्धिमान् पाचक हुँकार का फल लेकर पूर्वोक्त सामग्रियों के साथ पाक करे और पूर्ववत् आलस्य रहित होकर कर्पूर आदि से सुगन्धित करे । इसी प्रकार विद्वान् पाचक विरूपक फल लेकर भी पाक करे । यह जाठराग्निदीपक, पाचक, रुचिकारक' हल्का, पित्तवातनाशक, गुल्मरोग तथा शूलहर तथा अच्छी तरह दाँतों को मजबूत करने वाला है ।। २९६-२९६ ।।

### औदुम्बरफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

औदुम्बरस्य रम्याणि फलान्यानीय बुद्धिमान् ।
शोधयेत्सर्ववृन्तानि सम्भाराणि पुनः पचेत् ।। २९७ ।।
वासनादीन् ततः कृत्वा दापयेद्भक्षयेद्बुधः ।
वातघ्नं कफहृद्ग्राहि कषायं दीपनं लघु ।। २९८ ।।
बृंहणं रोचनं पथ्यं ज्वरातिसारदाहजित् ।

**गूलरफल के पाक-निर्माण की विधि तथा गुण**—बुद्धिमान् पाचक गूलर के सुन्दर फलों को लेकर उसकी सभी भेंटियों को साफ कर दे, और साम्भर नमक, मसाला आदि के साथ पकावे । इसके बाद कर्पूर आदि से सुगन्धित कर राजा को दे तथा स्वयं भक्षण करे । औदुम्बरफलपाक वातनाशक, कफ को दूर करनेवाला, कषायरसयुक्त, जाठराग्निदीपक तथा हल्का ( सुपच ) होता है । यह मांसवर्द्धक रुचिकारक, पथ्य, ज्वरातिसार तथा दाहनाशक है ।। २९७-२९८ ।।

### औदुम्बरबालफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

आनीय पूर्ववद्बालमक्षीवस्य फलं पचेत् ।। २९९ ।।

---

१. हुंकार फल तथा विरूपक फल का नाम किसी निघण्टु में नहीं मिला । सम्भवतः विरूपक फल पिपरामूल का फल है । यह अन्वेषणीय है । —लेखक

तिक्तं कषायं वातघ्नमिदं श्लेष्मविनाशनम् ।
विसर्पहरणं गुल्मरक्तातिसारमेहजित् ॥ ३०० ॥

**गूलर का बालफलपाक बनाने की विधि तथा गुण**—गूलर का बाल फल लेकर पूर्ववत् पकावे। यह तिक्त तथा कषाय रसवाला होता है। वात एवं कफ को नाश करता है, विसर्प को दूर करता है, गुल्मरोग, रक्तातिसार तथा प्रमेह को जीत लेता है ॥ २९९-३०० ॥

## पक्वकुष्माण्डफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

वर्जितं क्रिमिभिः पक्वं कुष्माण्डफलमुत्तमम् ।
कल्किन्या खण्डयेत्तच्च कूटवच्चतुरश्रवम् ॥ ३०१ ॥
समुत्सृज्य ततो बोजान् अन्त्राणि तु समुत्सृजेत् ।
तानि प्रक्षाल्य तोयेन प्रवण्यां निक्षिपेत्पुनः ॥ ३०२ ॥
सामुद्रं तत्र निक्षिप्य पचेतानि पुनर्बुधः ।
दध्यम्लमाषपिष्टेन तानि लिम्पेत्समन्ततः ॥ ३०३ ॥
कुङ्कुमच्छविपर्यन्तं सर्पिषा तानि भर्जयेत् ।
मेथीजीरकसिद्धार्थं तिलमाषसमुद्भवान् ॥ ३०४ ॥
चूर्णञ्च विकिरेत्तेषु तत्सिद्ध्यर्थं पुनः पचेत् ।
पलाण्डोस्तत्र खण्डानि कैटर्यस्य दलानि च ॥ ३०५ ॥
क्षिप्त्वा कुस्तुम्बरीं धान्यमङ्गारेष्वथ धूपयेत् ।
वासयेद् घनसारेण पुनस्तानि विचक्षणः ॥ ३०६ ॥
वेष्टयेत्पूगपट्टेन तप्ते सर्पिषि निक्षिपेत् ।
भोजनावसरे प्राप्ते दापयेद्भोजने दिने ॥ ३०७ ॥
इदं कुष्माण्डकफलं बृंहणं स्वादु शीतलम् ।
सर्वदोषहरं वृष्यं दाहतृड्भयनाशनम् ॥ ३०८ ॥

**कुष्माण्ड फलपाक निर्माणविधि तथा गुण**—क्रिमिदग्धरहित परिपक्व उत्तम कुष्माण्ड फल को लेकर चाकू से कूट के समान चौकोर काट ले। इसके बाद उसके बीजों को निकाल कर फेंक दे और उसके अन्दर के रेशों को भी फेंक दे। तदनन्तर उन कुष्माण्ड के टुकड़ों को जल से प्रक्षालन कर बटलोही में रक्खे। पुनः बुद्धिमान् पाचक उसमें सामुद्र नामक छोड़कर पकावे। इसके बाद दही, खटाई तथा उडद की पीठी से उसे लिप्त कर दे और केशर सदृश वर्ण होने तक उनको घी में भूने। तदनन्तर मेथी, जीरा, सरसों, तिल तथा उड़द के चूर्ण को उनमें मिला दे और उसको सिद्ध होने के लिये पुनः पकावे। इसके बाद प्याज के टुकड़ों तथा कायफर के पत्तों को छोड़कर धनियाँ को अंगार में पकाकर छेंवक दे दे और पुनः कर्पूर से सुगन्धित बना ले। पुनः पूगपट्ट से वेष्टित करे तथा संतप्त घृत में छोड़ दे। सिद्ध हो जाने पर भोजन के समय दिन में खाने के लिये दे। यह कुष्माण्ड का फलपाक मांस को बढ़ाने वाला, स्वादिष्ट, शीतल, सभी दोषों को दूर करने वाला, वीर्यवर्द्धक, दाह तथा प्यास को नाश करनेवाला है ॥ ३०१-३०८ ॥



## सनिष्पावकुष्माण्डफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

कुष्माण्डखण्डमेवं च पचेन्निष्पावमिश्रितम् ।
वृष्यमोजस्करं रुच्यं दीपनं बृंहणं परम् ॥ ३०९ ॥

**भंटवासयुक्त कुष्माण्ड फलपाक बनाने की विधि तथा गुण**—पूर्वोक्त प्रकार के चौकोर टुकड़े किये हुए कुष्माण्ड खण्ड ( कोहड़े के टुकड़ों ) को भंटवास मिलाकर पकावे। यह सनिष्पाव कुष्माण्ड फलपाक वीर्यवर्द्धक, ओजकारक, रुचिकर, जाठराग्निदीपक तथा अच्छी तरह बलवर्द्धक होता है ॥ ३०९ ॥

## तुम्बीफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

तुम्बीफलं दीर्घमानादाहरेत्तरुणं नवम् ।
अनेनैव प्रकारेण पाकं कृत्वा प्रदापयेत् ॥ ३१० ॥
गुरु स्वादुतरं शीतं वर्तुलं श्लेष्मनाशनम् ।

**तुम्बी ( लौकी ) फल का पाक बनाने की विधि तथा गुण**—लम्बे नवीन तथा तरुण लौकी के फल को ले ले और पूर्वोक्त प्रकार से काटकर पका ले तथा खाने के लिये प्रदान करे। यह तुम्बी फलपाक गरिष्ठ, उत्तम, मधुर तथा शीत होता है और गोल लौकी के फल का पाक वातनाशक होता है ॥ ३१० ॥

## एर्वारुफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

एवमेर्वारुकफलं कुर्यात्पाकमतन्द्रितः ।
करोति जीर्णमन्येषां अन्नं युक्तं रुचिप्रदम् ॥ ३११ ॥

**ककड़ी फल का पाक बनाने की विधि तथा गुण**—पूर्वोक्त प्रकार से ककड़ी फल का पाक आलस्य रहित होकर बनावे। यह अन्य प्रकार के अन्न को जीर्ण ( पकाना ) करता है तथा उत्तम रुचिकारक है ॥ ३११ ॥

## सूरणकन्दपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

सूदस्तु कन्दमानीय सूरणस्य नवं ततः ।
रक्षयित्वा[1] त्वचं तस्य कल्किन्या विसृजेत्ततः ॥ ३१२ ॥
छित्वा तद्गुणवत्सूक्ष्मं प्रवण्यां निक्षिपेत्ततः ।
सामुद्रं तत्र निक्षिप्य चिञ्चाम्लंञ्च विनिक्षेपेत् ॥ ३१३ ॥

चुल्यां निधाय तद्भाण्डं तत्कन्दं तादृशं भवेत् ।
पक्वे तस्मिन् पुनश्चूर्णं त्र्यूषणस्य विनिक्षिपेत् ॥ ३१४ ॥
चूर्णञ्च विकिरेत्तत्र मेथीजीरकसम्भवम् ।
कैटर्यस्य फलं तत्र धान्याकं च विनिक्षिपेत् ॥ ३१५ ॥
प्रताप्य प्रवणीमन्यां भर्जयेत् रामठादिभिः ।
भर्जितं कन्दमानीय कर्पूरेणाधिवासयेत् ॥ ३१६ ॥
वेष्टयित्वा ततस्तं च पूगपट्टेषु निक्षिपेत् ।
पथ्यं क्रिमिहरं बल्यमर्शोघ्नं दीपनं परम् ॥ ३१७ ॥
लघु रुच्यं श्रमहरं विषघ्नं पुष्टिवर्द्धनम् ।
कुष्ठघ्नं पुष्टिकृच्छ्रेष्ठं वृष्यं सूरणकन्दकम् ॥ ३१८ ॥

**सूरनकन्दपाक की निर्माण-विधि तथा गुण**—पाचक सूरन का नवीन कन्द लेकर उसकी त्वचा को चाकू से काटकर फेंक दे । इसके बाद उसका छोटा-छोटा टुकड़ा बनाकर बटलोही में रक्खे और सामुद्र नमक तथा इमली की खटाई डाल दे । तत्पश्चात् चूल्हे के ऊपर उस पात्र ( बटलोही ) को रखकर उस कन्द को पूर्वोक्त प्रकार से पकावे । उसके पक जाने पर उसमें त्र्यूषण (सोंठ, पीपर, मरिच) का चूर्ण छोड़ दे । पुनः उसमें मेथी तथा जीरा का चूर्ण बिखेर दे, तथा कायफर का पत्ता एवं धनियाँ छोड़ दे । दूसरी बटलोही को तपाकर उसमें पूर्वोक्त कन्द को घी, हींग आदि से भून ले । भूने हुए कन्द को लेकर कर्पूर से सुगन्धित कर ले । इसके बाद उसको पूगपट्ट में लपेटकर रख दे । सूरन कन्दपाक पथ्य, क्रिमिहर, बलकारक, अर्शनाशक, उत्तम जाठराग्निदीपक, हल्का, रुचिवर्द्धक, थकावट दूर करनेवाला, विषनाशक, पौष्टिक, कुष्ठनाशक, उत्तम पोषक तथा वीर्यवर्द्धक होता है ॥ ३१२–३१८ ॥

### वनसूरणकन्दपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

प्रयत्नेन समादाय वनसूरणकन्दकम् ।
अनेनैव प्रकारेण पाकं कुर्याद्विचक्षणः ॥ ३१९ ॥
अग्निकृत्कटुको रूक्षो हृद्रोगशमनः परः ।
गुल्मस्थौल्यविषार्शघ्नो वनसूरणकन्दकः ॥ ३२० ॥

**वनसूरन कन्द का पाक बनाने की विधि तथा गुण**—विद्वान् पाचक प्रयत्नपूर्वक जंगली सूरन के कन्द को लेकर पूर्वोक्त सूरन कन्दपाक की तरह पाक बना ले । वनसूरन कन्दपाक स्वाद में कटु, जाठराग्निवर्द्धक, रूक्ष, उत्तम, हृदयरोगशामक, गुल्मरोग, स्थूलता, विषविकार तथा अर्श ( बवासीर ) रोग को नाश करने वाला है ॥ ३१९-३२० ॥



### कुमुदोत्पलकन्दपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

कुमुदोत्पलकन्दानि तावन्त्येव पचेत् क्रमात् ।
हितवृद्धिकरोनित्यं मधुरः पित्तनाशनः ॥ ३२१ ॥

**कमलकन्द ( भिसौडा ) का पाक बनाने की विधि तथा गुण**—कुमुद तथा कमल का कन्द लेकर पूर्वोक्त प्रकार से क्रमशः पका ले । यह कमलकन्दपाक हमेशा हितकर, वृद्धिकारक, स्वाद में मधुर तथा पित्तनाशक होता है ॥ ३२० ॥

### मूलककन्दपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

मूलकस्य नवं कन्दं पचेदेवं च पाकवित् ।
लघु स्वादुतरं पथ्यं दीपनाग्निकरं परम् ॥ ३२२ ॥

**मूलककन्द का पाक बनाने की विधि तथा गुण**—पाकज्ञ पाचक मूली के नवीन एवं कोमल कन्द लेकर पूर्ववत् पका ले । यह हल्का, स्वादिष्ट, पथ्य तथा अच्छी तरह जाठराग्निदीपक है ॥ ३२१ ॥

### चक्रवर्त ( वास्तूक ) शाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

घनसाराद्रकैर्युक्तं चक्रवर्तं सुकोमलम् ।
तरुणीदलमानीय क्रिमिभ्यः शोधयेच्च तत् ॥ ३२३ ॥
प्रक्षाल्य पात्रे निक्षिप्य छादयेदार्द्रवाससा ।
निधाय प्रवणी चुल्यां तत्र किञ्चिज्जलं हरेत् ॥ ३२४ ॥
रामठस्य पुनस्तत्र क्षीरमल्पं च सेचयेत् ।
चक्रवर्तसमुद्भूतैः रसैः सह पचेच्च तत् ॥ ३२५ ॥
तादृशं चक्रवर्तं तत्तप्ते पयसि निक्षिपेत् ।
तिरोधाय मुखं तस्य अर्द्धपाकं ततो भवेत् ॥ ३२६ ॥
तमालोक्य पुनस्तत्र यथार्थं लवणं क्षिपेत् ।
शकलानि पुनस्तत्र लशुनार्द्रकयोः क्षिपेत् ॥ ३२७ ॥
जातपाकं तमादाय वासयेत् कर्पुरादिभिः ।
बद्ध्वा तु पूगपट्टेन भुक्तिकाले प्रदापयेत् ॥ ३२८ ॥
लघुग्राहि त्रिदोषघ्नं चक्षुष्यो मधुरोऽग्निकृत् ।
परं सद्यो ग्रहण्यर्शः पित्तरोगविकारनुत् ॥ ३२९ ॥

**चक्रवर्त ( वथुआ ) का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—कर्पूर तथा अदरक से युक्त कोमल तथा तरुण बथुआ के पत्तों को लेकर क्रिमि आदि को साफ कर ले और धोकर तथा पात्र ( बटलोही ) में रखकर गीले वस्त्र से ढक दे । इसके बाद प्रवणी ( बटलोही ) को चूल्हे पर रखकर उसमें थोड़ा जल मिला दे ।

पुनः हींग का जल ( हींग का घोल ) तथा थोड़ा दूध छोड़ दे और वथुआ के शाक के रस के साथ उसको पकावे। इस प्रकार परिपक्व वास्तूक शाक को संतप्त घृत में छोड़ दे। उसका मुख ढक कर अधपका होने तक पकावे। पुनः उसको देखकर उचित मात्रा में नमक छोड़ दे। पुनः उसमें लहसुन तथा अदरक के कुछ टुकड़ो को छोड़ दे। अच्छी तरह पक जाने पर निकाल ले और कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों से सुगन्धित कर ले। इसके बाद पूगपट्ट से बाँधकर भोजन के समय पर दे। वास्तूक ( बथुआ ) का शाक हल्का, मलावरोधक, त्रिदोषनाशक, नेत्र के लिये हितकर, स्वाद में मधुर तथा अग्निवर्द्धक है। यह शीघ्र ही अच्छी तरह ग्रहणी-विकार, अर्श तथा पित्तविकार को दूर करता है ॥ ३२२-३२८ ॥

### प्रकारान्तरेण चक्रवर्तशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

सुजातं चक्रवर्तस्य दलमानीय केवलम् ।
पाकं च पूर्ववत्कृत्वा मन्थानेन मथेद्द्रुतम् ॥ ३३० ॥
आर्द्रनिष्पावबीजानि तत्र पक्वानि निक्षिपेत् ।
नारिकेल फलोद्भूतशकलानि विनिक्षिपेत् ॥ ३३१ ॥
चूर्णं च विकिरेत्तत्र मरीच्याद्युद्भवं ततः ।
कुष्माण्डवटकच्छेदैः पर्पटस्य कणैश्च तम् ॥ ३३२ ॥
भर्जयित्वा तमादाय घनसारेण वासयेत् ।
ततश्च पूगपट्टेन वेष्टयित्वा प्रदापयेत् ॥ ३३३ ॥
इदं रुचिकरं पथ्यं कामिन्यादिविनोदनम् ॥ ३३४ ॥

**दूसरे प्रकार से बथुआ का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—सुन्दर चक्रवर्त ( बथुआ ) के केवल पत्र को लेकर तथा पूर्ववत् पकाकर मथनी से शीघ्र ही मथ दे। इसके बाद उसमें गीला भंटवास का बीज पकाकर छोड़ दे। पुनः नारियल फल के टुकड़ों को छोड़ दे। तदनन्तर मरिच, धनिया, जीरा आदि का चूर्ण मिला दे। इसके बाद घी में बथुआ के शाक को कोहड़बरी के टुकड़े तथा पापड़ के टुकड़ों के साथ भून ले, और भूनने के बाद उतार कर्पूर से सुगन्धित कर तैयार हो जाने पर पूगपट्ट से आवेष्टित कर खाने के लिये दे। यह रुचिकारक, पथ्य तथा कामिनी स्त्रियों के लिये विनोद कारक होता है ॥ ३२९-३३३ ॥

### नववास्तूकशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

वास्तूकस्य नवं तत्र आनीयैव पचेत्ततः ।
मेधाग्निबलकृद्रुच्यं सक्षारं सर्वरोगजित् ॥ ३३५ ॥



**नवीन बथुआ का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—नवीन वथुआ की जड़ रहित पत्र-तना आदि को लेकर पूर्वोक्त प्रकार से पकावे। यह जाठराग्नि को बढ़ाने वाला, बल तथा रुचिकारक होता है। यह क्षार के साथ प्रयोग करने पर सभी प्रकार के रोगों को जीत लेता है ॥ ३३५ ॥

### चुल्लीशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

विधानेन पचेच्चुल्याः लघुपत्रं सुकोमलम् ।
वातला बद्धविण्मूत्ररूक्षपित्तकफेहिता ॥ ३३६ ॥
सतिक्तमधुराहारा मेहार्शोगुल्मनाशिनी ॥ ३३७ ॥

**चुल्ली[1] शाक बनाने की विधि तथा गुण**—छोटे पत्रवाली कोमल चुल्ली शाक लेकर विधिपूर्वक पकावे। यह वातकारक है तथा मल-मूत्र, विवन्ध ( कब्जियत ), रूक्षता, पित्तविकार एवं कफविकार में हितकर है। वह स्वाद में तिक्त एवं मधुर है और प्रमेह, अर्शरोग तथा गुल्मरोग को नाश करती है ॥ ३३६–३३७

### लताचुल्लीशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

लताचुल्याः पचेदेवं नवचूतफलेन च ।
सरा विषघ्ना वृष्या च श्लेष्मनिग्रहणीपरा ॥ ३३८ ॥

**लता चुल्ली का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—सम्पूर्ण चुल्लीलता को लेकर जड़ निकाल कर साफ कर ले और नवीन आम के फल के साथ पकावे। यह दस्तावर, विषनाशक, वीर्यवर्द्धक तथा अच्छी तरह कफ को निकालने वाली है ॥ ३३८ ॥

### महाचुल्लीशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

ततः पचेत् महाचुल्लीमेवमानीय कोमलाम् ।
वृष्या सरा वातहरा क्रिमिदोषहरा परा ॥ ३३९ ॥

**महाचुल्ली का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—कोमल महाचुल्ली लता को लेकर पूर्व की तरह पका ले। यह वीर्यवर्द्धक, दस्तावर, वातहर तथा अच्छी तरह क्रिमिविकार को दूर करनेवाली है ॥ ३३९ ॥

### शिलाछिल्लीशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

शिलाछिल्लीं समादाय पचेदेवं विधानतः ।
कुष्ठघ्ना सर्वदोषघ्नी वृश्चिकस्य विषापहा ॥ ३४० ॥

---

१. चुल्ली तथा महाछिल्ली शाक किसी निघण्टु में नहीं मिलते। आजकल इन्हें क्या कहते हैं, यह अन्वेषणीय है। —लेखक

**शिलाछिल्ली का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—पूर्वोक्त पाकनिर्माण प्रकार से शिलाछिल्ली को लेकर विधानपूर्वक पकावे। यह कुष्ठ रोग को नाश करनेवाली, सभी प्रकार के दोषों को नाश करने वाली तथा वृश्चिक ( बिच्छू ) के विष को दूर करती है ॥ ३. ४०॥

### वाष्पशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

तरुणं वाष्पमानीय नवं सम्यक् विशोधयेत्।
सिञ्चेत् क्षीरं प्रवण्याञ्च रामठं च ततः क्षिपेत् ॥ ३४१ ॥
तस्मिन् क्षीरे पुनस्तस्मिन् शोधितं वाष्पमाविशेत्।
निक्षिपेत्तप्तवाष्पे च लशुनार्द्रकयोः कणान् ॥ ३४२ ॥
लवणं च यथायोग्यं नवं सर्पिश्च निक्षिपेत्।
ततोऽवतार्यं तत्रैव कर्पूरादीन् विनिक्षिपेत् ॥ ३४३ ॥
पूगपट्टेन तं बद्ध्वा दापयेद्भक्षयेत्ततः।
अयं वाष्पस्त्रिदोषघ्नो लघुः स्वादुतरः सरः ॥ ३४४ ॥

**वाष्प शाक ( मारिष—मार्छाशाक ) बनाने की विधि तथा गुण**—नवीन तथा तरुण वाष्प ( मार्छा ) शाक लेकर अच्छी तरह साफ कर ले। इसके बाद बटलोही में दूध तथा हीग का घोल छोड़ दे और उसमें साफ वाष्प शाक को छोड दे। पुनः संतप्तवाष्पशाक में लहसुन तथा अदरक के टुकड़ों को मिला दे। इसके बाद उचित मात्रा में नमक तथा नवीन घी छोड़ दे। तदनन्तर उतार कर उसमें कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों को मिला दे, और उसको पूगपट्ट से बाँधकर खाने के लिये दे तथा स्वयं भक्षण करे। यह वाष्पशाक त्रिदोष को नाश करने वाला, हल्का, स्वादिष्ट तथा दस्तावर होता है ॥ ३४१-३४४ ॥

### ग्रन्थान्तरानुसारेणवाष्पशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

पूर्ववत्तरुणं वाष्पं पक्वं सम्यग्विधं पुनः।
सहकारफलोद्भूतशकलानि ततः पचेत् ॥ ३४५ ॥
लसुनार्द्रकयोः कृत्वा कणान् चणकवत् क्षिपेत्।
कुस्तुम्बुरीं बीजपूरं कैटर्यस्य दलानि च ॥ ३४६ ॥
कुसुमानि च केतक्याः कर्पूरं तत्र निक्षिपेत्।
तमेतैः सह सम्पक्त्वा तं वाष्पमवतारयेत् ॥ ३४७ ॥
बद्ध्वा तं पूगपट्टेन प्रदद्याद्भोजनार्थिने।
अयं स्वादुतरो वाष्पो रुच्यो वृष्यकरः सरः ॥ ३४८ ॥



**अन्य ग्रन्थानुसार वाष्प ( मार्छा ) का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—बुद्धिमान् पाचक पूर्वोक्त प्रकार से अच्छी तरह परिपक्व वाष्प को आम के फल के टुकड़ों के साथ पकावे और लहसुन तथा अदरक के चने की तरह टुकड़ों को मिला दे। इसके बाद धनियाँ, बिजौरा नींबू, कायफर के पत्र, केतकी का फूल तथा कर्पूर को छोड़ दे। वाष्प के शाक को पूर्वोक्त सभी पदार्थों के साथ पकाकर उतार ले। तैयार हो जाने पर उस वाष्प शाक को पूगपट्ट से बाँधकर खानेवाले को दे। यह वाष्प शाक स्वादिष्ट, रुचिकारक, वीर्यवर्द्धक तथा दस्तावर होता है। ३४५-४८।

### चणकपत्रशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

तरुणं दलमानीय शोधयेच्चणकस्य च।
चुल्यां निधाय प्रवणीं तत्र सिञ्चेद् घृतं नवम् ॥ ३४९ ॥
सम्यक्तप्ते घृते तत्र लसुनस्य कणान् क्षिपेत्।
रामठं तत्र निक्षिप्य तद्दलं शोधितं क्षिपेत् ॥ ३५० ॥
पर्पटस्य कणान् क्षिप्त्वा कुष्माण्डवटकांस्ततः।
एभिः साकं समालोड्य दर्व्या पाकं च योजयेत् ॥ ३५१ ॥
अवलोक्य पुनः पाकमवतार्याधिवासयेत्।
नेत्रेण वेष्टयित्वाथ भुक्तिकाले प्रदापयेत् ॥ ३५२ ॥
इदं स्वादुतरं वृष्यं पित्तघ्नं कफनाशनम् ॥ ३५३ ॥

**चना के पत्ते का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—चना के तरुण पत्तों को लेकर साफ कर ले। इसके बाद चूल्हे के ऊपर बटलोही में रखकर उसमें नया घृत छोड़ दे। घी के अच्छी तरह संतप्त हो जाने पर लहसुन के टुकड़ों को छोड़े और हींग को छोड़कर उसमें साफ किये हुए चना के पत्तों को मिला दे। साथ में पापड़ तथा कोहड़बरी को भी छोड़कर इन सबों के साथ कलछुल से चलाकर पकावे। पुनः उसको देखकर अच्छी तरह पक जाने पर उतार ले और कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों से सुगन्धित कर ले। तत्पश्चात् पूगपट्ट नेत्र से आवेष्टित कर भोजन के समय परोसे। यह चणक पत्र शाक अत्यन्त स्वादिष्ट, वीर्यवर्द्धक, पित्त एवं कफनाशक होता है ॥ ३४९-३५३ ॥

### तण्डुलीयशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

तण्डुलीयं समादाय पचेदेवं नवं बुधः।
लघुः पित्तादि दोषघ्नो वातदोषहरः परः ३५४ ॥
चक्षुष्यो दीपनं रुच्यं स्तन्यकृत् स्तनरोगहा।
मूत्रकृच्छ्रप्रशमनो पित्तघ्नो रक्तसारनुत् ॥ ३५५ ॥

**तण्डुलीय ( चौराई ) का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—पूर्वोक्त प्रकार से शोधित नवीन चौराई को लेकर चना के शाक सदृश पकावे। चौराई का शाक हल्का, पित्तादिदोषनाशक, उत्तम वातविकारहर, नेत्र के लिये हितकर, जाठराग्नि-दीपक, रुचिकारक, दूधवर्द्धक तथा स्तन के रोगों को नाश करने वाला है। यह मूत्रकृच्छ्रशामक, पित्तनाशक तथा रक्तातिसार को दूर करता है ॥ ३५४-३५५ ॥

### महावाष्पशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

महावाष्पं समादाय पचेदेवं विधानतः।
पित्तदोषहरं सम्यक् श्लेष्मदोषहरं सदा॥
अपथ्यं श्लेष्मलो बल्यः सारो गुरुतरः परः॥ ३५६ ॥

**महावाष्प ( महामार्छा ) का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—महावाष्प ( महामार्छा ) का शाक लेकर पूर्वोक्त प्रकार से विधि पूर्वक पकावे। यह अच्छी तरह पित्तदोष तथा कफविकार को दूर करनेवाला, अपथ्य, कफकारक, बलवर्द्धक, दस्तावर तथा भारी होता है ॥ ३५६ ॥

### रक्तवाष्पशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

रक्तवाष्पं समादाय पचेदेवं विचक्षणः।
समीरणहरो नित्यं वाष्पोऽयं सर्वरोगनुत् ॥ ३५७ ॥

**रक्तमार्छा का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—विद्वान् पाचक लालमार्छा को लेकर पूर्वोक्त प्रकार से विधिपूर्वक पकावे। यह रक्तवाष्पशाक हमेशा वातविकार को दूर करनेवाला तथा सभी रोगों को नाश करता है ॥ ३५७ ॥

### उपोदकीशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

उपोदकीं समादाय शोधयेत्क्षालयेज्जलैः।
लवणादींश्च निक्षिप्य पक्त्वा राज्ञे प्रदापयेत् ॥ ३५८ ॥
स्वादुपाकरसा बल्या गुर्वी शीता रुचिप्रदा।
चक्षुष्या बृंहणी कार्श्या श्लेष्मनिद्रा विधायिनी ॥ ३५९ ॥

**उपोदकी ( पोई ) का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—पोई के शाक को लेकर उसको अच्छी तरह साफ कर ले और जल से प्रक्षालन कर ले। पुनः नमक मसाला आदि छोड़कर पकावे और राजा को खाने के लिये दे। यह स्वाद में मधुर रसवाली, बलकारक, दुष्पच, शीतल, रुचिप्रद, नेत्र के लिये हितकर, मांस-वर्द्धक किन्तु दुर्बल हरनेवाली तथा कफ एवं नींद लानेवाली है ॥ ३५८-३५९ ॥



### चित्रपाके तिक्तालाबुफलपाकविधिर्गुणाश्च

विचित्रशीलपाको यस्तिक्तालाबुफलं नयेत्।
तत्तिक्तमोचनं कुर्यादन्यवस्तु प्रयोगतः॥ ३६० ॥
गुञ्जामूलरसैस्तावत् तिक्तालाबु फलं पचेत्।
अथवा यष्टिसम्भूतरसैर्वापि पचेद्बुधः॥ ३६१ ॥
अथवा विपचेत्तच्च कुण्डलीरसयोगतः।
अनेनैव प्रकारेण कुर्यात्तत्तिक्तमोचनम् ॥ ३६२ ॥
पूर्ववच्च कृते पाके मधुरत्वं प्रजायते।
वासनां पूर्ववद्दत्वा वेष्टयित्वा प्रदापयेत् ॥ ३६३ ॥
वातश्लेष्महरं पथ्यं दीपनं पाचनं भवेत्।

**चित्रपाक में कड़वी कद्दू फल का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—यह विचित्र प्रकार का शाक है जो कड़वे कद्दू फल का होता है। कड़वा कद्दू का फल लेकर दूसरे वस्तुओं के संयोग से उसकी कडुआहट को दूर करे। गुञ्जा को जड़ के रस से कड़वी लौकी के फल को पकावें। अथवा मुलेठी के साथ कड़वी लौकी को पकावे अथवा गुडूची के रस के साथ पकावे। इसी प्रकार से कड़वी लौकी की कडुआहट को दूर करे। इस प्रकार कडुआहट को दूर करने से उसमें मिठास ( मधुर रस ) आ जाती है। अच्छी तरह परिपक्व हो जाने पर कर्पूर आदि द्रव्यों से सुगन्धित बनाकर तथा पूगपट्ट से वेष्टित कर खाने लिये दे। यह वात-कफ को दूर करनेवाला, पथ्य, जाठराग्निदीपक तथा पाचक होता है ॥ ३६०-३६३ ॥

### तिक्तकोशातकीफलशाकनिर्माणविधिर्गुणश्च

नवं तरुणमानीय तिक्तकोशातकीफलम् ॥ ३६४ ॥
तत्तिक्तमोचनं कुर्यात् जम्बूकल्क प्रयोगतः।
ततः पाके कृते तस्मिन् मधुरत्वं प्रजायते ॥ ३६५ ॥
वासयेद्घनसारेण बद्ध्वा नेत्रेण दापयेत्।
इदं रुचिकरं पथ्यं समीरणविजृम्भणम् ॥ ३६६ ॥

**तिक्ततरोई के फल का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—नवीन तथा तरुण तींत तरोई के फल को लेकर जामुन के कल्क के साथ पकाकर उसकी तींताई को दूर करे। जामुन के कल्क के साथ पाक करने पर उसमें मिठास आ जाती है। पक जाने पर कर्पूर आदि से सुगन्धित कर तथा पूगपट्ट नेत्र से बाँधकर खाने के लिये दे। तिक्त तरोई फल का शाक रुचिकारक, पथ्य तथा वातनाशक होता है।

### तिक्तपटोलफलस्य पाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

पटोलस्य फलं तिक्तं समादय सुकोमलम् ।
जम्बीररससंयोगात् कुर्यात्तिक्तमोचनम् ॥ ३६७ ॥
पाकं च पूर्ववत्कृत्वा शेषं पूर्ववदर्पयेत् ।
एतद्रुचिकरं पथ्यं वातश्लेष्महरं परम् ॥ ३६८ ॥

**तिक्तपटोलफल का पाक बनाने की विधि तथा गुण**—कोमल तितऊआ परवल के फल को लेकर तथा जम्बीरी निंबू के रस के साथ पकाकर उसकी तिताई को दूर कर ले। पुनः पूर्वोक्त पाक-विधि के अनुसार पकाकर तथा नमक, मसाला आदि मिलाकर, कर्पूर आदि से सुगन्धित कर तथा पूगपट्ट से बाँधकर खाने के लिये प्रदान करे। यह तिक्तपटोलफलपाक रुचिकारक, पथ्य तथा वात-कफको अच्छी तरह दूर करनेवाला है ॥३६७-३६८॥

### कारवल्लीपत्रशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

अव्रणङ्कारवल्ल्याश्च दलमानीय कोमलम् ।
तिक्तं मूलेन पर्णेन श्वदंष्ट्रायाः परित्यजेत् ॥ ३६९ ॥
अथवा तिक्तपर्णैर्वा तत्तिक्तं परिमोचयेत् ।
पुनः पाके कृते तच्च मधुरत्वं प्रपद्यते ॥ ३७० ॥
यथार्हं पाकवित्तत्र कुर्यात्सम्भारमेलनम् ।
ततोऽवतार्यं तत्रैव वासनादीन् समाचरेत् ॥ ३७१ ॥
विशदं दीपनं रुच्यं श्लेष्मकृमिसमीरनुत् ॥ ३७२ ॥

**करैली के पत्ते का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—क्रिमिदंश आदि विकाररहित कोमल करैले के पत्तों लेकर गोखरू की जड़ तथा पत्तों से तिक्तता को दूर करे अथवा नीम के पत्तों के साथ पकाकर तिक्तता दूर करे। तिक्तता दूर करने के बाद पुनः पाक करने पर वह मधुर हो जाता है। इसके बाद अच्छी तरह पाक को जानने वाला उसमें सम्भार ( नमक मसाला आदि ) को मिला दे और उतारकर वहीं पर कर्पूर आदि से सुगन्धित बना ले। यह विशद, जाठराग्नि-दीपक, रुचिकारक, कफविकार, क्रिमिरोग तथा वातविकार को दूर करता है।

### जीवन्तीपत्रशाकनिर्माणविधिणाश्च

तरुणं पर्णमानीय जीवन्त्याः क्रिमिवर्जितम् ।
पचेच्छ्रीहस्तिनीपर्णैर्यद्वा पौनर्नवीदलैः ॥ ३७३ ॥
सम्भारमेलपर्यन्तं पाकं कुर्याच्च तत्पुनः ।
तस्मिन् पाके पुनस्तानि निक्षिपेद्भर्जितान्यपि ॥ ३७४ ॥



भर्जितानि पुनस्तानि वासयित्वाथ वेष्टयेत् ।
स्थापयेत्पूर्ववत्तानि दापयेत्सूदकोविदाः ॥ ३७५ ॥
लघु स्वादुतरं रम्यं वातपित्तादिनाशनम् ॥ ३७६ ॥

**जीवन्ती पत्र का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—क्रिमिदंश-आदि से रहित जीवन्ती के तरुण पत्तों को लेकर कर्कटी ( ककड़ी = त्रपुसविशेषः ) के पत्र के साथ या पुनर्नवा के पत्र के साथ पाक करने के बाद पुनः सम्भार ( नमक-मसाला आदि ) मिलाने पर्यन्त पाक करे। पाक हो जाने पर पुनः उनको भूनकर घी छोड़ दे। इसके बाद भूने हुए उस शाक को सुगन्धित कर पूगपट्ट से वेष्टित करे और रक्खे। तदनन्तर पाकशास्त्रवेत्ता उस शाक को खाने के लिये दे। यह जीवन्ती पत्र शाक हल्का, स्वादिष्ट, मनोरम तथा वात-पित्तादिदोषों को नाश करनेवाला होता है ॥ ३७३-३७६ ॥

### उण्डूकफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

उण्डूकस्य फलं सम्यक्-आनीय तरुणं बुधः ।
उण्डूकरयोदरे सम्यक् पचेच्चर्याविमिश्रिते ॥ ३७७ ॥
कल्किन्या तक्षयित्वा च विसृजेत्तस्य कण्टकान् ।
धारयित्वा पुनस्तस्य सवृन्तं दण्डमुद्धरेत् ॥ ३७८ ॥
अन्यत्र निक्षिपेद्दण्डं उण्डूकं दण्डवर्जितम् ।
छिन्द्यातद्धि यथा छिन्नान् भर्जयेद्भाजनेधृतैः ॥ ३७९ ॥
कल्किन्या च पुनः सूक्ष्मं छिन्द्यात्तदुण्डुकं फलम् ।
सम्भारान सैन्धवादींश्च सर्पिषा सह निक्षिपेत् ॥ ३८० ॥
ततो दुग्धं च शकलं नारिकेलफलस्य च ।
एभिः सार्द्धं च कुर्वीत फलं कल्कञ्च तत्पुनः ॥ ३८१ ॥
उण्डूकस्य फलान्तस्थं सवृन्तं दण्डमुत्तमम् ।
करेणादाय कुर्वीत फलाकारं च पूर्ववत् ॥ ३८२ ॥
आकारस्य विना बाधं सर्पिषा भर्जयेत्पुनः ॥ ३८३ ॥
घनसारादिना सम्यक् वासयित्वावतारयेत् ।
नेत्रेण पूगपट्टस्य कुर्यात्तत्पोटलीं बुधः ॥ ३८४ ॥
तप्ते घृते पुनस्तानि निक्षिप्याथ प्रदापयेत् ।
विसृज्य कण्टकानेतान् छलदन्तःस्थिरं रसम् ॥ ३८५ ॥
भोक्तुर्नित्यं सुखं सम्यक् अर्पयेदमृतं तथा ॥ ३८६ ॥

**उण्डूक फल का पाक बनाने की विधि तथा गुण**— बुद्धिमान् पाचक उण्डूक

का तरुण फल लेकर उसी के चर्या मिश्रित जल ( फिटिकरी का पानी ) में अच्छी तरह पकावे और चाकू से उनके काटों को निकाल कर रख दे। पुनः उसके वृन्त सहित दण्ड निकाल कर रख ले और उण्डूक फल को अलग लेकर काट ले तथा घी के साथ भून ले। इसके बाद पुनः उस उण्डूक फल को चाकू से छोटा-छोटा काट के और सेन्धा नमक मसाला आदि घी के साथ छोड़ दे। इसके बाद दूध तथा नारियल फल के टुकड़ों को मिलाकर सभी फल एवं कल्क को एकत्र कर उण्डूक के फल के अन्दर के वृन्त सहित दण्ड को लेकर पूर्ववत् हाथ से फल के आकार का बनावे और पूर्ववत् कण्टकों को यथा स्थान स्थान स्थापित कर दे। इसके बाद फल के आकार के विकृत हुए विना ही घी में पुनः भून ले और कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों से अच्छी तरह सुगन्धित कर उतार ले। तदनन्तर पूगपट्ट के नेत्र से पोटली बनावे तथा संतप्त घृत में रख दे। इसके बाद खाने के लिये प्रदान करे। पूर्वोक्त कण्टकों को निकाल कर उसके अन्दर स्थित सुखप्रद स्वादिष्ट रस को अमृत के सदृश खाने वाले को अर्पित करे। अर्थात् यह पाक अमृत के सदृश है और खाने वालों के लिये सुखप्रद है ॥ ३७७-३८६ ॥

### मुण्डकफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

फलं मुण्डकमानीय छिन्द्यान्निष्पावमानतः।
पूर्ववद्विपचेद्विद्वान् भूफलं भर्जयेत् पुनः ॥ ३८७ ॥
क्षीरेण विपचेत्कल्कं मरिचादिसमुद्भवम्।
निक्षिपेत्तत्र निष्पावं सर्पिषा भर्जितं पुनः ॥ ३८८ ॥
निक्षिपेच्छकलं तत्र नारिकेलफलस्य च।
निक्षिपेत् क्षुद्रपनसं फलं तत्र विभर्जितम् ॥ ३८९ ॥
दर्वीपुटेन तं पाकं समालोड्यावतारयेत्।
तप्ते भाण्डे ततः सम्यक् घृतमासिच्य तत्र तु ॥ ३९० ॥
निक्षिपेच्च कणान् सूदः कुष्माण्डवटकोद्भवान्।
पर्पटस्य कणांस्तत्र तत्फलं भर्जयेत् पुनः ॥ ३९१ ॥
ततोऽवतार्य तं पाकं कर्पूरेणाधिवासयेत्।
कर्पूरपोटलीं कृत्वा तप्तसर्पिषि निक्षिपेत् ॥ ३९२ ॥
ततश्च भुक्तिसमये प्रदद्यात्पाकमुत्तमम्।
एष पाकः सुधातुल्यो वातपित्तहरः शुभः ॥ ३९३ ॥
सद्यः श्लेष्महरो वृष्यो लघुः स्वादुतरः शुभः ॥ ३९४ ॥

मुण्डक फल का पाक बनाने की विधि तथा गुण —मुण्डक का फल लेकर



भटवांस के बराबर-बराबर काटे और विद्वान् पाचक पूर्वोक्त प्रकार से पकावे पुनः भू-फल को भून ले और मरिच-धनिया आदि का कल्क मिलाकर दूध के साथ पका ले। पुनः उसमें घी में भूना हुआ भटवांस तथा नारियल के टुकड़ों को मिला दे। इसी प्रकार क्षुद्रपनस ( बाल कटहल ) के टुकड़ों को घी में भून कर मिला दे। इसके बाद कलछुल से चला कर उस मुण्डक फल पाक को उतार ले। पुनः एक गरम पात्र में घृत छोड़कर उसमें कुष्माण्डकण ( कोहड़ौरी के टुकड़ों ) तथा पापड़ के टुकड़ों को छोड़ दे और मुण्डक फल पाक को मिलाकर भूने। इसके बाद उस पाक को उतार कर कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्य से सुगन्धित कर ले। पुनः कर्पूर की पोटली बनाकर संतप्त घृत में रख दे। इस उत्तम पाक को भोजन के समय दे। यह मुण्डक पाक अमृत के समान है और वात-पित्त को अच्छी तरह दूर करता है। यह शीघ्र ही कफ को दूर करता है, वीर्य बढ़ाता है, हल्का तथा अधिक स्वादिष्ट है ॥ ३८७-३९४ ॥

### कारवल्लीफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

शोधितं क्रिमिभिः सम्यक् कदुष्णं कोमलं नवम्।
पाकार्थमाहरेद्विद्वान् कारवल्ली फलं ततः ॥ ३९५ ॥
मूलाग्रे विसृजेच्छित्वा कल्किन्यास्य विचक्षणः।
निक्षिपेत्प्रवणीभाण्डे कारवल्लीफलं ततः ॥ ३९६ ॥
काञ्जिकामिश्रितं सिञ्चेत् जलं तत्र पुनर्बुधः।
चुल्यां निधाय तद्भाण्डं पचेत्तत्तिक्तमोचनम् ॥ ३९७ ॥
ततस्तस्मात्समादाय पुनरत्र विनिक्षिपेत्।
पुनः पाकं प्रकुर्वीत (पटु जैस्तु रसैः) पटु जण्डु रसै बुधः ॥३९८॥
भर्जयित्वा पुनः सूदः सर्पिषा तत्फलं शनैः।
तत्रैकदेशं प्रछिन्द्यात् पणमात्रं शलाकया ॥ ३९९ ॥
शकलं रक्षयित्वाथ फलमादाय सूदराट्।
शलाकया सकोशश्च बीजं छिन्द्यात् समुद्धरेत् ॥ ४०० ॥
रक्षेत घटिकाकारकारवल्लीफलं बुधः।
बीजकोशं तनुं छिन्द्यात् कल्किन्या तीव्रधारया ॥ ४०१ ॥
तत्रैव निक्षिपेत् क्षीरं वटकानम्लसम्भवान्।
नारिकेलफलोद्भूतपुष्पाकारकणान् क्षिपेत् ॥ ४०२ ॥
पुनश्च निक्षिपेत्तत्र लशुनार्द्रकयोः कणान्।
मरिचादिसमुद्भूतचूर्णं तत्र विनिक्षिपेत् ॥ ४०३ ॥

कर्पूरादींश्च विन्यस्य घनीभूतघृतं क्षिपेत् ।
सर्वानेतान् प्रकुर्वीत कल्काकारं शनैः बुधः ॥ ४०४ ॥

सुस्निग्धं प्रवणीभाण्डे कल्कमेतत्समाविशेत् ।
कल्कमेतत्समादाय यथा योग्यं प्रमाणवित् ॥ ४०५ ॥

कारवल्लीफलोद्भूतघटिकां पूरयेत्ततः ।
तद्रसं चारयेद्विद्वांस्तदुत्थशकलानि च ॥ ४०६ ॥

नेत्रेण वेष्टयित्वाथ पूगपट्टेन शोभिना ।
उष्णे सर्पिषि निक्षिप्य फलमतेत्प्रदापयेत् ॥ ४०७ ॥

पथ्यं श्लेष्महरं नित्यं समीरणहरं पुनः ।
सर्वामयप्रशमनं कारवल्लीफलं त्विदम् ॥ ४०८ ॥

**कारवल्ली ( करैला ) फल का पाक ( कलौंजी ) बनाने की विधि तथा गुण**—विद्वान् पाचक क्रिमि आदि से अच्छी तरह शोधित, थोड़ा पका, **कोमल, नवीन** करैला के फल को पाक के लिये ग्रहण करे । इसके बाद उसके **मूल तथा अग्रभाग** को चाकू से काट कर फेंक दे तथा उस फल को बटलोही **में रख कर** उसमें काञ्जी मिश्रित जल छोड़ दे । तदनन्तर उस बटलोही को **चूल्हा पर रख** कर उसकी तिक्तता दूर करने के लिये पकावे । पुनः उस पात्र से **निकाल कर** दूसरी बटलोही में रक्खे तथा नमक के जल से पाक करे । इसके बाद **बुद्धिमान्** पाचक उस फल को धीरे-धीरे घी के साथ भून कर उसके एक स्थान को **पैसा के बराबर** शलाका से काट ले और उस टुकड़ा को सुरक्षित रख ले । पुनः **उस फल को लेकर** शलाका से कोश सहित बीज को काट दे तथा निकाल दे **और घंटी की** ( घंटी के आकार ) के आकार का बनाकर रख ले । तदनन्तर **बीजकोश को** तेज धार वाली चाकू से पतला-पतला काटे और उसी में **खट्टे दूध के** वटक को छोड़ दे । साथ ही नारियल के फल के पुष्प के आकार के **टुकड़ों तथा** लहसुन एवं अदरक के टुकड़ो को छोड़ दे । पुनः मरिच, धनिया, मसाला, **नमक** आदि के चूर्ण, कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्य तथा गाढ़ा घी छोड़ दे । **इसके बाद** बुद्धिमान् पाचक इन सबों को कल्क के आकार का बना ले **और अच्छी तरह** स्निग्ध पात्र में रक्खे । तदनन्तर उचित प्रमाण को जानने वाला पाचक **इस कल्क** में से लेकर घटिकाकार करैला के फल के अन्दर भर दे **और उसके रस को** चलाकर पहले के टुकड़े से बन्द कर दे । इसके बाद पूगपट्ट के सुन्दर **रस्सी से** आवेष्टित कर गरम घी में छोड़ दे और इस कारवल्ली फल पाक को **खाने के** लिये दे । यह कारवल्ली फल पाक ( करैला की कलौजी ) पथ्य, श्लेष्म **हर, वात हर तथ** सभी रोगो को शान्त करने वाला है ॥ ३९५-४०८ ॥



### ग्रन्थान्तरे कारवल्लीफफलपाकविधिर्गुणाश्च

कानिचित्कारवल्यास्तु फलानि सुशुभानि च ।
समादाय पुनस्तानि सूदः पाकविदाम्वरः ॥ ४०९ ॥
शोधितं क्रिमिभिः सम्यग्बहिरन्तः स्थितं पुनः ।
छित्वा च विसृजेत्तेषामग्राणि च ततः पुनः ॥ ४१० ॥
संच्छिद्य च पुनस्तानि शकलानि समं ततः ।
निधाय प्रवणीभाण्डे पुनस्तानि ततः परम् ॥ ४११ ॥
सैन्धवस्य ततश्चूर्णं विकिरेत्तेषु मानतः ।
जम्बीराम्लजलं सिञ्चेत् पुनस्तेषु प्रमाणतः ॥ ४१२ ॥
पचेच्चुल्यां ततस्तानि भाण्डमारोप्य पाकवित् ।
छादयित्वा पचेत्तानि पिधानेन तदाननम् ॥ ४१३ ॥
पिधानेन विना तेषां पाकश्चेत्तिक्तता भवेत् ।
अतः पिधानं संरक्षेत् यावत्पाकं समन्ततः ॥ ४१४ ॥
जले विलीनपाकस्य तानि ज्ञात्वावतारयेत् ।
नवं घृतं समासिच्य सर्पिषा तानि भर्जयेत् ॥ ४१५ ॥
अन्यस्मिन् प्रवणीभाण्डे भर्जयेद्द्रामठेन तत् ।
चातुर्जातकचूर्णञ्च चूर्णञ्च मरिचस्य च ॥ ४१६ ॥
चूर्णं च विकिरेत्तत्र मेथ्याजीरकसम्भवम् ।
कुस्तुम्बरीं च तत्रैव कैटर्यं च विनिक्षिपेत् ॥ ४१७ ॥
घनसारादिना सम्यक् कस्तूरीं च विनिक्षिपेत् ।
तथा कुङ्कुमचूर्णं च किञ्चित्किञ्चिद्धिमाम्बु च ॥ ४१८ ॥
एभिः साकं मेलयित्वा सूदस्तान्यवतारयेत् ।
पूगपट्टस्य नेत्रेण बद्ध्वा तानि नवेन च ॥ ४१९ ॥
निक्षिपेदुष्णसंयुक्ते तानि सर्पिषि दापयेत् ।
एतच्च कारवल्यायाः फलं भुञ्ज्यात्सुखप्रदम् ॥ ४२० ॥
हितकृत्सर्वजन्तूनां पथ्यं ज्ञानप्रदं लघु ॥ ४२१ ॥

**अन्य ग्रन्थ के अनुसार** करैला **का पाक बनाने की विधि—पाकशास्त्र में प्रवीय पाचक** बाहर-भीतर क्रिमि आदि से शुद्ध किये गये सुन्दर करैला के **फलों को लेकर** उनके अग्रभागों को काटकर फेंक दे पुनः उनके बराबर-बराबर **टुकड़े**

काटकर तथा वटलोही में रखकर उसमें उचित मात्रा में सेन्धा नमक छोड़ दे। इसके बाद उचित मात्रा में जम्बीरी नीबू का रस छोड़ दे और चूल्हे पर पात्र को रखकर पकावे। पकाते समय उसका मुख ढक कर पकावे। बिना ढके पकाने से उसकी तिक्तता रह जाती है। अतः जब तक पाक होता है तब तक ढक कर रक्खे जल में पाक हुआ जान कर उतार ले। इसके बाद नवीन घृत डाल कर घी के साथ भून ले। एक दूसरे पात्र में हिंग के साथ भून ले और चातुर्जातचूर्ण (दालचीनी, इलायची, तेजपत्र तथा नागकेशर), मरिच का चूर्ण, मेथी चूर्ण तथा जीरा का चूर्ण उसमें छोड़ दे। उसमें धनियाँ तथा जायफर का चूर्ण छोड़ दे और कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्य एवं कस्तूरी मिला दे। इसके बाद कुंकुम से सदृश रंग होने तक ठंडा जल छोड़ता जाय और पकाता जाय। पाचक इन पूर्वोक्त सभी द्रव्यों को मिलाकर उतार ले। नवीन पूगपट्ट नेत्र से बाँध कर गरम धी में छोड़ दे और खाने के लिये प्रदान करे। इस करैला फल के शाक को सुख पूर्वक खाय। यह सभी मनुष्यों के लिये हितकर, पथ्य, ज्ञानप्रद तथा सुपच है॥ ४०९-४२१॥

### अन्य विधिः

कानिचित्कारवल्ल्यास्तु फलानि पुनराहरेत्।
पूर्ववच्छोधयेत्तानि कल्किन्या तीव्रधारया॥ ४२२॥
छित्वा त्रिधा चतुर्धा वा पूर्ववत्पाकवित्पचेत्।
भर्जयेत्पूर्ववत्तानि रक्षेदन्यत्र बुद्धिमान्॥ ४२३॥
तण्डुलस्योदकं किञ्चित् सिञ्चेद्भाण्डे ततः सुधीः।
कल्कं च मरिचादीनां क्षिप्त्वा तत्र विलोडयेत्॥ ४२४॥
जलं च तादृशं सूदो जालिन्या च विशोधयेत्।
भाण्डे निधाय प्रपचेत् च्युल्यां तन्मेलनं बुधः॥ ४२५॥
कैटर्यं तत्र निक्षिप्य धान्याकं तुं विनिक्षिपेत्।
मेथीजीरकचूर्णं च क्षिप्त्वा क्वाथेऽवतारयेत्॥ ४२६॥
घनसारादिभिः सम्यक् तं क्वाथमधिवासयेत्।
भोजनावसरे प्राप्ते भर्जितं च सुरक्षितम्॥ ४२७॥
कारवल्लीफलं तत्र निक्षिप्याथ समाहरेत्।
दीपनं पाचनं रुच्यं सर्वामयहरं परम्॥ ४२८॥
कारवल्लीफलमिदं श्लेष्मवातहरं परम्॥ ४२९॥

**करैलाफल का पाक बनाने की दूसरी विधि**—पूर्वोक्त प्रकार से शोधित कुछ करैला के फल को लेकर तीव्र धार वाले चाकू से तीन या चार टुकड़ा बनाकर



पाचक पूर्ववत् पकावे और पहले की ही तरह नवीन घी हींग आदि के साथ भून ले तथा कहीं अच्छी तरह रख दे। इसके बाद बुद्धिमान् पाचक चावल का धोअन किसी पात्र रक्खे और मरिच, चातुर्जात आदि का कल्क उसमें छोड़कर मिला दे। इस जल को छननी से छान ले। पुनः पात्र में उस मिलित जल को रखकर चूल्हा के ऊपर पकावे। उसमें जायफल छोड़कर धनिया छोड़ दे और मेथी एवं जीरा का चूर्ण छोड़कर पक जाने पर उतार ले। भोजन का समय होने पर भून कर सुरक्षित रक्खे हुए करैला के फल को उसमें छोड़ कर मिला दे तथा खाने को दे। यह करैला का फलपाक जाठराग्नि दीपक, पाचक, रुचिकारक, अच्छी तरह सभी प्रकार के रोगों को दूर करने वाला तथा कफ एवं वातविकारों को दूर करता है॥ ४२२-४२९॥

### कोशातकीफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

कोशातकी फलस्यैवं सुजातस्य नवस्य च।
कृत्वा पाकादिकं तस्य दापयेद्भक्षयेद्बुधः॥ ४३०॥
कोशातकी फलं रुच्यं कफ-पित्त हरं लघु।
कुष्ठ-मेह-क्रिमि-श्वास-कासारुचिविनाशनम्॥ ४३१॥

**कोशातकी (नेनुआ) के फल का पाक बनाने की विधि तथा गुण**—सुन्दर नवीन नेनुआ के फल को लेकर पूर्वोक्त फलपाकनिर्माणविधि की तरह पाक करे और बुद्धिमान् पाचक खाने के लिये दे और स्वयं खाय। यह कोशातकी फल का शाक रुचिकारक, कफ-पित्तनाशक तथा हल्का है और यह कुष्ठरोग, प्रमेह, क्रिमिरोग, श्वासवृद्धि, कास (खांसी) तथा अरोचक को नाश करता है॥ ४३०-४३१॥

### बालकोशातकीफलस्य गुणाः

मधुरं गुरुपित्तघ्नं बालकोशातकीफलम्।
श्लेष्मपित्तकरं दिव्यं विषमज्वरनाशनम्॥ ४३२॥

**बालकोशातकीफल (बाल नेनुआ) के फल का गुण**—बालकोशातकीफल, मधुर, भारी, पित्तनाशक, फक-पित्तहर, दिव्य (उत्तम) तथा विषम ज्वर नाशक है॥ ४३२॥

### कोशातकीमहाकोशातकीफलयोर्गुणाः

कोशातकीफलं पक्वं लालासृक्क्रिमिनाशनम्।
वृष्यं विषघ्नं मधुरं महाकोशातकीफलम्॥ ४३३॥

**छोटा तथा बड़ा नेनुआ के फल का गुण**—छोटा नेतुआ का पका फल,

लालस्राव, रक्तविकार तथा क्रिमिरोग को नाश करता है। बड़ा नेनुआ का फल वीर्यवर्द्धक, विषनाशक तथा मधुर होता है ॥ ४३३ ॥

### पटोलफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

पटोलस्य फलं सम्यगाहरेत् सूदकोविदः।
सम्भारादीन् विनिक्षिप्य तत्पचेत्पूर्ववत्पुनः ॥ ४३४ ॥
वासयित्वा पुनस्तच्च वेष्टयित्वा प्रदापयेत्।
उष्णवीर्यकरं स्वादु त्रिदोषघ्नं विपाकतः ॥ ४३५ ॥

**परवल के फलका शाक बनाने की विधि तथा गुण**—विद्वान् पाचक परवल के फल को अच्छी तरह लेकर तथा सम्भारादि ( मसाला-नमक आदि ) छौंकर पूर्ववत् पकावे और सुगन्धित द्रव्य कर्पूर आदि से सुगन्धित कर तथा पूगपट्ट नेत्र से वेष्टित कर खाने के लिये दे। यह उष्णवीर्य, विपाक में मधुर तथा त्रिदोष नाशक है ॥ ४३४-४३५ ॥

### विम्बफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

प्रयत्नेन समादाय बिम्बस्य तरुणं फलम्।
शलाकया पुनः सम्यक् छिन्द्यात्तच्च समन्ततः ॥ ४३६ ॥
निधाय प्रवणीभाण्डे सिञ्चेत्तत जलं बुधः।
पक्त्वा तच्च पुनः सम्यक सर्पिषा च पुनः पचेत् ॥ ४३७ ॥
धूपयेद्धिङ्गुना तच्च वासयेत्कर्पूरादिभिः।
वेष्टयित्वाथ नेत्रेण दापयेद्भोजनार्थिने ॥ ४३८ ॥
इदं ब्रिम्बफलं वृष्यं चक्षुष्यं वातपित्तजित्।
हितं कृच्छ्रहरं पथ्यं शुक्रदं कामलादिजित् ॥ ४३९ ॥
पितरक्तक्षयश्वासतृष्णाकासनिवारणम् ॥ ४४० ॥

**बिम्ब फल ( कुन्दरु फल ) का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—बुद्धिमान् पाचक बिम्ब ( कुन्दरु ) फल का तरुण फल प्रयत्न पूर्वक लेकर उसको चारों तरफ से शलाका द्वारा अच्छी तरह काट दे और बटलोही में रखकर जल छोड़ दे उसको अच्छी तरह पकाकर पुनः घी के साथ पकावे और हींग का छेंवक देकर धूपित कर ले। इसके बाद कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्य से सुगन्धित बना ले। इसको पूगपट्ट नेत्र से आवेष्टित कर भोजन करने वाले के लिये दे। बिम्ब फल ( कुन्दरु फल पाक ) वीर्यवर्द्धक, नेत्र के लिये हितकर तथा वात पित्त को जीतने वाला है और यह मूत्र कृच्छ्र के लिये हितकर, पथ्य, शुक्रप्रद, कामला रोग को



जीतने वाला तथा रक्त पित्त, क्षय रोग श्वास वृद्धि, प्यास एवं कास ( खाँसी ) को दूर करने वाला है ॥ ४३६-४४० ॥

### कोकान्दोलफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

पूर्ववद् विपचेद्विद्वान् कोकान्दोलफलं नवम्।
श्लेष्मपित्तहरं स्वादु स्निग्धं रुचिकरं परम्।
स्वेदनं गुरु वृष्यं च वन्हिमान्द्यकरं परम् ॥ ४४१ ॥

**कोकान्दोल फल का पाक बनाने की विधि तथा गुण**—नवीन कोकान्दोल फल को लेकर विद्वान् पाचक पूर्ववत् पकावे और भोजन में प्रयोग करे। यह कफ-पित्त को दूर करने वाला, स्वादिष्ट, स्निग्ध, उत्तम रुचिकारक, स्वेदन करने वाला, गुरु, वीर्यवर्द्धक तथा मन्दाग्नि कारक होता है ॥ ४४१ ॥

### कलिङ्गफलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

फलान्यादाय रम्याणि कलिङ्गस्य नवान्यथ।
शोधनं छेदनं पाकं पूर्ववद्विपचेद्बुधः ॥ ४४२ ॥
योगं च मरिचादीनां कुर्यात्तेषां ततः पुनः।
पाकं कृत्वा घृतेनैव भर्जयेद्रामठेन च ॥ ४४३ ॥
वासयेद्घनसारेण बद्ध्वा नेत्रेण दापयेत्।
कलिङ्गस्य फल छेद्यं सर्पिषा तच्च भर्जयेत् ॥ ४४४ ॥
वासयित्वा ततस्तच्च वेष्टयित्वा प्रदापयेत्।
हृद्यं कफजदोषघ्न दीपनं ग्राहिरोचनम् ॥ ४४५ ॥

**कलिंग ( बहेड़ा ) फल का पाक बनाने की विधि तथा गुण**—सुन्दर एवं नवीन बहेड़ों के फल को लेकर शोधन करे, काट ले तथा पूर्ववत् फल पाक विधि के अनुसार पकावे और उसमें मरिच, धनिया, चातुर्जात के चूर्ण मिला दे। पुनः घृत के साथ पकाकर हींग के साथ भून ले। इसके बाद कर्पूर से सुगन्धित कर तथा पूगपट्ट नेत्र से बाँधकर खाने के लिये दे। कलिंग के फल को लेकर काट ले तथा उसको घी में भून ले। इसके बाद कर्पूर से सुगन्धित कर तथा पूगपट्ट नेत्र से आवेष्टि कर दे। यह हृदय को बल देने वाला, कफज दोष को नाश करने वाला जाठराग्नि दीपक, ग्राही तथा रुचिकारक होता है ॥ ४४२-४४५ ॥

### कुबेराक्षिपर्णपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

समादाय कुबेराक्ष्याः पर्णं सुतरुणं नवम्।
तत्तिक्तमोचनं कुर्यात् कुण्डलीचूर्णयोगतः ॥ ४४६ ॥

अथवा तण्डुलीयोत्थैः खण्डैर्वा तद्विमोचनम् ।
अनेनैव प्रकारेण गते तिक्ते भवेन्मम ॥ ४४७ ॥
सम्भारादीन् पुनस्तत्र पूर्ववत् परियोजयेत् ।
बद्ध्वा तत्पूगपट्टेन वेष्टयित्वा प्रदापयेत् ॥ ४४८ ॥
क्रिमिहृद्दीपनं पथ्यं गुल्मशूलानिलापहम् ॥ ४४९ ॥

**कुबेराक्षी ( करञ्ज ) पत्र का पाक बनाने की विधि तथा गुण—** नवीन तथा सुन्दर तरुण कुबेरक्षी का पत्र लेकर कुण्डली ( गुडूची ) चूर्ण के साथ उबाल कर उसकी तिक्तता ( तिताई ) को दूर करे। अथवा चौराई के चूर्ण के साथ या खाँड़ के साथ तिक्तता को दूर करे। इस प्रकार पाक करने से तिक्तता नष्ट हो जाती है और वह मधुर हो जाता है। इसके बाद सम्भार ( मसाल-नमक ) आदि छोड़कर पुनः पूर्ववत् पाक करे और पूगपट्ट नेत्र से बाँधकर तथा आवेष्टित कर खाने के लिये दे। यह क्रिमि रोग को दूर करने वाला, जाठराग्नि दीपक, पथ्य, गुल्म रोग तथा शूल ( उदरशूल आदि ) को दूर करने वाला है।

## पुनर्नवापत्रशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

नवं पौनर्नवापत्रमाहरेत्तत्र पाकवित् ।
कारवल्लीदलैः शुण्ठ्या तत्तिक्तं च हरेत्परम् ॥ ४५० ॥
योगेनानेन तत्तिक्तं त्यक्त्वा तच्च ततः पचेत् ।
लवणादीन् यथायोग्यं कुर्यादाज्येन भर्जयेत् ॥ ४५१ ॥
वासयेद्वेष्टनात्पूर्वं यथापूर्वं च बुद्धिमान् ।
दीपनं पाचनं पथ्यं पाण्डुक्षयहरम्परम् ॥ ४५२ ॥

**पुनर्नवा के पत्तों का शाक बनाने की विधि तथा गुण—**पाकशास्त्रप्रवीण पाचक नवीन पुनर्नवा ( गदहपूरना ) के पत्तों को ग्रहण करे और करैला के पत्तों के साथ पकाकर उसकी तिक्तता को अच्छी तरह दूर करे। इस योग से उसकी तिक्तता को दूर कर पुनः पकावे। पुनः उसमें नमक मसाला आदि मिलाकर घी के साथ भून ले। इसके बाद बुद्धिमान् पाचक कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्य से पूगपट्ट नेत्र से आवेष्टित करने के पहले सुगन्धित कर ले तथा खाने के लिये दे। यह जाठराग्नि दीपक, पाचक, पथ्य पाण्डु रोग तथा क्षय रोग को दूर करता है॥

## अलर्कपत्रशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

अलर्कपत्रमच्छिद्रं तरुणं नवमाहरेत् ।
अंकोलपत्रयोगेन तत्तिक्तं च समाहरेत् ॥ ४५३ ॥



मुक्ततिक्तं पुनस्तच्च छित्वा सूक्ष्मान् ततः परम् ।
नवेन सर्पिषा तच्च भर्जयेद्रामठादिभिः ॥ ४५४ ॥
वासयेद्घनसारेण पूगपट्टेन वेष्टयेत् ।
पथ्यं रुचिकरं बल्यं दीपनं सर्वरोगजित् ॥ ४५५ ॥
ज्ञानप्रदं विवेके च क्रिमिजालं हरेदिदम् ॥ ४५६ ॥

**अलर्क ( मन्दार ) के पत्तों का शाक बनाने की विधि तथा गुण—** क्रिमि-दंशरहित, नवीन तथा तरुण मदार के पत्तों को ले ले तथा अंकोल ( ढ़ेरा ) के पत्तों के साथ उसकी तिक्तता को दूर करे। तिक्तता ( तिताई ) निकल जाने पर उन पत्तों को काटकर छोटा टुकड़ा बना ले और नवीन घी में हींग आदि का तड़का देकर भून ले ( नमक मसाला आदि छोड़ दे )। पुनः कर्पूर से सुगन्धित कर ले और पूगपट नेत्र से आवेष्टित कर खाने के लिये प्रयोग करे। मदार के पत्तों का शाक पथ्य, रुचिकारक, बलकारक, जाठराग्निदीपक तथा सभी रोगों को दूर करने वाला हैं। यह विवेक के सम्बन्ध में ज्ञान देने वाला तथा क्रिमिरोग में क्रिमियों के जालों को दूर करता है॥ ४५४-४५६ ॥

## कुमारीदलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

ततः कुमारीमादाय सुकुमारदलैर्युताम् ।
शोधयित्वा तु कल्किन्या शोधयेच्चतुरस्रकम् ॥ ४५७ ॥
मुमुक्षुस्तद्गतं तिक्तं प्रवण्यां तानि निःक्षिपेत् ।
पुनस्तानि पचेत्सम्यगार्द्रतालदलैः समम् ॥ ४५८ ॥
विश्राव्य तद्रसं तानि लवणे तानि योजयेत् ।
कुङ्कुमच्छविपर्यन्तं सर्पिषा तानि भर्जयेत् ॥ ४५९ ॥
एर्वारुपिण्डवत्कृत्वा सर्वसम्भारमेलनम् ।
शकलानि पुनस्तानि घनसारेण वासयेत् ॥ ४६० ॥
बद्ध्वा क्रमुकपट्टेन पुनस्तानि प्रदापयेत् ।
एतद्रसायनं रुच्यं बल्यं धातुविवर्धनम् ॥ ४६१ ॥

**कुमारी ( घी कुँआर ) के पत्तों का शाक बनाने की विधि तथा गुण—** घीकुआर के मुलायम पत्तों को लेकर साफ करे और चाकू से चारों ओर की छिलका निकाल ले। उसकी तिक्तता को दूर करने के लिये बटलोही में छोड़े और गीले ताड़ के पत्तों के साथ अच्छी तरह पकावे। पुनः उसके रस को छानकर नमक मिला दे और केशर की तरह वर्ण होने तक घी के साथ उनको भूने। भूनने से ककरी के आकार का बनाकर सभी सम्भार ( मसाला आदि ) मिला दे

इसके बाद टुकड़ा-टुकड़ा बनाकर कर्पूर से सुगन्धित बना ले और पूगपट से बाँध कर खाने के लिये प्रदान करे। यह रसायन, रुचिकारक, बलदायक तथा धातुओं को बढ़ाने वाला है ॥ ४५७-४६१ ॥

### अमृतापत्रशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

ततोऽमृतालतोत्पन्नं पर्णमानीय शोभनम् ।
तत्तिक्तमोचनं कुर्यान्निशाचूर्णेन यत्नतः ॥ ४६२ ॥
शंखचूर्णेन वा कुर्यात् क्रमुकस्य फलेन वा ।
तरुदुग्धेन वा कुर्यात्तद्दलैस्तण्डुलेन वा ॥ ४६३ ॥
अनेनैव प्रकारेण त्यक्ततिक्तञ्च तद्दलम् ।
प्रक्षिपन् तद्दलैर्माषं मरीचाजाजिसैन्धवम् ॥ ४६४ ॥
घृतेन भर्जयेत्तस्मात् तेन त्वमृतभर्जितम् ।
रुच्यं बल्यं त्रिदोषघ्नं दीपनं धातुवर्द्धनम् ॥ ४६५ ॥

**गुडूची के पत्तों का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—अमृता ( गुडूची ) लता के सुन्दर पत्तों को लेकर हल्दी के चूर्ण के साथ इसकी तिक्तता को दूर करे या शङ्ख के चूर्ण क्रमुक ( सुपारी ) का फल, बरगद का दूध या बरगद का पत्ता अथवा चावल के साथ उसकी तिक्तता को दूर करे। इसी प्रकार तिक्तता रहित उन पत्तों को बटलोही में छोड़कर उनके साथ उड़द, मरिच, जीरा तथा सेन्धा नमक के चूर्ण को मिला दे और घी के साथ भून ले। यह घी के साथ भूनने पर अमृत के साथ भूनने की तरह हो जाता है। यह रुचिकारक, बलदायक, त्रिदोषनाशक, जाठराग्निदीपक तथा धातुवर्द्धक होता है ॥ ४६२-४६५ ॥

### निम्बपत्रशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

पत्रं निम्बस्य तरुणं समादेयमनामयम् ।
पचेत्पौनर्नवैः पत्रैर्मत्स्याक्ष्याश्च फलैस्तथा ॥ ४६६ ॥
तद्गतं मोचयेत्तिक्तं कार्पासस्य दलेन वा ।
ततः सम्भारसंयुक्तं तस्मिन् मधुरता भवेत् ॥ ४६७ ॥
वासयेद् घनसारेण पूगनेत्रेण वेष्टयेत् ।
त्रिदोषशमनं पथ्यं सर्वव्याधिहरं शुभम् ॥ ४६८ ॥

**नीम के पत्तों का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—निरोग स्वच्छ एवं तरुण नीम के पत्तों को लेकर पुनर्नवा के पत्तों के साथ या मत्स्याक्षि ( मकोय ) के फलों के साथ पकावे अथवा कपास के पत्तों के साथ पकाकर उसकी तिताई को दूर करे। इसके बाद उसमें सम्भार नमक मसाला आदि मिला दे। इससे उसमें मिठास आ जाती है। तदनन्तर कर्पूर से सुगन्धित बना दे तथा पूगपट्ट नेत्र से आवेष्टित कर दे। यह खाने से त्रिदोष को शान्त करता है, पथ्य है तथा अच्छी तरह सभी रोगों को दूर करता है ॥ ४६६-४६८ ॥



### अर्कपत्रस्य शाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

अर्कस्य तरुणमानीय दलमात्रन्तु सूदराट् ।
आर्द्रतालदलैस्तिक्तं तद्गतं परिमोचयेत् ॥ ४६९ ॥
कल्किन्या तद्दलं सूक्ष्मं छित्वा तत्प्रवणीं नयेत् ।
लवणादीन् विनिक्षिप्य सर्पिषा भर्जयेच्च तत् ॥ ४७० ॥
वासयेत् घनसारेण वेष्टयेत् क्रमुकस्य च ।
तप्ते सर्पिषि निक्षिप्य दापयेत्तद्दलं बुधः ॥ ४७१ ॥
विपाकसमये तत्तु समीरणहरं भवेत् ॥ ४७२ ॥

**अर्क ( मदार विशेष ) के पत्तों का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—उत्तम पाचक मदार के तरुण पत्तों को लेकर गीले ताड़ के पत्तों के साथ पकावे और उसके अन्दर की तिक्तता को दूर करे। इसके बाद उसके पत्तों को चाकू से छोटे-छोटे टुकड़े बना ले। बटलोही में छोड़ के पुनः उसमें नमक मसाला छोड़कर घी में भून ले और कर्पूर से सुगन्धित करे तथा पूगपट्ट नेत्र से आवेष्टित कर ले। तदनन्तर गरम घी में छोड़कर खाने के लिये दे। यह विपाक के समय में वात नाशक होता है ॥ ४६९-४६२ ॥

### पाटलीपर्णशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

पाटलीपर्णमादाय तरुणं व्रणवर्जितम् ।
संछित्वा सूक्ष्मकल्किन्या प्रविण्यां प्रक्षिपेत्ततः ॥ ४७३ ॥
चिञ्चालवणिकापत्रं निक्षिप्य विपचेच्च तत् ।
तत्र विद्वान् प्रकुर्वीत सर्वसम्भारमेलनम् ॥ ४७४ ॥
स्नेहश्रेष्ठं च तत्कुर्यात् वासनादींश्च पूर्ववत् ।
समीरहरणं पथ्यं कफपित्ताहरं भवेत् ॥ ४७५ ॥

**पाटली ( पाढ़ल ) पत्र का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—क्रिमिदंश आदि से रहित; निरोग तथा तरुण पाटली ( पाढ़ल ) के पत्तों को लेकर तथा छोटी चाकू से काटकर बटलोही में रक्खे। इसके बाद इमली तथा लवणिका ( लोना ) का पत्र छोड़कर उसको पकावे। तदन्तर विद्वान् पाचक सम्भार ( नमक मसाला आदि ) को मिला दे और घी में भून ले। इसके बाद कर्पूर से सुगन्धित कर तथा

पूगपट्ट नेत्र से आवेष्टित कर खाने के लिये दे। यह वात को दूर करनेवाला पथ्य तथा कफ-पित्त को दूर करता है ॥ ४७३–४७५ ॥

### वटपत्रपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

वटच्छदान् पचेदाम्ले दलैश्चिञ्चासमुद्भवैः ।
पूर्वं वै भेदनं पाकं सम्भारस्य च मेलनम् ॥ ४७६ ॥
कृत्वा च पूर्ववत् तत्र वासनादींस्तदाचरेत् ।
एतद् वटच्छदं पथ्यं व्रणजित् सर्वदोषजित् ॥ ४७७ ॥
कफपित्तहरं पथ्यं दीपनं पाचनं भवेत् ॥ ४७८ ॥

**वटपत्र का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—वट के पत्तों को इमली के पत्तों के अम्ल रस में पकावे। पहले काट ले तथा पका ले और सम्भार ( नमक-मसाला आदि ) मिला दे। इसके बाद पूर्ववत् घी में भूनकर तथा कर्पूर आदि से सुगन्धित कर पूगपट्ट नेत्र से आवेष्टित कर खाने को दे। यह वटपत्र का शाक पथ्य है तथा व्रण एवं सभी दोषों को जीतने वाला है। इसके अतिरिक्त कफ-पित्त को दूर करनेवाला, पथ्य जाठराग्नि दीपक तथा पाचक होता है ॥ ४७६-४७८ ॥

### सुकुण्डलीपत्रशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

एवं सुकुण्डलीपत्रं मेघनाददलैः पचेत् ।
वृश्चिकस्य विषं हन्यात् कफदोषहरं भवेत् ॥ ४७९ ॥

**सुकुण्डली पत्र का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—सुकुण्डली पत्र को लेकर मेघनाद पत्र ( चौराई पत्र ) के साथ पकावे और पूर्ववत् घी में भूनकर कर्पूर आदि से सुगन्धित तथा पूगपट्ट नेत्र से आवेष्टित कर खाने को दे। यह वृश्चिक ( बिच्छू ) के विष को नाश करता है तथा कफविकार को दूर करता है ॥ ४६९ ॥

### शाल्मलीकुसुमपर्णयोर्पाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

शाल्मलीकुसुमं पर्णं समादाय च पाकवित् ।
जम्बूकल्केन समिश्रं पचेत्तत्स्वादु जायते ॥ ४८० ॥
सम्भारादिप्रयोगं तु सर्वं पूर्ववदाचरेत् ।

**सेमर के फूल तथा पत्तों का शाक बनाने की विधि तथ गुण**—पाकज्ञ-पाचक सेमर के पुष्प तथा पत्र को लेकर जामुन के कल्क में मिलाकर पकावे इससे वह स्वादिष्ट हो जाता है। सम्भार ( नमक-मसाला ) आदि सभी प्रयोग पूर्ववत् करे। अर्थात् पाक, घी में भूनना, सुवासित करना तथा पूगपट्ट नेत्र से आवेष्टित करे ॥ ४८० ॥



### इक्ष्वालिकाग्रशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

इक्ष्वालिकाग्रमानीय तण्डुलीयशिफैः पचेत् ॥ ४८१ ॥
एवं पाके कृते तस्य मृदुत्वं स्वादु जायते ।
स्वादु वृष्यं हिमकरं श्रमजित् पित्तजिद्भवेत् ॥ ४८२ ॥

**इक्ष्वालिकाग्र ( कास का अग्रभाग ) का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—कास का अग्र भाग लेकर चौलाई की जड़ के साथ पकावे। इस प्रकार पाक करने से वह मुलायम तथा स्वादिष्ट हो जाता है। यह स्वादिष्ट, वीर्यवर्द्धक, शीत-कारक, थकावट एवं पित्त को जीतने वाला है ॥ ४८१-४८२ ॥

### अक्षीवपल्लवशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

अक्षीवपल्लवं शाकं पचेत्केतकिमस्तकैः ।
अथवा वंशमूलेन मधुरत्वं च मार्दवम् ।
इदं रुचिकरं पथ्यं श्लेष्मवातविनाशनम् ॥ ४८३ ॥

**अक्षीव ( महानिम्ब ) पत्र का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—महा-निम्ब ( वकायन ) के पत्तों को केतकी के मस्तक के साथ पकावे अथवा बाँस की जड के साथ पकावे। इससे वह मधुर तथा मुलायम हो जाता है। यह रुचि-कारक पथ्य तथा कफ एवं वात को नाश करता है ॥ ४८३ ॥

### शिलाशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

विषघ्नीं चूर्णिकालोपा शेफाली मदपीतका ।
एतासां मूलपत्राद्यैः पक्वा मृद्वीभवेच्छिला ॥ ४८४ ॥

**शिला ( नील दूर्वा ) का शाक बानने की विधि तथा गुण**—शिला ( नील दूर्वा ) विषघ्नी ( कटुकी ) चूर्णिका, आलोपा, शेफाली ( मेउड़ी ) तथा मद-पीतिका के मूल एवं पत्र के साथ पकाने पर मुलायम हो जाती है। इसका शाक पूर्ववत् विधि के अनुसार बना कर प्रयोग करे ॥ ४८४ ॥

### आकलीदलपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

मुण्डिकापत्रपक्वश्चेत् स्वादु स्यादाकलीदलम् ।
अत्रापि पाकवित् श्रेष्ठं सर्वं पूर्ववदाचरेत् ।
इदं लघु क्रिमिहरं मलस्रावि त्रिदोषजित् ॥ ४८५ ॥

**आकली पत्र का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—आकली पत्र को लेकर मुण्डी के पत्तों के साथ पकावे। इससे वह स्वादिष्ट हो जाता है। यहाँ पर भी पाकवेत्ता पूर्वपाकविधि के अनुसार सब कुछ अच्छी तरह सम्भार आदि मिला

कर शाक बना ले। यह हल्का, क्रिमिनाशक, मलस्रावक (दस्तावर) तथा त्रिदोष को जीतने वाला होता है ॥ ४८५ ॥

### धत्तूरपत्रशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

धत्तूरपत्रं विपचेत् पद्मपत्रेण कोमलम् ।
गोक्षुरस्य च मूलेन बिल्वपत्रेण पाकवित् ॥ ४८६ ॥
सम्भारमेलनं कुर्यात् पूर्ववत्साधुसिद्धये ।
एतत्कफहरं पथ्यं शीतव्याधिहरं परम् ॥ ४८७ ॥

**धत्तूर पत्र का शाक बनाने की विधि तथा गुण—** मुलायम धत्तूर के पत्तों को लेकर कमल के पत्तों के साथ पकावे। पाकवेत्ता पाचक गोक्षुर (गोखरू) तथा बिल्वपत्र के साथ पकावे और अच्छीतरह सिद्ध होने के लिये सम्भार (नमक मसाला आदि) मिला दे। इसके बाद सुगन्धित एवं आवेष्टित कर खाने को दे। यह कफ को दूर करने वाला, पथ्य तथा अच्छी तरह शीतजन्य रोगों को नाश करने वाला है ॥ ४८६-४८७ ॥

### पद्मपत्रशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

पद्मपत्रं श्वदंष्ट्राणां मूलेनैव पचेद् यदि ।
स्वादु पथ्यं लघुहितं वृष्यं पित्तहरं भवेत् ॥ ४८८ ॥

**पद्म (कमल) पत्र का शाक बनाने की विधि तथा गुण—** कमल के मुलायम पत्तों को लेकर श्वदंष्ट्रा (गोखरू) की जड़ के साथ ही यदि पकाया जाय तो वह स्वादिष्ट, पथ्य, हल्का, हितकर, वीर्यवर्द्धक तथा पित्तहर होता है ॥ ४८८ ॥

### किंशुकपत्रशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

किंशुकस्य दलम्पाकं कुर्यात्तिक्तमोचनम् ।
तण्डूलीयकमूलैर्वा तद्दलैर्वा विधानतः ।
श्लेष्मवातहरं पथ्यं व्रणनुत् क्रिमिदोषनुत् ॥ ४८९ ॥

**किंशुक (ढ़ाक) के पत्तों का शाक बनाने की विधि तथा गुण—** पलाश के पत्तों को लेकर चौराई की जड या पत्तों के साथ तिक्तता को दूर करने के लिए विधिपूर्वक पाक करे। शेष सम्भार आदि का मेलन, आवासन एवं आवेष्टन आदि पूर्ववत् करे और खाने में प्रयोग करे। यह पलाशपत्र शाक कफ एवं वात को दूर करनेवाला, पथ्य, व्रण तथा क्रिमिविकार को दूर करनेवाला है ॥ ४८९ ॥

### वनशिग्रुपत्रशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

वनशिग्रुदलं चैव पचेत् श्रीहस्तिनीदलैः ।
यद्वा पुनर्नवदलैः शङ्खचूर्णेन वा पुनः ॥ ४९० ॥



कन्दवत्सा प्रयोक्तव्या सर्पिषा भर्जयेत्पुनः ।
इदं स्वादुतरा लघ्वी वातपित्तविनाशिनी ॥ ४९१ ॥

**वन सहिजन के पत्तों का शाक बनाने की विधि तथा गुण—** वन सहिजन के पत्तों को लेकर गजशुण्डी के पत्तों (या इन्द्र वारुणी के पत्तों) के साथ पकावे अथवा पुनर्नवा के पत्ते या शंख के चूर्ण के साथ पकावे। इसका प्रयोग कन्दशाक की तरह करना चाहिए और पुनः घी के साथ भून ले। यह गजशुण्डी अत्यन्त स्वादिष्ट, हल्की तथा वात-पित्त को नाश करनेवाली है ॥ ४९०-४९१ ॥

### कुरण्टदलशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

शिग्रुमूलेन संयुक्तं कुरण्टकदलं पचेत् ।
स्वादु श्लेष्महरं पथ्यं बृंहणं बलवर्द्धनम् ॥ ४९२ ॥

**कुरण्ट (कट सरैया) के पत्तों का शाक बनाने की विधि तथा गुण—** कटसरैया के पत्तों को सहिजन की जड के साथ पकावे और पूर्ववत् मसाला आदि मिला कर शाक तैयार करे तथा खाने के लिये प्रयोग करे। यह स्वादिष्ट, कफहर, पथ्य, मांसवर्द्धक तथा वातवर्द्धक है ॥ ४९२ ॥

### पलाण्डुशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

भवेत्पलाण्डुः सुरभिस्तण्डुलीयजलैः पचेत् ।
वातश्लेष्महरो रुच्यः पथ्यः कायाग्निदीपकः ॥ ४९३ ॥

**प्याज का शाक बनाने की विधि तथा गुण—** प्याज को चौराई के क्वाथ के साथ पकावे वह सुगन्धित हो जाता है। प्याज का शाक वात-कफ को दूर करने वाला, रुचिकारक, पथ्य तथा जाठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला है ॥ ४९३ ॥

### सैंकसशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

सैंकसं विपचेद्विद्वान् क्षुद्रदन्तिदलैः सह ।
मृदुत्वं स्वादुतां याति गोधूमकणवच्च तत् ॥ ४९४ ॥

**सैंकस का शाक बनाने की विधि तथा गुण—** विद्वान् पाचक सैंकस को क्षुद्रदन्ति के पत्तों के साथ पकावे। यह गेहूं के चूर्ण सदृश मुलायम तथा स्वादिष्ट हो जाता है ॥ ४९४ ॥

### वासापत्रशाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

वासापत्रं तु तरुणमानीय क्रिमिवर्जितम् ।
चूर्णतोयेन विपचेत्तिक्तविनिवृत्तये ॥ ४९५ ॥
गते तिक्ते पुनस्तच्च मन्थानेन विलोडयेत् ।
तत्र निक्षिप्य संभारान् पूर्ववद्विपचेच्च तत् ॥ ४९६ ॥

पुनश्च वासनादौ च कृते तन्मधुरायते ।
विपाकसमये चेदं कासश्वासहरं भवेत् ॥ ४९७ ॥

**वासा ( अडूसा ) के पत्र का शाक बनाने की विधि तथा गुण**—क्रिमिदंश रहित मुलायम अडूसा के पत्तों को लेकर उसकी तिताई दूर करने के लिये चूने के पानी के साथ पकावे । पुनः तिताई निकल जाने के बाद उसको मथनी से मथ दे । इसके बाद उसमें सम्भार ( नमक-मसाला आदि ) पहिले की तर छोड़कर पकावे । पुनः कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों से सुगन्धित करने पर मधुर हो जाता है । यह शाक विपाक के समय में श्वास-कास को दूर करने वाला होता है ॥ ४९५–४९७ ॥

## सूदराट्पदप्राप्तिनिरूपणम्

सूदवेदमखिलं सुसूक्ष्मया संविदा समवलोक्य सर्वतः ।
पाकरूपमभिधेयमादराद्यो बिभर्ति हृदयेन सूदराट् ॥ ४९८ ॥

**सूदराज पद की प्राप्ति** -यो उत्तम पाचक सूक्ष्म विचार से चारो तरफ देखकर पाक रूप अभिधेय सम्पूर्ण सूदवेद ( पाकशास्त्र ) को हृदय से आदरपूर्वक ग्रहण करता है वह सूदराज ( पाचकों का राजा ) होता है ॥ ४९८ ॥

## पाकोपसंहारः

इति नलकृतं पाकं यो बिभर्त्यात्मबुद्धौ
स खलु परहितार्थं पूज्यते राजसङ्घैः ।
अपि च रिपुसमाजे संस्थिता कीर्तिनारी-
निजपतिमनुयामीत्यब्रुवन् प्रत्यगात्तम् ॥ ४९९ ॥

**इति नलकृत पाकदर्पणे प्रथमप्रकरणं समाप्तम्**

**पाक प्रकरण का उपसंहार**—यो पाचक इस नल कृत पाक शास्त्र को अपनी बुद्धि से दूसरों के हित के लिये धारण करता है वह राजाओं से पूजित होता है और भी शत्रुओं के समाज में स्थित कीर्तिरूपी स्त्री अपने पति के साथ जाऊँगी यह कहती हुई उसके पीछे चली जाती है ।

इति नलकृत पाकदर्पण का डा० इन्द्रदेव त्रिपाठीकृत माधुरी हिन्दी व्याख्या सहित पाकनिरूपण नामक प्रथम प्रकरण समाप्त ॥ १ ॥

●

# अथ ऋतुधर्मनिरूपणम्

## राजोवाच

पाकक्रियाविदां श्रेष्ठ ! सूद ! सर्वज्ञ ! सुव्रत ! ।
अनेकविद्याकुशल ! पाकवित् करिकेसरिन् ॥ १ ॥
वसन्तादि-ऋतोर्धर्माः पृथग्वस्तुनिषेविताः ।
एकस्तेन हितानेव परिकल्प्य प्रदर्शय ॥ २ ॥

**राजा ऋतुपर्ण का प्रश्न**—हे पाक क्रियाओं को जानने वालों में श्रेष्ठ ! सभी पाक विधि को जानने वाले ! शुद्ध व्रत को धारण करने वाले ! अनेक विद्या के विशेषज्ञ करिरूप पाक विद्या जानने वालों में सिंहरूप आप अलग-अलग वस्तुओं को सेवन किये जानेवाले वसन्त आदि ऋतुओं के धर्मों को एक-एक करके जिनसे हित होता है उनकी कल्पना कर प्रदर्शित करें ॥ १–२ ॥

## राजाऋतुपर्णस्योत्तरम्

तस्योत्तरं वक्तुकामो राजानमिदमब्रवीत् ।
दण्डचण्डादिदोर्दण्ड ! खण्डितारातिमण्डल ॥ ३ ॥
चण्डांशुमण्डलारेख ! कुण्डलद्वयमण्डित ! ।
श्रूयतां राजशार्दूल ! ऋतुपर्ण ! महामते ! ॥ ४ ॥
सन्ति प्रतिदिनं चित्रं ऋतवः स्वस्वधर्मकाः ।
प्रमाणं चेत्प्रवक्ष्यामि तेषां लक्षणमुत्तमम् ॥ ५ ॥
मासद्वयेन शीतो हि ऋतुरेकदिनेऽप्ययम् ॥ ६ ॥

**राजा ऋतुपर्ण के प्रश्न का उत्तर**—पाकसर्वज्ञ नल राजा ऋतुपर्ण के प्रश्न का उत्तर देने की इच्छा से उनसे बोले—हे दण्ड देने में प्रचण्ड ( मजबूत ) हाथों से शत्रु समूह को परास्त करनेवाले तथा प्रचण्ड सूर्यमण्डल के किरण के रेख से चमकते हुए दोनों कुण्डल वाले, राजाओं में सिंह, महान्, बुद्धिमान्, महाराज ऋतुपर्ण ! आप सुनें । प्रतिदिन चित्र-विचित्र, अपने-अपने धर्मवाले ऋतु ये हैं जिनके लक्षणों को प्रमाणसहित कहूँगा । दो माह शीत ऋतु होता है । यह नियम एक दिन में भी है ॥ ३–६ ॥

## ऋतुभेदविवेचनम्

ऋतुभेदं प्रवक्ष्यामि शृणु वेदप्रमाणतः ।
किमर्थमृतुभेदोऽयमुच्यते लोकमानतः ॥ ७ ॥

अयमेव भवत्यस्मिन् न कालनियमो ऋतुः।
मासद्वयेन कथितः क्रमोऽयं नोपपद्यते ॥ ८ ॥
तत्सृष्टिसमये सत्यं विचारविमुखो विधिः ॥ ९ ॥

**ऋतुओं के प्रकार का विचार**—हे राजन्! ऋतुओं के भेदों को वेद-प्रमाण के अनुसार कहता हूँ, सुनें। लोकप्रमाण के अनुसार यह ऋतुभेद किसलिये कहा गया है। इस सम्बन्ध में लोकप्रमाण से ही ऋतुओं का विभाग है। समय का कोई नियम नहीं है। दो माह का ऋतु होता है यह क्रम उपयुक्त नहीं है। यह सत्य है कि सृष्टि के समय में ब्रह्मा विचारविमुख हो गये थे ॥ ७–९ ॥

मूलप्रमाणरहितो लोके श्रौतप्रवाहतः।
ऋतूनामयमेवेति नियमो नोपपद्यते ॥ १० ॥
तस्मादिने दिने युक्त्या ऋतुभेदस्तु युज्यते।
दिनप्रथमभागेन ऋतुधर्मा भवन्त्यमी ॥ ११ ॥
भागेऽत्यस्मिन् भवन्त्येव ऋतवोऽन्ये तु कौशलात्।
ऋतुव्यतिकरे मानं देहभागधियो यतः ॥ १२ ॥
न च कालक्रमो बुद्धिः परं मानं मनीषिणः।
अर्थोऽयं कविभिस्सम्यक् कथितोऽयं विचार्यताम् ॥ १३ ॥

लोक में मूल प्रमाण के विना शास्त्र के कथनानुसार ऋतुओं का यही नियम है ऐसा कहना उपयुक्त नहीं है। अतः युक्ति से प्रतिदिन ऋतुभेद होता है दिन के पहले भाग में ये ऋतुधर्म होते हैं। दूसरे भाग में कुशलतापूर्वक विभाग के अनुसार अन्य ऋतुओं के धर्म होते ही है क्योंकि ऋतुओं के व्यतिक्रम (विभाजन) देहविभाग में बुद्धि ही प्रमाणित है अर्थात् जैसे देह के विभाग हैं वैसे ही ऋतुओं के विभाग हैं। विद्वानों की बुद्धि कालक्रम के अनुसार ऋतुपरक नहीं है। इस तात्पर्य को विद्वानों ने अच्छी तरह बताया है इसका विचार करें ॥ १०–१३ ॥

श्रुतिरप्याह तद्भेदानिच्छया तद्विकल्पतः।
मूलशास्त्रप्रमाणेन भोक्त्रे भोगप्रमाणतः ॥ १४ ॥
राज्ञः शक्तिबलादेव सेवकानां च कौशलात्।
क्रीडातिशक्ता राजानः प्रवक्ष्ये तान्यतः स्वयम् ॥ १५ ॥
षड्गुणा भिन्नधर्माश्च यथा राजानमाश्रिताः।
भिन्नधर्माश्च कतमा दिनमेकं तथा श्रिताः ॥ १६ ॥

श्रुति ने भी ऋतुओं के भेदों को वैकल्पिक इच्छा के अनुसार, मूल-शास्त्र के प्रमाण के अनुसार, खानेवाले के भोग के अनुसार, राजाओं की शक्ति से, सेवकों की



कुशलता से तथा क्रीडासक्त राजाओं का जो धर्म है उनको मैं कहूँगा। उन ऋतु-धर्मों को मैं कहता हूँ। छः गुण वाले ऋतुओं के भिन्नधर्म जिस प्रकार राजा में रहते हैं उसी प्रकार आश्रित कितने ऋतुधर्म एक दिन में रहते हैं उसको कहता हूँ ॥ १४–१६ ॥

## प्रतिदिनमृतूनां विभागक्रमनिरूपणम्

अहोरात्रं तु षड्भागं कुर्यात्सूर्योदयात् सुधीः।
न्यूनाधिकं विना कुर्यात् यथा कालक्रमाद्दिनम् ॥ १७ ॥
दिनस्य प्रथमे भागे वसन्ताख्यो ऋतुर्भवेत्।
अन्ये द्वितीये घस्रस्य वदेद् ग्रीष्माभिधो ऋतुः ॥ १८ ॥
दिवसस्त्रिगुणे भागे भवेद्वर्षाऽभिधो ऋतुः।
अह्नश्चतुर्थभागे च शरदाख्यो ऋतुर्भवेत् ॥ १९ ॥
दिनस्य पञ्चमे भागे हेमन्ताख्यो भवेदृतुः।
षड्विभागे तु घस्रस्य शिशिराख्यो ऋतुर्भवेत् ॥ २० ॥
तद्धर्मास्तत्र तेनैव भवन्ति कुशलैः क्रमात् ॥ २१ ॥

**प्रतिदिन के ऋतुओं के विभागक्रम का निरूपण**—बुद्धिमान् व्यक्ति दिन तथा रात्रि को सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त होने तक यथा काल क्रम के अनुसार छः भाग करे। दिन के पहले भाग में वसन्त नामक ऋतु होता है। दिन के दूसरे भाग में ग्रीष्म नामक ऋतु होता है। दिन के तीसरे भाग में वर्षा नामक ऋतु होता है। दिन के चौथे भाग में शरद् ऋतु होता है। दिन के पाँचवें भाग में हेमन्त नामक ऋतु होता है तथा दिन के छठवें भाग में शिशिर नामक ऋतु होता है। दिन के उन-उन भागों में क्रमशः पूर्वोक्त ऋतुओं के गुण होते हैं ऐसा बुद्धिमान जन समझें ॥ १७–२१ ॥

## वसन्तादिऋतुषु पथ्यं तद्गुणाश्च

वसन्तेह्नि ऋतौ पथ्यः कटुस्वादुरसः पटुः।
कुर्वन्ति बलकायाग्नि रुचीनर्थान् यथाक्रमम् ॥ २२ ॥
मध्वम्ललवणा भोग्या ऋतौ ग्रीष्मदिनस्य च।
शमयन्ति च पित्तादीन् शान्तिं कायस्य नित्यशः ॥ २३ ॥
वर्षाऋतौ दिने पथ्याः कटुतिक्तरसास्तथा।
शमयन्ति च वातादीन् कायाग्निं वर्द्धयन्ति च ॥ २४ ॥
शारदेऽह्नि ऋतौ भक्ष्याः स्वादुतिक्तरसान्विताः।
हेमन्तेऽह्नि ऋतौ स्वादु कटुतिक्तकषायकाः ॥ २५ ॥

शिशिरेऽह्नि ऋतौ तावत् तिक्तस्वादुरसास्समाः ।
अनेकान् कायसम्भूतान् दोषानाशु हरन्ति च ॥ २६ ॥
देशकालवयोऽवस्था — धातुदोषबलाबलम् ।
विद्वान् विचार्यं तान्येव प्रयत्नेन प्रयोजयेत् ॥ २७ ॥

**वसन्तादि ऋतुओं में पथ्य तथा उनके गुण**—वसन्त ऋतु के दिनों में कटु, मधुर तथा लवण रस वाले पदार्थ पथ्य होते हैं। ये यथा क्रम बल की वृद्धि, जाठराग्नि की वृद्धि तथा रुचि को बढाने वाले होते हैं। ग्रीष्म ऋतु के दिन में मधुर, अम्ल तथा लवण रस वाले पदार्थ खाने के योग्य हैं। ये वात-विकार को शान्त करते हैं तथा शरीर को शान्त रखते हैं। वर्षा ऋतु के दिन में कटु, मधुर तथा लवण रस वाले पदार्थ पथ्य हैं और ये वात आदि विकार को शान्त करते हैं तथा जाठराग्नि को बढ़ाते हैं। शरद् ऋतु के दिन में मधुर तथा तिक्त रस वाले पदार्थ खाने योग्य हैं। हेमन्त ऋतु के दिन में मधुर कटु तिक्त तथा कषाय रस वाले पदार्थ पथ्य हैं। शिशिर ऋतु में तिक्त तथा मधुर रस वाले पदार्थ सामान्यतः सेवन करने योग्य हैं। ये अनेक प्रकार के शरीर में होने वाले दोषों को शीघ्र ही नाश करते हैं। विद्वान् मनुष्य देश, काल, वय, अवस्था, धातु तथा दोषों के सबल एवं निर्बल का विचार कर उसी के अनुसार प्रयत्न पूर्वक प्रयोग करें ॥ २२-२७ ॥

## ऋतुसन्धिधर्मनिरूपणम्

ऋतुसन्धिषु सर्वेषु जन्तूनाञ्जायते कफः ।
अन्नारेकव्यतिकराद् अग्निमेदसमुद्भवात् ॥ २८ ॥
वसन्तग्रीष्मवर्षेषु अग्निर्ज्वलति देहिनाम् ।
शरद्धेमन्तशिशिर — ऋतुष्वनिलसम्भवः ॥ २९ ॥
सच्चिदानन्दरूपोऽयं पक्वापक्वरसालकः ।
अस्ति योऽसौ प्रकाशात्मा सर्व पायात्सदाशिवः ॥ ३० ॥

**ऋतुओं के सन्धिधर्म का निरूपण**—सभी ऋतुओं की सन्धियों में अन्न तथा जल के व्यतिक्रम होने से तथा अग्नि एवं मेद के उत्पन्न होने से प्राणियों का कफ बढ़ जाता है। वसन्त; ग्रीष्म तथा वर्षा ऋतु में प्राणियों की अग्नि प्रज्वलित रहती है। शरद् हेमन्त तथा शिशिर ऋतुओं में वायु की उत्पत्ति होती है। पक्वापक्व रसात्मक, सच्चिदानन्द रूप यह जो प्रकाशात्मक अग्नि स्वरूप शिव है वे सभी पापियों की रक्षा करें ॥ २८-३० ॥



## ऋतुक्रमानुसारेण मांससेवनजन्तवः

हरिणाद्विर्वसन्ते च ग्रीष्मे मेषादि सम्भवम् ।
वर्षर्तौ कुक्कुटादीनां मत्स्यादीनां शरत्समे ॥ ३१ ॥
हेमन्ते शूकरादीनाञ्चटकादेश्च शैशिरे ।
आमिषं क्रमशस्तेषामृतुष्वेतेषु योजयेत् ॥ ३२ ॥

**ऋतु के अनुसार मांस सेवन के योग्य जन्तु**—वसन्त ऋतु में हरिण आदि के मांस सेवन करने योग्य है। ग्रीष्म ऋतु में मेष ( भेड़ ) आदि का मांस सेवन करने योग्य है। वर्षा ऋतु में कुक्कुट ( मुर्गा ) आदि का मांस, शरद् ऋतु में मछली आदि का मांस, हेमन्त ऋतु में सूअर आदि का मांस, शिशिर ऋतु में चटका ( गौरैया ) आदि का मांस क्रमशः पूर्वोक्त ऋतुओं में प्रयोग करें ॥ ३१ ॥

## वसन्ते हितोपभोग्यमांसानि

अथ वक्ष्ये हितं मांसं क्रमशः ऋतुषट्कके ।
एणीहरिणयोर्मांसं वसतन्तौ हितं च तत् ॥ ३३ ॥
पथ्यं हितकरं वृष्यं परमं स्वादुबृंहणम् ।

**वसन्त में उपभोग करने योग्य मांस**—छहों ऋतुओं में उपभोग करने योग्य हितकर मांस को कहते हैं। वसन्त ऋतु में हरिण तथा हरिणी का मांस हितकर होता है। इन सबों का मांस सेवन करना पथ्य, हितकर, वीर्यवर्द्धक, उत्तम स्वादिष्ट तथा मांसवर्द्धक होता है ॥ ३१ ॥

## ग्रीष्मर्तौ हितोपभोग्यमांसानि

आविकञ्च फलं मेषमामिषं शीतलं मृदुः ।
ग्रीष्मर्तौ तु परं पथ्यमुष्णवारणकं हितम् ॥

**ग्रीष्म में उपभोग करने योग्य मांस**—ग्रीष्म ऋतु में भेड़ी तथा भेड़ा का मांस शीतल तथा मृदु होने के कारण उत्तम पथ्य है तथा उष्मा शामक होने से हितकर है ॥ ३४२ ॥

## वर्षर्तौ हितोपभोग्यमांसानि

लवणस्याब्धिजातानां मत्स्यानां कुक्कुटस्य च ॥ ३५ ॥
आमिषं परमं पथ्यं वर्षर्तौ शीतवारणम् ।

**वर्षा ऋतु में उपभोग करने योग्य मांस**—वर्षा ऋतु में लवण समुद्र में रहने वाले मत्स्य ( मछली ) एवं मुर्गा का मांस उत्तम पथ्य होता है और यह शीतको दूर करने वाला है ॥ ३५ ॥

## शरदृतौ हितोपभोग्यमांसानि

नदीतटाकसम्भूतं मत्स्यानामामिषं हितम् ॥ ३६ ॥
ऋतौ शरदि तीक्ष्णोष्णसमरूपं सुखप्रदम् ।

**शरद ऋतु में उपभोग योग्य मांस**—शरद ऋतु में नदी तथा पोखरा में रहने वाली मछलियों का मांस तीक्ष्ण तथा उष्ण सम रूप होने के कारण सुखप्रद एवं हितकर होता है ॥ ३६ ॥

## हेमन्ततौं हितोपभोग्यमांसानि

वाराहशशसंभूतं क्रव्यमुष्णकरं परम् ॥ ३७ ॥
लघु वृष्यं सुखकरं ऋतौ हेमन्तसंज्ञके ।

**हेमन्त ऋतु में उपभोग योग्य मांस**—हेमन्त ऋतु में सूअर तथा खरगोश का मांस उत्तम गरम, हल्का, वीर्यवर्द्धक तथा सुखकारक होता है ॥ ३७ ॥

## शिशिरतौं हितोपभोग्यमांसानि

आमिषं कलविङ्कस्य लावकोत्थं च शोभनम् ॥ ३८ ॥
उष्णवीर्यकरं स्वादु ऋतौ शिशिरसंज्ञके ॥ ३९ ॥

**शिशिर ऋतु में उपभोगयोग्य मांस**—शिशिर ऋतु में कलविङ्क ( गौरैया ) तथा लावक पक्षी का मांस उत्तम होता है । यह उष्ण, वीर्यवर्द्धक तथा स्वादिष्ट होता है ॥ ३८-३९ ॥

## सूदकारगुणप्रशस्तयः

एवं वसन्तादि ऋतौ प्रसिद्धधर्मान् विदित्वा कुरुते यथात्मा ।
विमुक्तपापः स च सूददोषैः पुनर्जनन्या जठरं न याति ॥ ४० ॥
यदामिषं देवपितृप्रवृत्तये करोति सूदो यदि कामवर्जितः ।
प्रयाति लोकं कृतिना कृतिर्यथा सवासवस्तं मुमुदे सदा मुदा ॥ ४१ ॥
अकलार्थसकलं कलाविदः सूदकर्मकुशलं मृगादिषु ।
स्वामिकार्यमिति यः करोति तत् सूददोषकृतपापभाङ्नरः ॥ ४२ ॥

**इति नलकृतपाकदर्पणे द्वितीयं प्रकरणं समाप्तम् ॥ २ ॥**

**पाचक की प्रशंसा**—इस प्रकार पाचक वसन्तादि ऋतुओं में अच्छी तरह प्रसिद्ध गुण-धर्मों को जानकर पाचक कार्य करता है वह पाचक के दोषों से मुक्त होकर पुनः माता के पेट में नहीं जाता है । अर्थात् संसार से मुक्त हो जाता है । यदि पाचक कामना रहित देवता पितर के लिये मांस का प्रकार बनाता है तो वह



पुण्यात्मा देवताओं के लोक में जाता है और हमेशा प्रसन्नता पूर्वक इन्द्र के साथ रहता है । यो पाकशास्त्र को जाननेवाला मृग आदि के मांस को बनाने में कुशल अच्छी तरह स्वामी के कार्य के लिये मांस पाक को बनाता हैं वह मनुष्य पाचक के दोष जन्य पाप का भागी नहीं होता है ॥ ४०-४२ ॥

इति नलकृत पाकदर्पण का डा० इन्द्रदेव त्रिपाठीकृत माधुरी हिन्दी व्याख्या सहित ऋतुधर्मनिरूपण नामक द्वितीय प्रकरण समाप्त ॥ २ ॥

# अथ भक्ष्यप्रकाराः

## भक्ष्यराजः—

### विभिन्नभक्ष्यपदार्थानां निर्माणप्रकारनिरूपणम्

शीतगोधूमशकलं भागमेकं समाहरेत् ।
नवमेकं सूक्ष्मवासो भागं सूदः प्रशान्तये ॥ १ ॥

सुपक्वं भिन्नचणकं निर्णयेदर्धभागकम् ।
एकं च मेदसोभागन्नयेन्निष्पावमानकम् ॥ २ ॥

नारिकेलकणैः सूक्ष्मं भागार्धस्य ग्रहेद् बुधः ।
एलासैंधवचूर्णञ्च किंचिदानीय मानवित् ॥ ३ ॥

समानीय सुपक्वं च घनसारादिनिर्मिते ।
मन्दक्षीरसमुद्भूतं नवनीतं नयेन्नवम् ॥ ४ ॥

मेलयेच्च यथायोग्यं पक्वं क्षीरेण मानवित् ।
जंबीरबीजवत्कुर्यात् मोदकान् बहुशः सुधीः ॥ ५ ॥

वासितेषु पुनः पूगपट्टेष्वेतान् पृथक् क्षिपेत् ।
अन्तराट्टालिके सम्यक् निधाय च पुनः पचेत् ॥ ६ ॥

तमादाय पुनस्तेषु सिञ्चेद्वै स्थिरसर्पिषि ।
भक्ष्यराजाह्वयो राजन् कथिते पाककोविदैः ॥ ७ ॥

**विभिन्न भक्ष्यपदार्थों में भक्ष्यराजनिर्माण-प्रकार—**पाचक शीतल (कच्चा) गेहूँ के टुकड़ों का एक भाग तथा नवीन महीन सुगन्धित द्रव्य एक भाग प्रशान्त के लिये ग्रहण करे। अच्छी तरह पके हुए चने की दाल आधा भाग, लोविया की गूदी एक भाग, तथा नारियल के फल का सूक्ष्म कण आधा भाग ग्रहण करे और इलायची तथा सेन्धा नमक का चूर्ण थोड़ा मिला दे। इनके बाद सबों को पका दे और कर्पूर आदि से सुगन्धित दूध का निकाला हुआ नवीन मक्खन लेकर यथायोग्य मात्रा के अनुसार पके दूध के साथ मिला दे। तदनन्तर बुद्धिमान् पाचक जम्बीरी नींबू के बीज के समान बहुत सा मोदक बना ले और इन सबों को सुवासित पूगपट्ट में अलग रक्खे। पुनः घर के अन्दर अच्छी तरह रखकर पकावे और पुनः उसको लेकर घी में छोड़ दे। हे राजन्, इसको उत्तम पाचक भक्ष्यराज कहते है ॥१-७॥



### भक्ष्यराजस्य गुणाः

वातपित्तहरश्चायं वृष्यः कायविवर्द्धनः ।
सद्योलघुतरः स्वादुः शरीरस्य बलप्रदः ॥ ८ ॥

**भक्ष्यराज के गुण—**भक्ष्यराज वात एवं पित्त को दूर करनेवाला, वीर्यवर्द्धक, शीघ्र ही जाठराग्नि दीपक, अत्यन्त हल्का, स्वादिष्ट तथा शरीर को बल देने वाला है ॥ ८ ॥

### अन्यद्भक्ष्यप्रकारनिर्माणविधिर्गुणाः

निधाय सूक्ष्मवासश्च प्रवण्यां सूदकोविदः ।
प्रथमं रसमासिच्य पेषयेन्नवनीतवत् ॥ ९ ॥
निक्षिपेत्तादृशं मांसं पात्रे तस्मिन् ततः परम् ।
गोधूमस्य कणान् पेषान् भिन्नमृद्गकणांस्तथा ॥ १० ॥
भर्जयित्वा पुनः किञ्चित् पचेद्वै पयसा च तान् ।
खण्डानि निक्षिपेत्तत्र तेभ्यो द्विगुणितानि च ॥ ११ ॥
दुग्धोद्भवानि खण्डानि तदर्द्धानि च निक्षिपेत् ।
जातीचम्पकपुन्नागपुष्पादीन् तत्र निक्षिपेत् ॥ १२ ॥
सुपक्वं कुक्कुटाण्डान्तं लोहितं तत्समं न्यसेत् ।
कल्कं च घनसारस्य एलाचूर्णञ्च निक्षिपेत् ॥ १३ ॥
मुहूर्तमेकमास्थाय पुनः पुष्पाणि संत्यजेत् ।
मेलयित्वा तु तत्कल्कं पात्रेऽन्यस्मिन् विनिक्षिपेत् ॥ १४ ॥
मानवित् मांसकल्केन कुर्याद् वै तेषु कर्पूरान् ।
निधाय तेषु मुद्गादिकल्कं कुर्याच्च शक्तिवत् ॥ १५ ॥
तच्छोभार्थं पुनः कुर्यादाकाराणि द्विधा द्विधा ।
एवं बहूनि वै कुर्याद् भक्ष्याणि च पृथक् पृथक् ॥ १६ ॥
निधाय पूगपट्टस्य नेत्रेतानि पचेद्बुधः ।
अनेनैव प्रकारेण पश्चाद्भक्ष्यं प्रदापयेत् ॥ १७ ॥
रुच्यं पथ्यं तथा बल्यं वृष्यं दोषत्रयायहम् ।
एवमादीनि भक्ष्याणि कर्त्तव्यानि मनीषिभिः ॥ १८ ॥

**अन्य प्रकार का भक्ष्य बनाने की विधि तथा गुण—**पाकशास्त्रवेत्ता महीन सुगन्धित द्रव्य प्रवणी (बटलोहो) में रक्खे। पहले इसके जल के साथ मांस को नवनीत की तरह पीस ले। इसके बाद पूर्वोक्त प्रकार से पीसा हुआ मांस उस पात्र में रक्खे। पुनः पीसे हुए गेहूँ के कण, तथा मूँग की दाल को घी के साथ भून ले

और दूध में पका ले। इन सभी द्रव्यों के दुगुना शक्कर तथा उसके आधा दूध की खोया छोड़ दे। तदनन्तर जाती ( चमेली ) चम्पा तथा सफेद कमल का पुष्प छोड़ दे। पुनः मुर्गी के छिलका रहित अण्डा को लाल वर्ण होने तक पकाकर छोड़ दे और कर्पूर का कल्क तथा इलायची का चूर्ण मिला दे। थोड़ी देर पूर्वोक्त पुष्पों को रखने के बाद निकाल कर फेंक दे। पूर्वोक्त सभी चीजों को एक दूसरे पात्र में रखकर मांस के कल्क के साथ कर्पूर से सुवासित कर मूँग का कल्क बनाकर सीप की तरह बनाये। उसको सुन्दर बनाने के लिये दो तीन प्रकार के आकार का बना ले। इसी प्रकार अलग-अलग बहुत प्रकार के भक्ष्य पदार्थ बना कर पूगपट्ट नेत्र में रखकर पकावे। इसीप्रकार तैयार होने के बाद बुद्धिमान् पाचक खाने के लिये दे। यह रुचिकारक, पथ्य, बलवर्द्धक, वीर्यवर्द्धक तथा त्रिदोषनाशक होता है। इस प्रकार बुद्धिमान् पाचक अनेक वस्तुओं से अनेक प्रकार के भक्ष्य पदार्थों को बनावे॥ ९-१८॥

### भक्ष्यपदार्थोपसंहारः

भक्ष्यजालमिदमर्पितं प्रियं सेव्यतां सुकृतिभिः परं मुदा।
पाकसारसरसं सदा समं कान्तिदीपनकरं बलप्रदम्॥ १९॥

इति नलकृत पाकदर्पणे भक्ष्यवर्णनं नाम तृतीयं प्रकरणं समाप्तम्॥

**भक्ष्य पदार्थ विषयक उपसंहार**—इस प्रकार प्रिय भक्ष्य पदार्थों के समूहकों को मैंने बताया। इसको प्रसन्नता के साथ पुण्यवान व्यक्ति सेवन करें। यह सरस-पाक सरस, सदा शान्ति देनेवाला, कान्तिवर्द्धक तथा बलकारक होता है॥ १९॥

इति नलकृत पाकदर्पण का डा० इन्द्रदेव त्रिपाठीकृत माधुरी हिन्दी व्याख्या सहित भक्ष्यवर्णन नामक तृतीय प्रकरण समाप्त॥ ३॥

## अथ पायसप्रकारनिरूपणम्

### विचित्रलसुनपायसनिर्माणविधिर्गुणाश्च

अथ भेदान् प्रवक्ष्यामि पायसस्य विचित्रकान्।
त्वचं लशुनभागानां समुत्सृज्य प्रयत्नतः॥ १॥
अग्रतो मूलतः किञ्चित् छित्वा छेदान् सुमुत्सृजेत्।
विरूढार्थं स्रजन्तेषां कुर्यात्सूच्यार्धतन्तुभिः॥ २॥
पायसं यावता सिद्धं तावदेव परिग्रहेत्।
यावता स्यात्क्रियाशुद्धिः तावदेव प्रयोजयेत्॥ ३॥
भागान् लशुनकन्दस्य छिन्द्यात्सूदश्चतुर्विधम्।
तेषां विरूढगर्भस्थं समादाय समुत्सृजेत्॥ ४॥
तानेव पोटलीं विद्वान् कुर्याद्वै सूक्ष्मवाससा।
काञ्चिकामिश्रिते पाके यावत्तण्डुलसम्भवे॥ ५॥
कृत्वा स्थानं पचेत्सम्यगागन्धकटुमोचनात्।
पक्वं लशुनमादाय सघृतं मांसमुत्सृजेत्॥ ६॥
क्षालयेद्वारिणा सम्यक् पचेत् क्षीरेण पाकवित्।
चतुःकृत्वः पञ्चकृत्वः क्षालयेद्वारिणा पुनः॥ ७॥

**विचित्र लसुन पायस बनाने की विधि तथा गुण**—भक्ष्यप्रकार बनाने के बाद पायस ( खीर ) के विचित्र प्रकारों को बताता हूँ। लहसुन को लेकर प्रयत्नपूर्वक उसकी त्वचा को निकाल कर फेंक दे और थोड़ा अग्रभाग तथा मूलभाग को भी काटकर फेंक दे। उसको एकत्र रहने के लिये सूई-तागा से माला की तरह पिरो ले। जितनी मात्रा में पायस बनाना हो उतनी ही मात्रा में ग्रहण करे और जितने से कार्य की सिद्धि हो जाय उतना ही प्रयोग में ले। पाचक लहसुन के कन्द को चार भाग में काटे। उसके अन्दर स्थित कंडी (डंठल) निकाल कर फेंक दे। इसके बाद उनको महीन वस्त्र से पोटली में बाँध ले और काञ्जीमिश्रित पाक में चावल पकने तक पोटली तथा लहसुन की माला को किसी स्थान पर राव कर जब तक उसका कटु गन्ध दूर न हो जाय तब तक पकावे। इसके बाद पके लहसुन को लेकर घृत युक्त मांस को छोड़ दे तथा जल से प्रक्षालन कर दे और पाक को जानने वाला दूध के साथ अच्छी तरह पकावे। चार बार या पाँच बार जल से प्रक्षालन करें॥ १-७॥

भाण्डद्वये च लशुनं निक्षिपेत्तादृशं ततः ।
एकस्मिन्निक्षिपेद्भाण्डे सहो लशुन साभिधा ॥ ८ ॥
अन्यस्मिन् विन्यसेद्भाण्डे सहः सरलिकास्ततः ।
शृतमर्धविशिष्टं च क्षीरं विश्रावयेद् बुधः ॥ ९ ॥
यथार्हं शर्करायुक्तं क्षीरं भाण्डद्वये क्षिपेत् ।
निक्षिप्य पायसेऽन्यस्मिन् रम्भाफलमनुत्तमम् ॥ १० ॥
पनसस्य फलं रम्यमपरे पायसे न्यसेत् ।
कल्कं च घनसारादि निक्षिपेदुभयत्र हि ॥ ११ ॥
निक्षिपेत्तत्र जात्यादि कुसुमान्युभयत्र हि ।
पायसं लघ्वातघ्नं रम्यं व्याधिहरं शुभम् ॥ १२ ॥

पूर्वोक्त प्रकार से पकाये हुए लहसुन को दो पात्रों में रक्खे। एक पात्र में लहसुन को मसाला आदि के साथ छोड़ दे और दूसरे पात्र में सरलिका के साथ रक्खे। इसके बाद आधा पकाया हुआ दूध छान ले और उसमें उचित मात्रा में शक्कर मिलाकर दोनों पात्रों में छोड़ दे। एक पायस पात्र में उत्तम केला का फल छोड़कर दूसरे पायस पात्र में सुन्दर कटहल का फल छोड़ दे। घनसार कर्पूर आदि का कल्क दोनों में ही छोड़ दे। पुनः उसमें चमेली आदि का फूल दोनों में छोड़ दे इसके बाद पुष्पों को निकालकर रख ले और खाने के समय दे। यह लशुन पायस हल्का होता है और यह वातनाशक, रम्य तथा अच्छी तरह व्याधिनाशक होता है ॥ ८-१२ ॥

## गोधूमपायसनिर्माणविधिर्गुणाश्च

नवगोधूममानीय समुत्सार्यं समृत्कणान् ।
ईषज्जलेन संक्लिन्नमवहन्यादुलूखले ॥ १३ ॥
मोचयेत्तत्तुषं सम्यक् कुर्यादेवं द्विधाद्विधा ।
अवहन्याच्च तक्रेण शितं यावद् भवेत्पुनः ॥ १४ ॥
दशविंशतिकृत्वस्तान् अवहन्याच्च सर्पिषा ।
संस्पृश्य केनचित् सम्यक् कुर्यात्तत्तुषमोचनम् ॥ १५ ॥
त्रिभागं माहिषं क्षीरं क्षीरभाण्डे प्रसिञ्चयेत् ।
एकेन जलभागेन सह मृद्वग्निना पचेत् ॥ १६ ॥
जलनिर्गमनं यावत् तावत्तावत् प्रसाधयेत् ।
तेषां पयस्तथा सिञ्चेत् समभाण्डेऽष्टभागिकम् ॥ १७ ॥



एकभागं च गोधूमं तादृशं तत्र निक्षिपेत् ।
यथा च धूमसंस्पर्शो न भवेत्तं तथा पचेत् ॥ १८ ॥
दर्व्याविघट्टयन् शोध्या तथा भाण्डे स्थितं यदि ।
विभज्यैवं चतुर्भागं पानं पात्रेषु निक्षिपेत् ॥ १९ ॥

**गेहूँ का पायस बनाने की विधि तथा गुण**—नवीन गेहूँ को लेकर उसके सूखे पके एवं जीर्ण-शीर्ण गेहूँ के कणों को निकाल कर थोड़े जल से गीला कर ओखली में कूटे। उसकी त्वचा अच्छी तरह निकाल कर फेंक दे और इसी प्रकार दो-दो बार करे। इसके बाद तक्र के साथ तब तक कूटे जब तक वह एक लट ( मिला हुआ ) हो जाय। पुनः घी के साथ दश-बीस बार कूटे। किसी चीज से पकड़ कर इसकी भूसी को अच्छी तरह निकाल दे। भैंस का दूध तीन भाग दूध के पात्र में रक्खे और उसमें एक भाग जल छोड़कर मन्दाग्नि से पकावे। उसको तब तक पकावे जब तक उसका जल न जल जाय। उस दूध को एक उसी के समान पात्र में आठ भाग छोडे और एक भाग पूर्वोक्त प्रकार से सिद्ध किया, हुआ गोधूम ( गेहूँ ) का कल्क छोड दे। पुनः उसको ऐसा पकावे जैसा कि धूम से स्पर्श ( जलना ) न हो जाय। यदि वह क्षीर पात्र लग जाय तो कलछुल से चला कर शोधन कर ले। इस प्रकार इसको पाचक चार पात्रों में रक्खे और इसी प्रकार पूगपट्ट के बहुत से नेत्रों में रक्खे। उन पात्रों को बार-बार अनेक सुगन्धित द्रव्यों से सुगन्धित कर ले तथा कर्पूर आदि से धूपित पात्र में उचित प्रमाण में मात्रा को जानने वाला पाचक रक्खे ॥ १३-१९ ॥

## फलपुष्पपानकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

चतुर्विधं तथा पाकं पात्रेष्वेतेषु निक्षिपेत् ।
निक्षिपेत् तेषु पाकेषु फलपुष्परसं ततः ॥ २० ॥
तेषां च निक्षिपेत् क्षीरं सुपक्वं तत्प्रमाणवित् ।
फलञ्च पनसं तत्र तद्रसं केतकीदलम् ॥ २१ ॥
अन्येषामिक्षुदण्डं च तद्रसं कमलं क्षिपेत् ।
तेषां च सहकारस्य फलं सूदस्तु निक्षिपेत् ॥ २२ ॥
तदोग्रं रसमासिच्य तदीयं कुसुमं न्यसेत् ।
द्राक्षाफलं च केषाञ्चित् निक्षिपेत्तद्रसं बुधः ॥ २३ ॥
कह्लार कुसुमं तत्र सुगन्धेन समन्वितम् ।
दाडिमस्य फलं केषान्तद्रसञ्च विनिक्षिपेत् ॥ २४ ॥
वल्लिकाकुसमं तत्र सुगन्धेन समन्वितम् ।
कस्तूर्यादिसमं युक्त न्यसेत्तत्रैव पाकवित् ॥ २५ ॥

कपित्थस्य फलं तेषां तद्रसञ्च विनिक्षिपेत् ।
जाजीप्रसूनं तत्रैव न्यसेद्विद्वान् सकोविदैः ।। २६ ।।
फलानि चैवमादीनि तदीयांश्च रसास्तथा ।

**फलपुष्पपानक बनाने की विधि तथा गुण**—पुनः चार प्रकार के पाकों को इन पात्रों में छोड़ दे और इन पाकों में फल तथा पुष्प का रस छोड़ दे । इसके बाद परिमाण को जानने वाला उनमें परिपक्व क्षीर ( दूध ) को दे । उसमें कटहल का फल तथा रस और कैतकी ( केवड़ा ) का फूल छोड़ दे । अन्य पात्रों में गन्ना का रस तथा कमल का फूल छोड़ दे । इस प्रकार किसी पात्र में पाचक आम के फल का रस छोड़ दे । उसके उग्र रस ( चोप ) को निकाल कर उसके गूदे को छोड़ दे । कुछ पाक पात्रों में अंगूर का फल तथा उसका रस छोड़ दे और उसमें सुगन्ध से युक्त कह्लार ( सफेद कमल ) का फूल छोड़ दे । पाकवेत्ता किन्हीं पाकपात्रों में अनार का फल तथा रस और सुगन्ध से युक्त वल्लिका का फूल एवं कस्तूरी आदि के साथ उसमें छोड़ दे । अन्य पाकपात्र में पाकशास्त्रवेत्ता कैथ का फल तथा रस और अजाजी ( जीरा ) तथा अजवायन का फूल छोड दे । पूर्वोक्त प्रकार से पूर्वोक्त पाक में फलों को तथा उनके रसों को छोड़ दे ।।२०-२६½।।

तत्तद्योनीनि पुष्पाणि पात्रेष्वाद्येषु निक्षिपेत् ।
निक्षिपेन्माक्षिकं सर्पिः केषाञ्चित्सूदवित्तमः ।। २७ ।।
सुगन्धीनि विकासानि प्रसूनानि न्यसेत्क्रमात् ।
एतैरालोड्य तं पाकं तत्प्रसूनानि संत्यजेत् ।। २८ ।।
ततश्च पोटलीं कृत्वा जलपूर्णघटेन च ।
अन्तराट्टालकं कृत्वा तच्च तेषु विनिक्षिपेत् ।। २९ ।।
सिकतावेदिकायां च न्यसेत्तान् पनसाहृतान् ।
तालपत्रैर्बुधः सम्यग्वीजयेच्च पुनः पुनः ।। ३० ।।
यावच्छैत्यम्भवेत्तावत्तत्रैव तापयेद्बुधः ।
भुक्तिकाले समालोच्य भक्षयेद्वा प्रदापयेत् ।। ३१ ।।
अयं पित्तहरो वृष्यः पथ्यः शैत्यकरो नृणाम् ।
जगतामाश्रयं ब्रह्म यथा भवति सर्वदा ।। ३२ ।।

पुनः अपनी-अपनी जाति के पुष्पों को प्रथम पात्र में छोडे और पाकशास्त्रवेत्ता कुछ पाकपात्रों में मधु तथा घी छोडे । पुनः क्रम से सुगन्धित तथा खिले हुए पुष्पों को छोडे । पूर्वोक्त द्रव्यों के साथ उस पाक को मिलाकर पूर्वोक्त पुष्पों को फेंक दे । इसके बाद पोटली बनाकर जलपूर्ण घड़े के साथ घर के अन्दर करके उसको उन पात्रों में छोड़ दे और उन सबों को ( पनस पाकपात्र को छोड़कर ) बालुका के वेदी पर रक्खे । बुद्धिमान् पाचक बार-बार तालपत्र से अच्छी तरह हवा करे । जब तक शीतल न हो जाय तब तक हवा देता रहे । इसके बाद भोजन का समय आने पर स्वयं भक्षण करे तथा खाने के लिये दे । यह पित्त को दूर करनेवाला, वीर्यवर्द्धक, पथ्य तथा मनुष्यों को शीतल करने वाला है, जैसे ब्रह्म हमेशा संसार का आश्रय होता है ।



## उपसंहारः

रसालायास्तथा भक्ष्यभोज्यादीनामिहाश्रयाः ।
स्तुवन्ति सम्यक् सुधियस्ततः सर्वं सदा मुदा ।। ३३ ।।

**इति नलकृतपाकदर्पणे पायसप्रकारनिरूपणं नाम चतुर्थप्रकरणं समाप्तम् ।**

**उपसंहार**—यहाँ पर रसाला तथा भक्ष्य-भोज्यादि का सेवन करने वाले बुद्धिमान् लोग अच्छी तरह स्तुति करते हैं तथा हमेशा प्रसन्न रहते हैं ।

इति नलकृत पाकदर्पण का डा० इन्द्रदेव त्रिपाठीकृत माधुरी हिन्दी व्याख्या सहित पायसप्रकारनिरूपण नामक चतुर्थ प्रकरण समाप्त ।। ४ ।।

## अथ पानकभेदनिरूपणम्

रसालायाश्च कथिता सर्वारुचिविमर्दिताः ।
पानभेदाश्च कथ्यन्ते भुक्तान्नस्य विरेचकाः ॥ १ ॥

**पानक का भेद निरूपण**—पूर्व प्रकारण में सम्पूर्ण अरुचियों को नष्ट करने वाली रसाला का वर्णन किया गया । अब भुक्त ( खाये गये ) अन्न को विरेचन करने वाले पान ( पानक ) के भेद कहते हैं ॥ १ ॥

### पानकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

हिरण्मये च चित्रे च नानारत्न विराजिते ।
शर्कराभागमेकं च सखण्डं तत्र निक्षिपेत् ॥ २ ॥
गाङ्गन्तद्द्विगुणं तोयं सिञ्चेद्वस्त्रेण शोधितम् ।
यावत्प्रलीयखण्डं तत्तावत्तत्रैव तन्न्यसेत् ॥ ३ ॥
तदादाय न्यसेद्यन्त्रे तुलितं घटनिर्मितम् ।
भवेद्विभाम्बुवद्यावत् तावत्तत्र पुनः पुनः ॥ ४ ॥
शोधयेद्वच्छार्करं तोयं सम्यक्सदः प्रमाणवित् ।
दशविंशतिपात्रेषु सूक्ष्मरूपेषु शोभिषु ॥ ५ ॥
प्रत्येकं पूगपट्टस्य लोचनानि न्यसेत्क्रमात् ।
फलानां तेषु नेत्रेषु रसं च कुसुमं क्षिपेत् ॥ ६ ॥

**विचित्र पानक बनाने की विधि तथा गुण**—अनेक रत्नों से जटित चित्र-विचित्र स्वर्णपात्र में खाँड़ सहित एक भाग शक्कर छोड़े और वस्त्र से छाना हुआ गंगाजल दुगुना छोड़ दे । जब तक शक्कर गल न जाय तब तक चलाते रहे और तुला के आकार का बनाया हुआ घटनिर्मित यन्त्र पर रक्खे । जब तक वह पारदर्शक जल के तरह न हो जाय तब तक जलमाण यन्त्र पर रक्खे । प्रणाम को जानने वाला पाचक आमोद युक्त उस जल को अच्छी तरह शुद्ध कर ले । इसके बाद छोटे-छोटे सुन्दर दस-बीस पात्रों में पूगपट्ट नेत्र ( नली ) क्रमशः रख दे और उन नलियों में फलों का रस तथा पुष्प छोड़ दे ॥ २ ६ ॥

चिञ्चाफलरसं सिञ्चेदन्यं तादृशपुष्पकम् ।
कल्हारकुसुमं तत्र न्यसेत्तत्रैव बुद्धिमान् ॥ ७ ॥
जम्बूफलं तथान्यस्मिन् सुपक्वञ्च न्यसेद्बुधः ।
नारिङ्गपुष्पं तत्रैव पुन्नागकुसुमं न्यसेत् ॥ ८ ॥



पारावतफलान्यानि रसमेकत्र निक्षिपेत् ।
रम्भाफलरसं सिञ्चेत् अन्यस्मिन्नपि लोचने ॥ ९ ॥
करवीरस्य कुसुमं कुसुमं बकुलस्य च ।
एकत्रलकुचस्यादि फलं प्रक्षिप्य शास्त्रवित् ॥ १० ॥
सुगन्धमुत्पलं चात्र शतपत्रप्रसूनकम् ।
अन्यत्र निक्षिपेद् विद्वान् फलमाम्रातकस्य च ॥ ११ ॥
मातुलुंगस्य कुसुमं कुन्दस्य कुसुमं न्यसेत् ।
केतकीकुसुमं त्वेकं सर्वं नेत्रेषु निक्षिपेत् ॥ १२ ॥
एलोनागरचूर्णञ्च जम्बीरस्य सरन्ततः ।
लोचनेषु च सर्वेषु किञ्चित्किञ्चित् विनिक्षिपेत् ॥ १३ ॥
कर्पूरं मृगनाभि च कुङ्कुमं हिमवारिणा ।
पेषयित्वा च तत्कल्कं मानवित्प्रक्षिपेत्क्रमात् ॥ १४ ॥

पूर्वोक्त पात्रों में स्थित नेत्रों (नलिका) में भिन्न फलों का रस तथा पुष्प छोड़े । एक पात्र में इमली के फल का रस तथा उसी प्रकार का कोई पुष्प छोड़े । उसमें बुद्धिमान् पाचक कल्हार ( कूईं ) का पुष्प छोड़ दे । दूसरे पात्र में पके जामुन के फल का रस छोड़े और उसी में नारङ्ग ( गाजर ) पुष्प तथा पुन्नाग ( सुलतान चम्पक ) का पुष्प छोड़ दे । एक दूसरी नलिका में पारावत (परुषक-शरीफा ) के फल का रस तथा अन्य नलिका में केले के फल का रस छोड़ दे । पुनः क्रमशः एक पात्र में करवीर ( कनैल ) का फूल तथा दूसरे में मौलसर का फूल छोड़ दे । एक नलिका में बड़हल के फल का रस तथा सुगन्धित कमल एवं गुलाब का पुष्प छोड़ दे । एक नलिका में आम्रातक ( आमडा ) के फल का रस तथा मातुलुङ्ग ( बिजौरा नीम्बू ) का फल एवं कुन्द का पुष्प छोड़ । इलायची तथा सोंठ का चूर्ण और जम्बीरी नीम्बू का रस थोड़ा-थोड़ा सभी नलिकाओं में छोड़ दे । कर्पूर, कस्तूरी तथा केशर का शीतल जल के साथ कल्क बना कर प्रमाण को जानने वाला पाचक उचित मात्रा में छोड़ दे ॥ ७ १४ ॥

एवं सम्भारयुक्तेषु लोचनेषु प्रमाणवित् ।
शुद्धतच्छार्करं तोयं यथायोग्यं प्रसेचयेत् ॥ १५ ॥
मन्दमारुतसंचारपानागरे ततः सुधीः ।
सिकतानिर्मितायाञ्च वेदिकायाञ्च पङ्क्तिः ॥ १६ ॥
निधाय तानि पात्राणि शुद्धवस्त्रेण वेष्टयेत् ।
उशीरनिर्मितेनाथ तालवृन्तेन बीजयेत् ॥ १७ ॥

यावच्छैत्यं भवेत्पानं कुर्यात्तेनैव वीजनम् ।
आदाय तानि नेत्राणि पात्रेभ्यः सोदकानि च ॥ १८ ॥
त्यज्येत्पुष्पाणि सर्वत्र केतकीकुसुमादृतः ।
आदावन्योन्यनेत्रेण पानभेदं प्रमाणवित् ॥ १९ ॥
बहवः पानभेदा स्युः शुद्धसङ्करभेदतः ।
विच्छेदनं विना विद्वान् बुद्ध्वा कुर्याच्च पोटलीम् ॥ २० ॥
मन्दमारुतसंचारे धोमामाहरेच्च धोम् ।
एवं विधानि पानानि कुर्याद् ग्रीष्मे सुबुद्धिमान् ॥ २१ ॥
सेवितानि पुनस्तानि पानानि च मनीषिभिः ।
तत्तद्रव्यगुणान् कुर्युः संस्थितानात्मसुप्रभः ॥२२ ॥

पूर्वोक्त प्रकार से प्रमाण जानने वाला पाचक सम्भार ( मसाला आदि सामग्री युक्त से ) पात्रस्थ नलिकाओं में पूर्वनिर्मित शर्करोदक ( चीनी का शर्बत ) उचित मात्रा में मिला दे । इसके बाद बुद्धिमान् पाचक मन्द हवा संचारयुक्त पानगृह में बालू से निर्मित वेदी के ऊपर एक कतार में उन पात्रों को रखकर शुद्ध एवं स्वच्छ वस्त्रों से ढ़क दे और खस या ताड़ के पंखे से हवा करे । जब तक वह शीतल न हो जाय तब तक हवा करें । इसके बाद पात्रों से उदक सहित नलिकाओं को लेकर उनमें रक्खे केतकी पुष्प के अतिरिक्त सभी पुष्पों को फेंक दे । तदनन्तर प्रमाण को जानने वाला पहले आपस में एक नली से दूसरी नली में मिलाकर पानभेद का निर्माण करे । इस प्रकार शुद्ध एवं मिश्रित पानभेद से अनेक प्रकार के घन हो जाते है । बिना अलग किये ही बाँधकर विद्वान् व्यक्ति पोटली बनावे । मन्द हवासंचार से युक्त मकान में रक्खे । इस तरह बुद्धिमान् पाचक ग्रीष्म ऋतु में विविध प्रकार के पानकों का निर्माण करे । विद्वानों के द्वारा सेवन करने पर ये पानक अपने निर्मित द्रव्यों के गुण के अनुसार गुणकारक होते हैं ॥ १५-२२ ॥

**ऋतुपर्णराज्ञः पात्रविषयकः प्रश्नः**

राजोवाच

पात्रेषु विद्यमानेषु सौवर्णादिषु बाहुक ! ।
पाकादि क्रियते कस्मात् पूगपट्टेन मे वद ॥ २३ ॥
प्रसूनवासनात्पाकः क्रिमिकीटादिपीडनम् ।
मधुवर्गादि पीडेति पाकोऽयं नैषधेन च ॥ २४ ॥



कृतं चित्रक्रियायुक्तं नृपदेव हिताय च ।
विचित्रभेदः खलु पाकभेदो मया कृतः सर्वजनोपकारी ।
यद्भुक्तमन्नं सविपाककाले तेनैव जीर्णं क्रियते सुखेन ॥ २५ ॥

**इति नलकृतपाकदर्पणे पानकनिरूपणं नाम पञ्चम प्रकरणं समाप्तम् ॥ ५ ॥**

**राजा ऋतुपर्ण का पाक पात्र विषयक प्रश्न** — राजा ऋतुपर्ण ने नल से पूछा कि हे बाहुक ! सोना-चाँदी आदि के अनेक पात्रों के होते हुए पूगपट्टनेत्र में आप क्यों पाक बनाने के लिये कह रहे हैं । तब नल ने कहा कि पुष्प आदि से सुवासित होने के कारण क्रिमिकीट आदि से दूषित तथा मधुरता आदि में विकृति हो जाने से पूगपट्ट आदि पात्रों को ग्रहण किया गया है । इस विचित्र क्रिया युक्त पाक को राजा एवं देवताओं के लिये किया गया है ॥ २३-२४ ॥

मैंने ( नल ने ) विचित्र भेदों से युक्त खलपाकभेदों को सभी लोगों के उपकार के लिये बनाया है । जिससे खाया हुआ अन्न विपाक काल में उस पानक के प्रयोग से सुखपूर्वक जीर्ण हो जाता है ॥ २५ ॥

इति नलकृत पाकदर्पण का डा० इन्द्रदेव त्रिपाठीकृत माधुरी हिन्दी व्याख्या सहित पानकनिरूण नामक पञ्चम प्रकरण समाप्त ॥ ५ ॥

# अथ विविधान्नयूषपाकनिर्माणप्रकरणम्

## शाल्यन्नयूषानिर्माणविधिर्गुणाश्च

प्रस्थमेकं सुशाल्यन्नं संक्षाल्य च पुनः पुनः ।
पेषयित्वा च तान् पिष्टं काञ्जिकोभिश्च मेलयेत् ॥ १ ॥
तत्पञ्चगुणितैस्तोयैः सह चुल्यां पचेद्बुधः ।
कुस्तुम्बुरीं च केडर्यं पाकमध्ये विनिक्षिपेत् ॥ २ ॥
पिष्टञ्च दर्व्यां लिप्तञ्च अवतार्य प्रशामयेत् ।
धवलं दधिमादाय तत्समं तत्र मेलयेत् ॥ ३ ॥
शोधयेत् सितवस्त्रेण घने यत्नेन पाकवित् ।
शोधितं तद्विशालेषु पात्रेषु बहुषु क्रमात् ॥ ४ ॥
स्थितेषु पूगपट्टस्य लोचनेषु विनिक्षिपेत् ।
केतकीकुसुमं सूदः सर्वत्रैव निवेशयेत् ॥ ५ ॥
रुच्यर्थं सर्वपात्रेषु फलं पुष्पं समाहरेत् ।

**शाल्यन्न का यूष ( यूषामृत ) बनाने की विधि तथ गुण** – स्वच्छ जड़हन धान का चावल एक सेर ( १ किलो ) को अच्छी तरह बार-बार धोकर तथा पीसकर उसकी पीठी बना कर काञ्जी के साथ मिला ले। इसके बाद उसको पाँच गुना जल के साथ बुद्धिमान् पाचक चुल्हे पर पकावे। पीठी के दर्वी लेप ( पक जाने पर ) हो जाने पर उतार कर ठण्ढा कर ले। तत्पश्चात् उसी के बराबर सफेद दही लेकर उसमें मिला दे और पाकशास्त्र को जानने वाला पाचक प्रयत्नपूर्वक सफेद वस्त्र से छान ले। छानने के बाद उसको बड़े-बड़े कई पात्रों में स्थित पूगपट्ट नेत्रों में रक्खे। प्रत्येक पात्र में पाचक केतकी का फूल रक्खे और रुचि को बढ़ाने के लिये सभी पात्रों में फल तथा पुष्प छोड़ दे ॥ २-५½ ॥

बीजपूरफलच्छेदान् केषाञ्चिद्धेमपुष्पकम् ॥ ६ ॥
सत्फलाकुसुमं तेषु न्यसेदय्योग्यं यथा बुधः ।
सहकारफलं केषां जाजीकुसुममेव च ॥ ७ ॥
नारङ्गस्य प्रसूनं च न्यसेत्तन्मानवित् पुनः ।
सल्लकीफलमन्येषां पाटलीकुसुमं न्यसेत् ॥ ८ ॥
पूगस्य पुष्पं निविशेत् कस्तूरीगुणसंयुतम् ।
कुम्भीफलं तथान्येषां वासन्ती कुसुमं न्यसेत् ॥ ९ ॥



कल्हारकुसुप तत्र प्रक्षिपेत्समनोहरम् ।
बालमुर्वारुकं केषां नमेरुकुसुमं न्यसेत् ॥ १० ॥
सुगन्धि कुसुमं तत्र प्रविशेत् तत्प्रमाणवित् ।
निक्षिपेदष्टपात्रेषु यथायोग्यं क्रमात्सुधीः ॥ ११ ॥

पूर्वोक्त विभिन्न पात्रस्थयूषोपाकों में किसी में विजौरा नीबू के फल के टुड़के हेम पुष्प ( नाग केशर ) तथा सत्फला कुसुम ( अनार का फूल ) यथायोग्य मिला दे। किसी पात्र में आम का फल तथा अजवायन का फल तथा नारंगी का फूल प्रमाण को जानने वाला पाचक छोड़ दे। अन्य पात्रों में सल्लकी ( शालई ) का फल तथा पाटली ( पुन्नाग ) का पुष्प छोड़ दे और कस्तूरी के गुण से युक्त पूगपुष्प को छोड़ दे। अन्य दूसरे पात्रों में कुम्भी का फल तथा वासन्ती का फूल छोड़ दे और कल्हार का मनोहर पुष्प छोड़ दे। किन्ही पात्रों में उर्वारु ( खरबूजा ) का बाल फल तथा नमेरु का पुष्प छोड़ दे और प्रमाण को जानने वाला सुगन्धित द्रव्य का फूल छोड़ दे। इस प्रकार बुद्धिमान् पाचक आठों पात्रों में यथा योग्य फल-पुष्प को छोड़ दे ॥ ६-११ ॥

एवं चेद्बहवो भेदाः सुचियूषस्य भूमिप ! ।
एतच्च यूषमालोड्य प्रसूनान्येव संत्यजेत् ॥ १२ ॥
प्रयत्नेन पुनस्तांश्च वेष्टयित्वाथ संविशेत् ।
शैत्यादिगुणसंसर्गः कार्यस्तेषां च पूर्ववत् ॥ १३ ॥
अयं च यूषः पीयूषः पित्तघ्नः श्रमहा भवेत् ॥ १४ ॥

हे राजन् इस प्रकार पवित्र यूष के अनेक भेद होते हैं। इस यूष को अच्छी तरह चलाकर पुष्पोंको निकाल फेंक दे। पुनः इसको अच्छी तरह वेष्टित कर रक्खे और पहले की तरह पंखा आदि की हवा से शीतल गुण से युक्त कर दे। यह यूष पीयूष ( यूषामृत ) पित्त को शान्त करने वाला तथा थकावट को दूर करने वाला है ॥ १२-१४ ॥

## राजशाल्यन्नयूषनिर्माणविधिर्गुणाश्च

मर्दयित्वा पुनः सम्यक् शोधयेत् घनवाससा ।
पूगपट्टस्य नेत्राणि बहुपात्रेषु निक्षिपेत् ॥ १५ ॥
सयूषं दधिशाल्यन्नं सम्भवन्तेषु निक्षिपेत् ।
प्रमाणेन न्यसेत्तेषु चूर्णं सैन्धवसम्भवम् ॥ १६ ॥
मेथीजीरकचूर्णं च एलाचूर्णं च निक्षिपेत् ।
आर्द्रकस्य पलाण्डोश्च शकलानि च निक्षिपेत् ॥ १७ ॥

कुम्भीपत्रं च धान्यं च मातुलुङ्गदलं क्षिपेत् ।
केतकीकुसुमं तेषु सहकारफलं क्षिपेत् ॥ १८ ॥
नानाविधानि पुष्पाणि फलं निक्षिपेत्सल्लकीफलम् ।
तदीयं निक्षिपेत्पत्रं तद्योग्यं द्रव्यमादिशेत् ॥ १९ ॥

**राजशाल्यन्न यूष बनाने की विधि तथा गुण**—पूर्वोक्त प्रकार से शालि चावल १ किलो को पीस कर तथा काञ्जी मिलाकर पाँच गुना जल में पका ले तथा दही में मर्दन कर गाढ़े वस्त्र से छान ले और बहुत पात्रों में पूगपट्ट नेत्र में रख कर उनमें पूर्वनिर्मित यूष सहित दधि शाल्यन्न को रक्खे । पुनः उचित मात्रा में सेन्धा नमक का चूर्ण छोड़ दे । साथ ही मेथी, जीरा तथा इलायची का चूर्ण छोड़ दे और अदरक तथा प्याज को काटकर छोड़ दे । कुम्भीपत्र ( कायफल ) धनियाँ तथा विजौरा नींबू के फल का दल छोड़ दे । पुनः केतकी का फूल तथा आम का फल छोड़ दे । अनेक प्रकार के पुष्पों तथा ( सल्लकी ) सल्लई का फल छोड़ दे । पूर्वोक्त द्रव्यों का पत्र तथा यथायोग्य द्रव्यों को छोड़ दे ॥

पाकज्ञः क्रमशस्तेषु सामुद्रफलमाहरेत् ।
केषांचिदाम्रशकलं तदीयं कुसुमं न्यसेत् ॥ २० ॥
मरीचिस्तवकं केषां जातीय कुसमं न्यसेत् ।
नारिंगकुसुमं केषु न्यसेद्बिल्वफलानि च ॥ २१ ॥
कल्हारकुसुमं किन्तु सारङ्गस्य फलं क्षिपेत् ।
एलाफलस्य स्तवकं केषांचिद्धेमपुष्पकम् ॥ २२ ॥
एवमादीनि पुष्पाणि लवणस्य फलानि च ।
क्षिप्त्वा कुर्याच्च यूस्षय बहून् भेदान् विचक्षणः ॥ २३ ॥
क्षणमात्रं समालोक्य ततः पुष्पाणि संत्यजेत् ।
ततश्च पोटलीं कुर्यात् प्रयत्नेन ततः परम् ॥ २४ ॥
वेष्टयित्वा पुनः सूदः कुर्याच्छैत्यं च पूर्ववत् ।
मुक्तं च जीर्णं समया लघु वृष्यो बलप्रदः ॥ २५ ॥

पाक को जानने वाला पाचक क्रमशः उन पात्रस्थ पूगपट्ट नेत्रों में सामुद्र फल छोड़ दे । कुछ पात्रों में आम के टुकड़े तथा उनके फूल छोड़ दे । कुछ पात्रों में मरिच के गुच्छे तथा चमेली का फूल छोड़ दे । कुछ पात्रों में नारंगी का फूल तथा बेल का फल छोड़ दे । कुछ पात्रों में कल्हार ( कूईं ) का फूल तथा सारंग ( कमल ) का फल छोड़ दे । कुछ पात्रों में इलायची का गुच्छा तथा हेम पुष्प ( नागकेशर ) छोड़ दे । इसी प्रकार विभिन्न पुष्पों एवं



समुद्र फल को छोड़ दे । इस प्रकार बुद्धिमान् पाचक पूर्वोक्त प्रकार से पुष्प एवं फलों को मिला कर अनेक प्रकार के यूष बना ले । पुनः पुष्पों को कुछ देर रहने के बाद निकाल कर फेंक दे । इसके बाद प्रयत्नपूर्वक पोटली बनावे और उसको वेष्टित कर पूर्वोक्त प्रकार से ताल एवं खस आदि के पंखों से हवा कर शीतल बना ले । यह भोजन के साथ खाने से अन्न को पचाता है और यह वीर्यवर्द्धक, सुपच तथा बलकारक होता है ॥ २०-२५ ॥

## यूषपाकस्योपसंहारः

नानाविधद्रव्यफलप्रसूनैरुत्पादितार्थः खलु कल्पवृक्षः ।
श्रमान्वितानां श्रमनुत्सुसेव्यः सुपूजितः सर्वमनोभिराभः ॥ २६ ॥
सयूषभेदाः कथिता भोजनानन्ददाः शुभाः ।
घृताद्यंशप्रभेदाश्च कथ्यन्ते रुचिमर्दनाः ॥ २७ ॥

**इति नलकृतपाकदर्पणे यूषपाकनाम षष्ठप्रकरणं समाप्तम् ॥ ६ ॥**

**यूषपाक का उपसंहार**—यह अनेक प्रकार के द्रव्यों, फल एवं पुष्पों के द्वारा निर्मित यूष कल्पवृक्ष की तरह श्रमिकों के श्रम ( थकावट ) को दूर करने वाला अच्छी तरह सेवनयोग्य प्रशंसित एवं सभीके मन को प्रसन्न करनेवाला है । भोजन के समय आनन्द देनेवाले यूष के अनेक भेद कहे गये । अब अरुचि को नष्ट करने वाले अनेक प्रकार के घृतभेद को कहेंगे ॥ २६-२७ ॥

**नोट**—आजकल भी विविध प्रकार के सेन्ट भोजन में मिलाने की परम्परा है । प्राचीन काल में सेन्ट का प्रादुर्भाव न होने कारण पुष्प छोड़ने की परम्परा थी ।

इति नलकृत पाकदर्पण का डा० इन्द्रदेव त्रिपाठीकृत माधुरी हिन्दी व्याख्या सहित यूषनिरूपण नामक षष्ठ प्रकरण समाप्त ॥ ६ ॥

## अथ घृतान्नपाकप्रकरणम्

### घृतान्नपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

सुपक्वं राजशाल्यन्नमानीय सुमनोहरम् ।
विशालविभ्रमे देशे पात्रेषु विविधेष्वथ ॥ १ ॥
स्थितेषु सर्वपात्रेषु क्षिपेदन्येन सैन्धवम् ।
हैयङ्गवीनमेकस्मिन् सिञ्चेत्पात्रे सुसंयुते ॥ २ ॥
क्षिपेच्चूर्णं पुनस्तत्र दग्धपर्पटकस्य च ।
निक्षिपेच्च ततस्तत्र लशुनार्द्रकयोः कणान् ॥ ३ ॥
चूर्णं च निविशेत् किंचित् मेथीजीरकसम्भवम् ।
कुस्तुंबरीश्च कैटर्यं केतकीकुसुमं न्यसेत् ॥ ४ ॥
बीजपुरदलं तत्र निक्षिपेत्सूदराट् ततः ।
एभिर्द्रव्यैर्भाजनस्थमन्नं कुर्य्याच्च मेलनम् ॥ ५ ॥
पुनश्च निक्षिपेत्तत्र कस्तूरीं कर्पुरीं तथा ।
पुनश्च पूगपट्टेन बद्ध्वा भोक्त्रे निवेदयेत् ॥ ६ ॥
घृतमन्नमिदं रम्यं बलवृद्धिकरं भवेत् ।
हृद्यं पित्तहरं नित्यं चक्षुरिन्द्रियवर्द्धनम् ॥ ७ ॥

**घृतान्न पाक बनाने की विधि तथा गुण**—अच्छी तरह परिपक्व, मनोहर राज शाल्यन्न ( जड़हन का पूर्वोक्त विधिसे निर्मित भात ) को लेकर विस्तृत स्थान में विविध सभी पात्रों में रक्खे हुए अन्न में सेन्धा नमक छोड़े और उसी के साथ रक्खे हुए एक पात्र में घी छोड़ दे । पुनः भूने हुए पापड़ को रख दे । पुनः उसमें लहसुन तथा अदरक के टुकड़ों को छोड़े । उसी में थोड़ा मेथी तथा जीरा का चूर्ण छोड़ दे । पुनः धनिया, कायफर तथा केवड़ा के फल को छोड़ दे । इसके बाद विजौरा नींबू के फल के दल को श्रेष्ठ पाचक छोड़ दे । इस प्रकार पात्र में स्थित अन्न को पूर्वोक्त द्रव्यों के साथ मिला दे और पुनः उसमें कस्तूरी तथा कपूंर छोड़ दे । तदनन्तर पूगपट्ट से बाँधकर खाने वाले को दे । यह घृतान्न रम्य, बलवृद्धिकारक हृद्य पित्तहर तथा, दृष्टिशक्ति को बढ़ाने वाला है ॥ १-७ ॥

### अन्य घृतान्ननिर्माणविधिर्गुणाश्च

अन्यस्मिन्नपि पात्रस्थे शाल्यन्नेषु सुसंयुते ।
तिलतैलं नवं रम्यं सिञ्चेत्सूदः समं ततः ॥ ८ ॥
जम्बीराम्लं ततस्तत्र प्रमाणेन प्रसेचयेत् ।
चूर्णञ्च निक्षिपेत्तत्र पिण्याकवटकोद्भवम् ॥ ९ ॥
लशुनार्द्रककैडर्यधान्यकानां क्षिपेत्कणान् ।
तप्ततैलं पुनस्तत्र हिंगुना सहितं क्षिपेत् ॥ १० ॥
कृत्वा तन्मेलनं तत्र कर्पूरादींश्च निक्षिपेत् ।
तद्बद्ध्वा पूगनेत्रेण निर्विशेदपरस्थले ॥ ११ ॥
बलकृद्दीपनकरं वातश्लेष्महरं तथा ।

**प्रकारान्तर से घृतान्न बनाने की विधि तथा गुण**—अन्य प्रकार से घृतान्न बनाने के लिये अन्य पात्रों में स्थित शाल्यन्नों में पाचक सुन्दर, रमणीय, नवीन तिल का तेल मिला दे । इसके बाद उचित मात्रा में जम्बीरी नीबू का रस (सत्व) छोड़ दे । पुनः तिल के खल्ली के वटक चूर्ण को उसमें मिला दे और लहसुन, अदरक, कैडर्य ( कायफल ) तथा धनियाँ के चूर्ण को मिला दे । पुनः गरम तेल में हींग पका कर छोड़ दे । इन सबों को एकत्र कर कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों से सुगन्धित बना ले । पुनः उसको पूगपट्ट नेत्र से बाँधकर दूसरे स्थान पर रख दे और खाने के लिये दे । यह बलवर्द्धक, जाठराग्निदीपक तथा वात-कफ को दूर करता है ॥ ८-११ ॥

### चिञ्चाफलरसयुक्तशाल्यन्नपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

अथ चिञ्चा पक्वफलसमुद्भूतरसं हरेत् ॥ १२ ॥
शालिन्या तं पुनः सम्यग् भर्जयेद्रामठादिभिः ।
अन्यस्मिन् नवशाल्यन्ने निक्षिपेत्तादृशं रसम् ॥ १३ ॥
कणांश्च निक्षिपेत्तत्र लशुनार्द्रकसम्भवान् ।
तदेभिर्मेलयेत्सर्वं वासनादीन् समाविशेत् ॥ १४ ॥
पूगपट्टेन तद्भक्तं वेष्टयित्वा च दापयेत् ।
पित्तवृद्धिकरो रुच्यः शूलव्याधिहरो ह्ययम् ॥ १५ ॥

**इमली फल के रस से मिश्रित शाल्यन्न बनाने की विधि तथा गुण**—इमली के पके फल का रस निकाल ले । पुनः शालि धान के चावल के साथ अच्छी तरह हींग के साथ भून ले । दूसरे नवीन शाल्यन्न में पूर्वोक्त इमली के रस को छोड़ दे और लहसुन तथा अदरख के टुकड़ों को छोड़ दे । इसके बाद सभी को एकत्र मिला दे तथा सुगन्धित द्रव्यों से सुगन्धित कर ले । तदनन्तर उस भात को पूगपट्ट से वेष्टित कर खाने के लिये दे । यह पित्त को बढ़ाने वाला, रुचिकारक तथा शूल एवं व्याधि को दूर करता है ॥ १२-१५ ॥

### कैटर्यकल्कयुक्तशाल्यन्ननिर्माणविधिर्गुणाश्च

केटर्यकल्कमन्यस्मिन्नन्यन्निक्षिप्य मेलयेत् ।
भर्जितं रामठं तैले निक्षिपेद्रामठादिकम् ॥ १६ ॥
कर्पूरादींश्च निक्षिप्य नेत्रेण परिवेष्टयेत् ।
स्तन्यप्रदं क्रिमिहरं श्लेष्मदोषहरं भवेत् ॥ १७ ॥

**कैटर्य कल्क के साथ शाल्यन्न बनाने की विधि तथा गुण**—दूसरे शाल्यन्न पात्र में कैटर्य (कायफल) का कल्क छोड़ कर तेल में भूने हुए हींग को मिला दे और कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों से सुवासित कर तथा पूगपट्ट नेत्र से वेष्टित कर खाने को दे। यह स्तन्यवर्द्धक, क्रिमिनाशक तथा कफ-विकार को नाश करने वाला है ॥ १६-१७ ॥

### सर्षपकल्कयुक्तशाल्यन्ननिर्माणविधिर्गुणाश्च

सर्षपोद्भवकल्केन मिलदन्नं क्रियाद्बुधः ।
जम्बीराम्लं यथायोग्यं निक्षिपेद्रामठादिभिः ॥ १८ ॥
कृत्वा च वासनादींश्च बद्ध्वा नेत्रेण दापयेत् ।
हिंगुमुष्णकरं भक्तं तथा छर्दिहरं भवेत् ॥ १९ ॥

**सरसों के कल्क के साथ शाल्यन्न बनाने की विधि तथा गुण**—पाकक्रिया को जानने वाला बुद्धिमान् पाचक सरसों के कल्क के साथ शाल्यन्न को बनावे और उचित मात्रा में जम्बीरी नींबू का रस (या सत्व) एवं भूने हुए (तेलभृष्ट) हींग जीरा आदि छोड़ दे। कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों से सुवासित कर तथा पूगपट्ट नेत्र से वेष्टित कर खाने के लिये दे। यह हिंगुयुक्त अन्न उष्णकारक होता है तथा वमन को दूर करता है ॥ १८-१९ ॥

एवमादीनि भक्तानि तत्तद्द्रव्यैश्च साधयेत् ।
बहूनामन्नभेदानां स्वं स्वं तत्तद्गुणं भवेत् ॥ २० ॥

पूर्वोक्त प्रकार से भिन्न-भिन्न द्रव्यों के साथ अनेक प्रकार के भातों को सिद्ध करे। वे सब अपने-अपने द्रव्यों के गुण के अनुसार गुणकारक होते हैं।

### दधियुक्तशाल्यन्ननिर्माणप्रकारोगुणाश्च

अपरे सूदराड्भक्ते निक्षिपेन्मधुरं दधि ।
सहकारकणांस्तत्र लशुनादींश्च निक्षिपेत् ॥ २१ ॥
शीतोषणकणांस्तत्र शुंठीचूर्णं च निक्षिपेत् ।
निस्त्वगार्द्रककैटर्यधान्याकशकलान्यपि ॥ २२ ॥



एतत्सर्वं विनिक्षिप्य कुर्यात्तन्मेलनं बुधः ।
पुनश्च निक्षिपेत्तत्र चूर्णमेलासमुद्भवम् ॥ २३ ॥
बीजपूरदलं तत्र केतकी कुसुमं न्यसेत् ।
कर्पूरादींश्च निक्षिप्य वेष्टयित्वा प्रदापयेत् ॥ २४ ॥
इदं जाड्यहरं रुच्यं वह्निमान्द्यहरं भवेत् ॥ २५ ॥

**दधिमिश्रित शाल्यन्न का प्रकार तथा गुण**—श्रेष्ठ पाचक दूसरे भात में मीठा दही छोड़ दे और उसमें आम के टुकड़े तथा लहसुन के टुकड़े छोड़ दे। पुनः शीतल मरिच, सोंठ का चूर्ण, छिलका रहित अदरक के टुकड़े, कैटर्य तथा धनिया के टुकड़ों को भी छोड़ दे। इन सब द्रव्यों को छोड़ कर मिला दे। पुनः उसमें बिजौरा नीम्बू का रस तथा केतकी के पुष्प को छोड़ दे। इसके बाद कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों से सुवासित कर तथा पूगपट्ट नेत्र से आवेष्टित कर खाने के लिये दे। यह जड़ता को दूर करने वाला रुचिकारक तथा मन्दाग्नि को दूर करने वाला है ॥ २१-२५ ॥

### उपसंहारः

स्वैरप्रभेदाकृतिरन्नरूपा धेनुर्धरित्र्यां प्रवदन्ति भूरि ।
पयांसि सम्यग्रसनान्नपाने सदा दुदोहार्थिषु सादरेण ॥ २६ ॥

**इति नलकृतपाकदर्पणे घृतान्ननिरूपणं नाम सप्तमप्रकरणं समाप्तम् ॥ ७ ॥**

**घृतशाल्यन्न प्रकरण का उपसंहार**—इस पृथ्वी पर अपनी इच्छा के अनुसार निर्मित विभिन्न आकृति वाली बहुत से अन्नरूप धेनु को बताते हैं। उस धेनु के दूध को चाहनेवालों के जिह्वा की तृप्ति के लिये अन्नपान को सदा आदर पूर्वक दूहते हैं।

इति नलकृत पाकदर्पण का डा० इन्द्रदेव त्रिपाठीकृत माधुरी हिन्दी व्याख्या-सहित घृतान्ननिरूपण नामक सप्तम प्रकरण समाप्त ॥ ७ ॥

## अथ लेह्यप्रकरणम्

### सहकारादिलेह्यनिर्माणप्रकारोगुणश्च

सुपक्वफलसंदोहं सहकारादिसम्भवम् ।
आनीय सूदः शास्त्रज्ञः क्रिमिभ्यः शोधयेत् पृथक् ॥ १ ॥
भर्जयेच्च पुनस्तानि पृथक् शर्करया सह ।
तदुत्थमाहरेद्द्रव्यं त्वग्बीजानि समुत्सृजेत् ॥ २ ॥
द्रव्ये तस्मिन् घनीभूते सिञ्चेत्किञ्चिज्जलं ततः ।
द्रव्यञ्च सूक्ष्मवस्त्रेण यावल्लेह्यं तु शोधयेत् ॥ ३ ॥
आनयेत् पूगपट्टस्य नेत्राण्यथ शुभानि च ।
अनेकेषु च पात्रेषु मध्ये तेषु पुनर्न्यसेत् ॥ ४ ॥
लेह्यं चाङ्गुलिकं तेषु निक्षिपेच्च पृथक् पृथक् ।
ततश्च घनसारादि कल्कं तेषु च मेलयेत् ॥ ५ ॥
विचित्रवासनापुष्पैः लेह्यं सम्यक् च वासयेत् ।
ततः पुष्पाणि संत्यज्य सहकुर्याच्च पोटलीः ॥ ६ ॥
पूर्ववत्स्थापनं कुर्यात् ततः शैत्योपचारकम् ।
एवं विधानि लेह्यानि कर्तव्यानि बहून्यपि ॥ ७ ॥
रसनास्वगतं जाड्यं त्यजेल्लेह्यस्य सेवनात् ।
एतत्पित्तहरं पथ्यं कफवातहरं परम् ॥ ८ ॥

**आम आदि फलों का लेह्य ( चटनी ) बनाने का प्रकार तथा गुण**—पाकशास्त्रज्ञ बुद्धिमान् पाचक अच्छी तरह पके हुए आम आदि फलसमूहों को अलग-अलग लेकर क्रिमि, लकड़ी आदि निकाल कर शुद्ध कर ले। पुनः उन फलों को अलग-अलग चीनी के साथ पका ले। पकाने के बाद निकले हुए पदार्थ ग्रहण कर ले और छिलका तथा बीज को फेंक दे। पकाने से गाढ़ा हो जाने पर थोड़ा जल छोड़ दे। पुनः जब तक लेह तैयार न हो जाय तब तक पकावे और पतले वस्त्र से छान ले। इसके बाद बहुत से सुन्दर पूगपट्ट नेत्रों को लेकर अनेक पात्रों के मध्य में रखे। पुनः अँगुली से उठने योग्य लेह्य उन नेत्रों ( नलिकाओं ) में अलग-अलग रखे। इसके बाद कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों को उनमें मिला दे। पुनः अनेक प्रकार के सुगन्धित पुष्पों से अवलेह को अच्छी तरह सुगन्धित करे और पुष्पों को फेंक कर पोटली बनाये। तदनन्तर पूर्ववत् शीतल अट्टालिका के



अन्दर रखकर ताल आदि के पंखों से हवा कर शीतल बना ले। इस तरह अनेक प्रकार के बहुत से लेह्य द्रव्यों का निर्माण करे। इसके सेवन करने से जिह्वा अपने अन्दर की जड़ता एवं रसास्वादन की असमर्थता को दूर कर देती है। यह पित्त को दूर करने वाला, पथ्य तथा अच्छी तरह कफ एवं वात को नष्ट करने वाला है ॥ १-८ ॥

### लेह्यप्रशस्त्युपसंहारः

लेह्यजालमिदमुत्तमं पुमान् सेवयेत् प्रतिदिनं प्रयत्नतः ।
स्वान्तदोषमपनीय निर्मलो भाति निष्कृतिकदर्पणो यथा ॥ ९ ॥

**इति नलकृतपाकदर्पणे लेह्यप्रकरणं नाम अष्टमप्रकरणं समाप्तम् ॥ ८ ॥**

**लेह्य प्रकरण की प्रशस्ति एवं उपसंहार**—जो व्यक्ति इस उत्तम अवलेह-समूह को प्रति दिन प्रयत्नपूर्वक सेवन करता है वह अपने अन्दर के दोषों को दूर कर स्वच्छ दर्पण की तरह निर्मल ( निर्दोष ) हो जाता है।

इति नलकृत पाकदर्पण का डा० इन्द्रदेव त्रिपाठीकृत माधुरी हिन्दी व्याख्या सहित अवलेहनिरूपण नामक अष्टम प्रकरण समाप्त ॥ ८ ॥

## अथ शैत्यजलनिर्माणप्रकरणम्

### शैत्यजलनिर्माणप्रकारो गुणाश्च

नुदलाबुफले सूक्ष्मं यत्नेन च जलं शुभम् ।
आनीय गाङ्गमुषसि शुभ्रवस्त्रेण शोधयेत् ॥ १ ॥
पूरयेच्च शुभे कुम्भे तप्तस्वर्णविनिर्मिते ।
कल्कमालोडयेत्तत्र कर्पूरादि प्रमाणवित् ॥ २ ॥
विस्तृते पूगपट्टे च तज्जलं वेष्टयेत्ततः ।
कारयेत्प्रांशुतरुभिः दोलां सम्यक्प्रमाणवित् ॥ ३ ॥
सिक्थं च स्थापयेत्तत्र शुभद्रव्यविनिर्मितम् ।
सूदस्तु निःक्षिपेत्तत्र पोटलीं जलपूरिते ॥ ४ ॥
एकं सूत्रं ततः कुर्यात् एकनिष्कप्रमाणकम् ।
रुचकस्य मुखं तस्य वेष्टयदेग्रभागतः ॥ ५ ॥
मूलदेशे पुनस्तस्य शकलान् सन्निवेष्टयेत् ।
स्रजश्च तत्र बध्नीयाज्जातीचम्पकनिर्मिता ॥ ६ ॥
सूक्ष्मरन्ध्रं ततः कुर्यादधस्तस्याः प्रमाणवित् ।
सूत्रस्थितशलाकायाः कुर्यात्सद्रन्ध्रशृङ्खलम् ॥ ७ ॥
शनैः शनैर्जलं तत्र यथा स्रवति विन्यसेत् ।
विना वस्त्रेण तस्याधो हेमभाण्डं विनिक्षिपेत् ॥ ८ ॥
तस्मिन् पाटलिजात्यादि प्रसूनानि न्यसेद्बुधः ।
हिमाम्बुनार्द्रवस्त्रेण तन्मुखं वेष्टयेद्बुधः ॥ ९ ॥
जलं स्रवति निःश्शेषमुदरस्थे व्यवस्थिते ।

**शीतल जल बनाने का प्रकार तथा गुण**—नवीन कद्दू के फल में प्रयत्नपूर्वक सूक्ष्म, स्वच्छ गंगा जल को लेकर स्वच्छ वस्त्र से छान ले और चमकीले स्वर्णनिर्मित घड़े में भर दे। पुनः प्रमाण को जानने वाला पाचक उसमें कर्पूर आदि सुगन्धित द्रव्यों का कल्क छोड़ दे। उसके बाद उस जल को विस्तृत पूगपट्ट में आवेष्टित कर दे और प्रांशुवृक्षों के साथ प्रमाण को जानने वाला पाचक अच्छी तरह दोला (झूला) बनाये। वहाँ पर अच्छे द्रव्यों से निर्मित सिक्थ (मोतियों का गुच्छा) रखखे। पुनः पाचक उस जलपूरित घड़े में पोटली छोड़ दे। इसके बाद एक निष्क प्रमाण का एक सूत्र बनाये और उससे



घड़े के आगे के चारों तरफ के भाग को आवेष्टित कर दे। पुनः उसके नीचे टुकड़ों को रख दे तथा उसमें चमेली आदि सुगन्धित पुष्पों की माला बाँध दे। प्रमाण को जानने वाला उसके नीचे छोटा-छोटा छिद्र बना दे। सूत्र में स्थित शलाका से अच्छे छिद्रों की शृङ्खला बना दे। उसमें जैसे धीरे-धीरे जल गिरे वैसे रखखे और उसके नीचे बिना वस्त्र का सोने का पात्र रख ले और उस में पाटलि, चमेली आदि का फूल रख दे। पुनः ठण्ढा जल से भीगे हुए वस्त्र से उसके मुख को आवेष्टित कर दे। सुव्यवस्थित उसके अन्दर पूरा जल स्रवित हो जाता है।

घटान्तरं न्यसेत्सूदो बालुकावेदिकां ततः ॥ १० ॥
स्रग्भिः समन्ततो युक्तां दक्षिणानिलसंयुताम् ।
तालवृन्तानिलैः सम्यक् शैत्यं कुर्याच्च तज्जलम् ॥ ११ ॥
अन्यस्मिन् पूगपट्टे च नानापुष्पैश्च वासिते ।
पूरयित्वा तु तत्तोयं प्रसूनानि च संत्यजेत् ॥ १२ ॥
न्यसेत् पोटलीं कृत्वा पात्रे सुजलपूरिते ।
तालवृन्तानिलैः सम्यक् कुर्याच्छैत्यतमं सुधीः ॥ १३ ॥
पानीयमीदृशं ग्रीष्मे कर्त्तव्यं मनुजेश्वर ! ।
पीपासां शमयेत्सम्यक् पिपासूनां श्रमं हरेत् ॥ १४ ॥
विधूमं जरयत्याशु भक्ष्यादीनां तथैव च ।

पुनः पाचक दूसरा घड़ा लाये और उसको बालू की वेदी पर रखखे। तदनन्तर उसको दक्षिणी हवा के सम्मुख कर चारों तरफ से मालाएँ लगा दे और ताल पंखा की हवा से इस जल को अच्छी तरह शीतल करे। अनेक पुष्पों से सुवासित दूसरे पूगपट्ट में उस जल को भर कर फूलों को फेंक दे। पुष्प की पोटली बनाकर स्वच्छ जल में रखखे और बुद्धिमान् पाचक ताल पंखा की हवा से शीतल बना ले। हे राजन् ! इस प्रकार का शीतल जल ग्रीष्म-ऋतु में बनावे। यह जल प्यासे व्यक्तियों की प्यास तथा थकावट को दूर करता है और भोजन आदि के बिना पचे अन्न को पचाता है ॥ १०-१४ ॥

### राज्ञः ऊषरजलस्वादुकरणविषयकः प्रश्नः

ऊषरक्षेत्रजातानां जलानां स्वादुवर्जितम् ॥ १५ ॥
स्वादुत्वं कथमापन्नमस्माकं वद बाहुक ! ।

**राजा के ऊषर क्षेत्र के जल को स्वादिष्ट बनाने के सम्बन्ध में प्रश्न**—हे बाहुक ! मधुरता से रहित ऊषर स्थान पर उत्पन्न हम लोगों का जल कैसे स्वादिष्ट हो जाता है इस को बतावें ॥ १५ ॥

### बाहुकेनोषरजलस्वादुनिर्माणप्रकारनिरूपणम्

विचित्रं शृणु भूपाल ! प्रयोगं किल साम्प्रतम् ॥ १६ ॥
अष्टद्विगुणितं तोयं कषायेण समन्वितम् ।
एकेन शोणवर्णेन मृद्भाण्डेन विलोडयेत् ॥ १७ ॥
तत्तादृशं पचेत्सम्यक् आकषायविमोचनात् ।
कथं भवति पाकेन कषायगुणमोचनम् ॥ १८ ॥
किन्तु पाकविशेषेण द्रव्ययुक्तेन तद्भवेत् ।
यस्मादुत्पद्यते दोषस्तेनानेन प्रणश्यति ॥ १९ ॥
मृद्योगेन च सम्भूतो मृद्विशेषेण नश्यति ।

**नल के द्वारा ऊशर जल स्वादिष्ट बनाने का प्रकार निरूपण—**नल ने राजा ऋतुपर्ण से कहा कि हे राजन् ! ऊषर जल को स्वादिष्ट बनाने का विचित्र प्रयोग सुनें । कषाय से युक्त अट्ठारह गुना जल को एक शोणवर्ण ( लाल वर्ण ) के मिट्टी के घड़े में मिलाये और उसको इस प्रकार तब तक पकाये जब तक कि उसका कषाय गुण नष्ट न हो जाय । पकाने से कषाय गुण से मुक्ति कैसे सम्भव है ? किन्तु पाक की विशेषता तथा विशिष्ट द्रव्यों के संयोग से यह सम्भव है । जिससे दोष उत्पन्न होता है वह इस विधि से कषाय दोष नष्ट हो जाता है । मिट्टी के संयोग से उत्पन्न दोष विशेष मिट्टी के संयोग से नष्ट हो जाता है ॥१६-१९½ ॥

अतो मृद्रस्य सहजो दोषो नास्ति नराधिप ! ॥ २० ॥
तप्तं पयश्च विशमेत् तत्र कुर्यादनाविलम् ।
अनाविलं जलं भूयः पात्रेऽन्यस्मिन् प्रपूरयेत् ॥ २१ ॥
कल्कं कतकबीजस्य भाण्डेऽम्भसि समाविशेत् ।
तत्तादृशं सटीसान्द्रे तथा मण्डं विशोधयेत् ॥ २२ ॥
निःक्षिपेत्तत्र रम्याणि जात्यादिकुसुमानि च ।

हे राजन् ! इस प्रकार मिट्टी का कोई स्वाभाविक दोष नहीं है । गरम जल जब शीतल हो जाय तब मिट्टी निकाल दे और उस अनाविल जल को दूसरे पात्र में भर दे । इसके बाद निर्मली ( रीठा ) के बीज का कल्क उस जलपूर्ण पात्र में छोड़ दे । वह घनी पोटली में बांधकर घुमाने से मण्ड ( पंक ) का शोधन हो जाता है । इसके बाद उसमें सुगन्धित एवं रमणीय चमेली आदि के पुष्प को छोड़ दे ॥ २०-२२ ॥

यस्मिन् देशे प्रसूनानि नास्ति तत्र कथं भवेत् ॥ २३ ॥



राजा ऋतुपर्ण ने नल से पूछा कि जिस देश में पुष्प न मिले वहाँ पर कैसे जल को सुगन्धित किया जाय ॥ २३ ॥

उपायस्तन्त्ररूपोऽत्र सूक्ष्मोऽस्ति सुदुर्लभम् ।
यस्मिन् सन्ति प्रसूनानि देशे काले च बुद्धिमान् ॥ २४ ॥
तस्मिस्तदा हि संगृह्य संग्रही नावसीदति ।
तं प्रकाशमहं वच्मि शृणु भूपालसत्तम ! ॥ २५ ॥

हे राजन् ! जहाँ जिस देश में पुष्प नहीं हैं वहाँ के लिये देवताओं को भी दुर्लभ, सूक्ष्म एवं तन्त्र रूप में उपाय है ।[1] बुद्धिमान् व्यक्ति जिस देश एवं काल में पुष्प नहीं होते हैं उस समय पहले से ही पुष्पों का संग्रह कर ले । संग्रह करने वाला व्यक्ति दुःखी नहीं होता । हे राजन् ! उसको हम अच्छी तरह समझा कर कह रहे हैं ॥ २४-२५ ॥

### प्रसूनाभावे देशे काले च तन्त्ररूपेण सुवासनाविधिः

अपक्वभाण्डमानीय कुम्भकारगृहान्नवम् ।
कल्केन घनसारादिसम्भवेन सुगन्धिना ॥ २६ ॥
अन्तर्बहिश्च तस्यापि लेपयेच्च समन्ततः ।
आतपेन विना कुर्यात् च्छायाशुष्कं पुनः पुनः ॥ २७ ॥
दिनेष्वेवं बहुषु कुर्यात्तत्र प्रयत्नतः ।
तथाविधं च तं भाण्डं छिन्द्यान्निष्पावमानतः ॥ २८ ॥
फलेन निर्मितं पात्रं नारिकेलस्य मानवित् ।
भावयेद्बहुभिः पुष्पैः घनसारादिना बहु ॥ २९ ॥
पुराणानि च पुष्पाणि प्रसूनानि नवानि च ।
पक्त्वा च पूरयित्वा च मासमेकं पुनः पुनः ॥ ३० ॥
पूरयेत्तादृशान् तस्मिन् वटकान् घटसम्भवान् ।
तस्मिश्च घटखण्डानि पूरयेत्तानि गोपयेत् ॥ ३१ ॥
प्रसूनाभावदेशे च खण्डानेतान् घटोद्भवान् ।
पाने तक्रे च मूषादिवस्तुष्वेतान् प्रतिक्षिपेत् ॥ ३२ ॥
भवेयुस्तानि तान्येव तत्तद्गुणयुतानि च ।
नीरेषु घटखण्डानि तादृशानि विनिक्षिपेत् ॥ ३३ ॥

---

१. तन्त्र रूप से आज कल पुष्पों का सेन्ट एवं एसेन्स आदि का प्रयोग होता है । प्राचीन काल में सुगन्धित बनाने की तन्त्ररूप प्रकिया का आगे निरूपण है ।

प्रसूनाभावे देशे च कर्त्तव्योऽयं मनीषिभिः ।

**पुष्परहित देश तथा काल में जल सुवासित करने की विधि**—कुम्भकार (कोहार) के घर से नवीन कच्चा घड़ा लाकर कर्पूर-कस्तूरी आदि सुगन्धित द्रव्यों के कल्क से बाहर-भीतर बराबर-बराबर लेप करे और इसके बाद छाया में सुखा ले। इस प्रकार बार-बार प्रयत्नपूर्वक कई दिन तक करे। इस प्रकार सुगन्धित उस पात्र के निष्पाव (मटर) के बराबर टुकड़े बनाकर नारियल के फल से निर्मित पात्र में प्रमाण को जाननेवाला पाचक बहुत से पुष्प एवं कर्पूर आदि द्रव्यों से अनेक बार भावित कर ले। पुराने पुष्प तथा नवीन पुष्पों को पकाकर तथा भर कर एक माह तक बार-बार घड़े के बनाये उन वटकों को उस भाण्ड में भर दे। उन घड़े के टुकड़ों को भर कर गुप्त स्थान में रख दे। जहाँ पर पुष्प नहीं होते हैं उन देशों में इन घड़े के टुकड़ों को पीने के पानी में तथा तक्र (मट्ठा) में प्रयोग करे और घड़ा आदि में मिला दे। वे जिन-जिन पुष्पों से भावित घड़े के टुकड़े होंगे उन-उन पुष्पों के गुण के अनुसार गुण होंगे। इस प्रकार के घड़े के टुकड़ों को जल में छोड़े। विद्वान् लोग पुष्परहित देश में जल को सुगन्धित बनाने के लिये इस विधि का प्रयोग करें ॥ २६-३३ ॥

एवं प्रसाद्य पानीयं पिपासूंश्च प्रदापयेत् ॥ ३४ ॥
इदं पित्तहरं पथ्यं श्रमजिद् बलवर्द्धनम् ।

पूर्वोक्त प्रकार से जल को शुद्ध कर प्यासे व्यक्ति को दे। यह जल पित्त को दूर करता है, पथ्य है, थकावट को दूर करता है तथा बल को बढ़ाता है ॥ ३४ ॥

### जलशैत्यीकरणे वादिप्रतिवादिनोरुक्तिः

एवमादि विचित्राणि सन्ति मध्येऽत्र भूमिषु ॥ ३५ ॥
पानीयविषये वादो वादिना प्रस्तुते सति ।
तयोरन्यं वदत्येकः श्रुणु मे वचनं परम् ॥
स्वभावशीतलं वारि कुरुते शीतलाधिकम् ॥ ३६ ॥
सिकता वेदिकायां च तालवृन्तसमीरणैः ।
पाटल्यादिप्रसूनैश्च वासनां कुरुते जले ॥ ३७ ॥
एवं तु घनसारेण विना बालुकवेदिकाम् ।
विना पुष्पैर्विना शैत्यैस्तालवृन्तानिलान् विना ॥ ३८ ॥
उष्मवारिक्षयेनैव कुरु शैत्ये च वासितम् ।
इति पानीयविषये वादिन्यतिवदत्यपि ॥ ३९ ॥



क उपायो महानास्ते लघुर्बाहुक मे वद ।

**जल के शीतल करने के सम्बन्ध में वादी तथा प्रतिवादी का कथन**—इस प्रकार पृथ्वी के ऊपर बीच-बीच में जल को शीतल करने के लिए विचित्र-विचित्र साधन हैं। पानी के विषय में वादी के द्वारा वाद प्रस्तुत करने पर दोनों में से एक ने जो कहा उसको सुनें। हे बाहुक! स्वभाव से ही शीतल जल को अधिक शीतल क्यों बनाते हैं। बालू की वेदी पर ताड़ के पंखा के हवा मे तथा पाटल आदि के पुष्प से जल को सुगन्धित करते हैं। इस प्रकार बिना कपूंर की वासना बालुका वेदी के बिना, पुष्पों के बिना तथा ताड़ के पंखा के बिना उष्ण जल के क्षय से ही शीतल तथा सुवासित करे। इस प्रकार यदि वादी कहे तो कौन सा उत्तम उपाय है जो हल्का हो उसे मुझसे कहो ॥ ३२-३८ ॥

राज्ञश्च वचनं श्रुत्वा तथेत्युत्तरमब्रवीत् ॥ ४० ॥
लघूपायं महद्वच्मि श्रूयतामत्र भूमिप ।
यदातपे हि तद्वस्त्रं शान्तं कुर्यात्प्रयत्नतः ॥ ४१ ॥
सुगन्धगुणसंयुक्ते बहुपुष्पैश्च वासिते ।
नव कुम्भे च तद्वस्त्रं सम्यङ्निक्षिप्य गोपयेत् ॥ ४२ ॥

राजा के वचन को सुनकर वैसा ही कहूँगा यह कहकर बोले कि हे राजन्! सरल तथा उत्तम उपाय को कहता हूँ, सुनें। जो वस्त्र धूप में सुवासित कर सुखाया गया है उसको प्रयत्न पूर्वक शीतल करे और सुगन्धित द्रव्यों से सुगन्धित तथा अनेक पुष्पों से सुवासित नवीन घडे में अच्छी तरह रखकर बन्द कर रख दे ॥ ३७-४२ ॥

ईदृशस्तु यदा वादः सम्प्राप्तः सूदराट् तदा ।
शैत्योदकं तदा वादो दत्वा तु प्रतिवादितः ॥ ४३ ॥
वादं कुरु बलस्याय यावच्छैत्यादिमेलनम् ।
तावत्करोम्यहं सम्यक् पथ्यं वैचित्र्यमुत्तमम् ॥ ४४ ॥

इस प्रकार का जब वाद-विवाद उपस्थित हुआ तब पाचक वादी प्रतिवादी को शीतल जल देकर बोला कि जब तक शीतलता आदि का मिलान विषय का वाद-विवाद करे तब तक मैं जलशीतल विषयक उत्तम विचित्र प्रकार को करता हूँ, आप देखें ॥ ४३-४४ ॥

इत्युक्त्वा सूदराडाशु सुतप्तं जलमग्रहीत् ।
तस्मिन्नम्भसि तद्वस्त्रं प्रयत्नेन निमज्जयेत् ॥ ४५ ॥

यस्याञ्चलानि चत्वारि वादिवारणकेशरी ।
चतुर्भिः पुरुषैराशु ग्राहयेद्वारिमण्डपे । ६४ ॥
पीडयित्वा तु तद्वस्त्रं जलमादाय सूदराट् ।
इदमेतावता चोष्णं मज्जयेत्तज्जलं गुणैः ॥ ४७ ॥
अतस्तु वादी जयति प्रतिवादी गजांकुशः ।
इदं स्वादुतरं पथ्यं वातश्लेष्महरं भवेत् ॥ ४८ ॥

पाचक जल को ठण्ढा करने के लिए सरल उपाय को बताते हुए उपरोक्त बातों को कह कर शीघ्र ही संतप्त जल को ग्रहण कर उस जल में पूर्वोक्त सुवासित वस्त्र को भिगो दे। इसके बाद प्रतिवादी चार पुरुषों के द्वारा चारों अञ्चलों को जलमण्डप में ग्रहण कराये। पुनः उस वस्त्र को निचोड़ कर उस उष्ण जल को उसके गुणों के साथ डुबा दे। अतः वादी तथा प्रतिवादी गजांकुश की जीत है। यह जल स्वादिष्ट पथ्य तथा वात एवं कफ-नाशक होता है ॥ ४५-४८ ॥

### जलशैत्यकरणप्रकरणस्योपसंहारः

पानीयमेतादृशमन्यपूर्णमनेकजन्मान्तरितं हिताय ।
सम्पाद्य यत्नेन पिबेच्च यो वा स चोत्तमः पुण्यजनेषु मध्ये ॥४९॥

**इति नलकृतपाकदर्पणे शैत्यजलनिरूपणं नाम नवमप्रकरणं समाप्तम् ॥ ९ ॥**

**जल शीतल करनेवाले प्रकरण का उपसंहार**—दूसरों से न पूर्ण होनेवाले अनेक जन्मों के बीच का ऐसा जल हित के लिये प्रयत्न पूर्वक बनाकर जो पीता है वह पुण्यजनों के मध्य में उत्तम है ॥ ४९ ॥

इति नलकृत पाकदर्पण का डा० इन्द्रदेव त्रिपाठीकृत माधुरी हिन्दी व्याख्या सहित स्वच्छशैत्यजलनिरूपण नामक नवम प्रकरण समाप्त ॥ ९ ॥

## अथ क्षीरादिपाकनिरूपणप्रकरणम्

### क्षीरपाकनिर्माणप्रकारः

सर्वपायसभेदानां कथितानां निदानके ।
करिष्यमाण दध्यादि कार्याणां मूलकारणम् ॥ १ ॥
अतोऽत्र कथ्यते सम्यक् क्षीरपाकमनुत्तमम् ।

**क्षीरपाक बनाने का प्रकार**—पहले सभी प्रकार के पायस आदि के भेदों को कहा गया। अतः अब यहाँ किये जानेवाले दही आदि पदार्थों के आदि कारण उत्तम क्षीरपाक को कहते हैं ॥ १ ॥

### क्षीरपाकनिर्माणविधिः

महिष्याः सम्भवं क्षीरं सावधानः समाहरेत् ॥ २ ॥
तदादाय शुभे भाण्डे निदध्यात् सूदकोविदः ।
गाङ्गं जलं च ललितं पूरयेदपरे घटे ॥ ३ ॥
वासयेत्तज्जलं पुष्पैर्नाना परिमलान्वितैः ।
मुहूर्तमेकमालोक्य तानि पुष्पाणि संत्यजेत् ॥ ४ ॥
क्षीरं जलं समं कृत्वा क्षीरभाण्डे पचेद्बुधः ।
त्रिनिष्कमानमुक्तानि प्रत्येकं तत्र मानवित् ॥ ५ ॥
घटानि त्रीणि निक्षिप्य कार्तस्वरकृतानि च ।
दर्व्या मुहुर्मुहुः क्षीरं सम्यगालोड्य तत्पचेत् ॥ ६ ॥
एवं द्वित्रि शुभे पात्रे पचेदनिलसंक्षयात् ।
दर्वी यथातथा संज्ञादवतार्य तदासुधा ॥ ७ ॥
पिधाय रन्ध्रं भाण्डानामङ्गारेषु न्यसेच्च तत् ।
तस्मिन्मन्दे तु संजाते यथार्हां शर्करां क्षिपेत् ॥ ८ ॥
ईषदुष्णेन संयुक्तं दापयेत् क्षीरमुत्तमम् ।
वृष्यं पित्तादिदोषघ्नं शरीरबलवर्धनम् ॥ ९ ॥
श्रमजित् स्वादुसंयुक्तं बुद्धीन्द्रियबलप्रदम् ।

**क्षीर पाक बनाने की विधि तथा गुण**—पाचक सावधानी पूर्वक भैंस का दूध लेकर उत्तम पात्र में रक्खे। स्वच्छ गंगा का जल दूसरे पात्र में भर दे और अनेक प्रकार के सुगन्धों से युक्त पुष्पों से उस जल को सुवासित करे।

जल में थोड़ी देर रखने के बाद चलाकर पुष्पों को फेक दें। इसके बाद दूध तथा जलको बराबर मिलाकर दूध के पात्र में बुद्धिमान् पाचक पकावे। प्रमाण को जानने वाला पाचक त्रिनिष्क (तीन ग्राम) प्रमाण के तीन पात्र लेकर उनमें छोड़ दे और धीरे-धीरे शब्द होने तक पकावे। कलछुल से बारबार अच्छी तरह चलाकर उसको पकावें। इस प्रकार दो-तीन उत्तम पात्र में जल के जलजाने तक पकावे। जब कलछुल में लगने लगे तब बुद्धिमान् पाचक उनको उतार कर तथा उनका मुख बन्द कर मन्दाग्नि पर रख दे। उसके थोड़ा ठण्ढा हो जाने पर उचित मात्रा में शक्कर छोड़ दे। इस उत्तम दूधपाक को थोड़ा गरम-गरम खाने के लिये दे। यह क्षीर पाक वीर्यवर्द्धक, पित्त-कफ-वात आदि दोष-नाशक, शरीर एवं बलवर्द्धक, थकावट को दूर करने वाला, स्वादिष्ट एवं बुद्धि तथा इन्द्रियों के बल को बढ़ानेवाला है ॥ १-८ ॥

## प्रकारान्तरेण क्षीरपाकनिर्माणविधिर्गुणाश्च

विना जलेन तत् क्षीरं क्षीरभाण्डे नियोजयेत् ॥ १० ॥
स्थाल्यां पचेन्मृदावग्नौ दर्वीघट्टनपूर्वकम् ।
अर्धावशिष्टमिति तत् लेह्यमाहुश्च कोविदाः ॥ ११ ॥
षड्भागशेषमिति तत् घटिकां प्रवदन्ति हि ।
ब्रुवन्त्यष्टावशिष्टं तत् शर्करामिति साधकाः ॥ १२ ॥
चतुर्थंजमिदं क्षीरं न्यसेद्भाण्डचतुष्टये ।
सम्यग्विश्राम्य तत्क्षीरं मानविद्भ्राण्डसंस्थितम् ॥ १३ ॥
तेषु क्षीरेषु मानज्ञाः फलपुष्पाणि निक्षिपेत् ।
पानरूपे पुनः क्षीरे पनसस्य फलं क्षिपेत् ॥ १४ ॥
सारामृतं पुनस्तत्र आर्द्रकस्य क्षिपेत्कणान् ।
जात्यादिकुसुमं तत्र पुनः सूदः प्रवेशयेत् ॥ १५ ॥
भूयो लेह्याह्वये दुग्धे खर्जूरोफलमाहरेत् ।
फलस्वेदं पुनस्तत्र निक्षिपेदमृतोपमम् ॥ १६ ॥
न्यसेच्च पक्वं पुन्नागकुसुमं तत्र मानवित् ।
भूयश्च घटिकारूपे क्षीरे चूतफलं क्षिपेत् ॥ १७ ॥
सर्पिश्च माक्षिकं तत्र निक्षिपेत्सर्वरोगजित् ।
कुसमं सत्फलादीनां न्यसेत्तत्र नवौदनम् ॥ १८ ॥
क्षीरे तु शर्कराकारे कृष्णरम्भाफलं न्यसेत् ।
पुनश्च शर्कराखण्डं जिह्वाजाड्यहरं शुभम् ॥ १९ ॥



कुसुमं विन्यसेत्तत्र पुन्नागे च समुद्भवम् ।
तेषु क्षीरेषु सर्वेषु निक्षिपेत्केतकीफलम् ॥ २० ॥
कर्पूरमृगनाभ्योश्च कल्कं कुंकुमवर्जितम् ।
सूदस्तं पानरूपेषु क्षीरेषु प्रसवं न्यसेत् ॥ २१ ॥
संत्यज्य तानि पुष्पाणि वेष्टयित्वा प्रदापयेत् ।

**अन्य प्रकार के क्षीर पाक बनाने की विधि तथा गुण**—बिना जल मिला भैंस का दूध दूध के पात्र में रक्खे और मन्द आँच से दुग्धपात्र में कलछुल से चलाते हुए पकावे। यह क्षीर पाक का पहला प्रकार है। जब पकाते-पकाते आधा रह जाय तब वह विद्वानों के पीने योग्य होता है। आधा भाग अवशेष दूध को विद्वान् लोग "लेह्य" कहते हैं। षष्ठांश अवशिष्ट दूध को घटिका कहते हैं। इन चारों प्रकार के दूध को चार पात्र में रख कर मात्रा को जाननेवाला पाचक पात्र में स्थित दूध को थोड़ी देर तक स्थिर होने दे। पुनः उन चार पात्रों में स्थित दूध में फल एवं पुष्पादि छोड़े। पुनः सारामृत में अदरक के टुकड़ों को छोड़े। पुनः उसमें पाचक चमेली आदि का फूल रक्खे। पुनः लेह्य संज्ञक दूध में खजूर का फल छोड़े दे। पुनः उसमें अमृत स्वरूप फलस्वेद (फल का रस) को छोड़ दे और पके पुन्नाग (श्वेत कमल) का पुष्प छोड़ दे। पुनः घटिका रूप दूध में आम का फल छोड़ दे। पुन. उसमें घी तथा सभी रोगों को जीतने वाला मधु छोड़ दे। पुनः सत्फला (अनार) आदि का पुष्प तथा नवीन चावल का भात छोड़ दे। शर्करा रूप दूध में पूरे केले फल छोड़ दे। पुनः उसमें खाँड छोड़ दे। यह अच्छी तरह जिह्वा की जड़ता को दूर करता है। पुनः उसमें पुन्नाग का पुष्प छोड़ दे और कर्पूर तथा कस्तूरी को भी छोड़ दे किन्तु केशर को न छोड़े। पाचक पानरूप दूध में प्रसव (फूल-फल) छोड़ दे। सभी प्रकार के दूधों से पुष्पों को निकाल कर और पूगपट्ट में बाँध कर खाने के लिये दे।

## क्षीरपाकस्य गुणाः

वातपित्तकफजानिदं पयो यस्य कुक्षिगतमात्रमामयान् ॥ २२ ॥
हन्ति सर्वसुरलोकदुर्लभं प्रार्थितं सुरगणैर्वृषमुख्यः ।

**इति नलकृतपाकदर्पणे क्षीरपाकनिर्माणनिरूपणं नाम दशमं प्रकरणं समाप्तम् ॥**

**क्षीरपाक के गुण**—यह क्षीरपाक इन्द्रप्रमुख देवगणों के द्वारा प्रार्थित सभी देवलोक में दुर्लभ जो पेट में जाने मात्र से वातज, पितज तथा

कफज रोगों को नाश करता है। अर्थात् यह क्षीरपाक सभी प्रकार के रोगों को नष्ट करता है ॥ २२३ ॥

इति नलकृत पाकदर्पण का डा० इन्द्रदेव त्रिपाठीकृत माधुरी हिन्दी व्याख्या सहित क्षीरादिपाकनिरूपण नामक दसवाँ प्रकरण समाप्त ॥ १० ॥

# अथ दधिभेदप्रकरणम्

## दधिनिर्माणविधिर्गुणाश्च

अनेकचित्रसंयुक्तः क्षीरभेदश्च दर्शितः।
दर्श्यंते दधिभेदस्तु सुचित्रं विविधं यथा ॥ १ ॥
अर्धावशिष्टधवलं सुपक्वं क्षीरमुत्तमम्।
सक्षीरखण्डमृद्भाण्डे समादाय शुभे न्यसेत् ॥ २ ॥
सुजातं मातुलुंगस्य फलं स्थूलं समाहरेत्।
गणाकारसमायुक्तशलाकातीव्रधारया ॥ ३ ॥
वृन्तं मूलं ततस्तस्य किञ्चिच्छिन्द्यात्प्रमाणवित्।
उद्धरेत्तद्गतान् सर्वान् बीजत्वक्केसरान् बुधः ॥ ४ ॥
एकवारं द्विवारं वा क्षालयेद्वारिणा च तत्।
कल्केन घनसारादीन् तदन्तं लेपयेद् बुधः ॥ ५ ॥
वासयेद्बहुभिस्नच्च जात्यादिकुसुमैः पुनः।
तत्रत्यानि प्रसूनानि दधिपक्षे समुत्सृजेत् ॥ ६ ॥
ईषदुष्णेन संयुक्तं क्षीरं तत्र समण्डकम्।
पूरयेन्नवनीतं च किञ्चित्तत्र विनिक्षिपेत् ॥ ७ ॥
छेदेनापूर्य छिन्नेन तन्मुखं छादयेत्सुधीः।
अनेनैव प्रकारेण दधि कृत्वा प्रदापयेत् ॥ ८ ॥
इदं रुचिकरं पथ्यं सर्वारुचिनिवारणम्।
बलपुष्टिकरं रम्यं भवेत्कायाग्निदीपनम् ॥ ९ ॥

**इति नलकृतपाकदर्पणे दधिभेदनिरूपणं नाम एकादशप्रकरणं समाप्तम् ॥ ११ ॥**

**दही बनाने की विधि तथा गुण** इसके पूर्व क्षीरप्रकरण में दूध के भेद दर्शाये गये। अब अनेक प्रकार के विचित्र दही के भेद बताये जा रहे हैं। अच्छी तरह पकाया हुआ अर्धावशिष्ट दूध लेकर उत्तम शक्करयुक्त दूध के पात्र में रखखे। इसके बाद बड़ा विजौरा नींबू का फल ले आये और उसको फणाकार तेज धार वाली शलाका से साफ कर ले। उसकी भेटी तथा मूल भाग का प्रमाण को जानने वाला थोड़ा काट दे। पुनः उसके अन्दर के सभी पदार्थों ( बीज केशर आदि) को निकाल दे और उसको एक बार या दो बार जल से प्रक्षालन कर ले। इसके बाद कर्पूर आदि के कल्क से उसके अन्दर लेप लगा दे। पुनः चमेली

आदि अनेक सुगन्धित पुष्पों से सुगन्धित कर ले। उसमें के सभी पुष्पों को दही में छोड़ दे। तदनन्तर उसमें माण्ड सहित थोड़ा गरम दूध[1] भर दे और थोड़ा मक्खन छोड़ दे इस के बाद कटे नींबू के टुकडे से उसका मुख ढक दे। इस प्रकार दही बना कर खाने के लिये दे। यह दही रुचिकारक, पथ्य, सभी प्रकार के अरुचियों को दूर करने वाला बल एवं पुष्टिकारक, मनोहर तथा जाठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला है ॥ १-९ ॥

इति नलकृत पाकदर्पण का डा० इन्द्रदेव त्रिपाठीकृत माधुरी हिन्दी व्याख्या सहित दधिभेदनिरूपण नामक एकादश प्रकरण समाप्त ॥ ११ ॥

---

( १ ) आजकल भी यह परम्परा देखी जाती है कि दूकानदार मिट्टी के पुरवे में अलग-अलग दही जमाकर बेचते हैं। सम्भवतः वही परम्परा आज भी प्रचलित है। मद्रास में बहुधा अलग-अलग बर्तनों में दही इस प्रकार बेचा जाता है।